ग्रामीण विकास
को समर्पित

# कुरुक्षेत्र

वर्ष 51 अंक : 8 जून 2005 मूल्य : सात रुपये

## जैव खेती : खाद्यान्न की विषाक्तता और आपूर्ति समस्या

## जैव उर्वरक एवं जैव नियंत्रक

## पेयजल आपूर्ति की समस्या और समाधान

## उपेक्षित जल-स्रोतों को बचाने की महत्वपूर्ण पहल

## ग्लोबल वार्मिंग: खतरे की घंटी

## पर्यावरण, पारिस्थितिकी और पर्यटन

# प्रमुख फैसले और पहलें

किसानों के कल्याण तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगो के लिए "ग्रामीण भारत के लिए पहल" की अपनी वचनबद्धता पूरा करने के लिए संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार ने कई पहलें की हैं।

**संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एसजीआरवाई)**

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एसजीआरवाई) के लिए 2003–04 में 4125 करोड़ रुपए की राशि को बढ़ाकर 2004–05 में 4500 करोड़ रुपए कर दिया गया है। 2005–06 में राशि बढ़ाकर 5500 करोड़ रुपए कर दी गई। इस योजना के दिशा–निर्देशों को व्यवस्थित कर दिया गया है। बड़े आकार के ग्राम पंचायत वाले राज्यों में आबंटन का 22.5 प्रतिशत, खासकर अनुसूचित जाति तथा जनजाति वर्ग के हित के लिए रखा गया है और यह सीधे ग्राम पंचायतों को दी गई है।

**एसजीआरवाई** के तहत सामाजिक लेखा परीक्षा तथा सतर्कता प्रक्रिया का काम ग्राम–स्तर पर निगरानी समितियां बनाएं जाने से और मजबूत हुई है। अप्रैल 2004 से जनवरी, 2005 के बीच **एसजीआरवाई** के तहत लगभग 63 करोड़ श्रम दिवसों का 25.92 लाख मीट्रिक टन राज्य उपलब्ध कराया गया।

**राष्ट्रीय काम के बदले योजना (एनएफएफडब्ल्यूपी)**

काम के बदले अनाज योजना 14 नवंबर 2004 से देश के सबसे पिछड़े 150 जिलों में लागू की गई। 2004–05 के दौरान लगभग 20 लाख मी. टन अनाज तथा 2020 करोड़ रुपए का खर्च बढ़ाकर 50 लाख मी. टन अनाज तथा 4500 करोड़ रुपए नकद कर दिया गया है।

राष्ट्रीय रोजगार गारंटी विधेयक 21 दिसम्बर, 2004 को लोकसभा में पेश किया गया तथा ग्रामीण विकास के मामले पर यह स्थायी समिति के समक्ष विचाराधीन है।

**राज्यों के ग्रामीण विकास संस्थानों को मजबूत बनाना**

मंत्रालय के प्रशिक्षण प्रभाग ने मई 2004 से मई 2005 के दौरान राज्यों के ग्रामीण विकास संस्थानों की स्थापना और इन्हें मजबूत बनाने तथा प्रशिक्षण केन्द्रों के विस्तार के लिए एक स्कीम चलाई गई है। एक स्कीम के तहत बिहार में तथा पंजाब के मोहाली में नए राज्य ग्रामीण विकास संस्थापना की गई। मंत्रालय ने जम्मू–कश्मीर के ग्रामीण विकास संस्थान के लिए भवन निर्माण के वास्ते 378 करोड़ रुपए की मंजूरी दी और महाराष्ट्र में ग्रामीण संस्थान के नए भवन के लिए 102 लाख रुपए की पहली किस्त भी जारी की।

**कपार्ट**

दो लाख रुपए तक की ग्रामीण विकास परियोजनाओं को मंजूरी देने के लिए क्षेत्रीय समितियों को सशक्त बनाया गया। गैर सरकारी संस्थानों की क्षमता बढ़ाने के लिए 50 से ज्यादा कार्यशालाओं/प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया जिससे 1500 गैर–सरकारी संगठन लाभान्वित हुए। 546 गैर सरकारी संगठनों को 38 करोड़ रुपए की 577 परियोजनाएं दी गई। विभिन्न राज्यों की राजधानियों में **ग्रामश्री** मेलों का आयोजन किया गया जिससे ग्रामीण कारीगरों के उत्पादों को लोकप्रियता तथा बिक्री केन्द्र मिले। प्रगति मैदान नई दिल्ली में भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेला **सरस–2004** का आयोजन किया गया।

**प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना (पीएमजीएसवाई)**

नवंबर 2004 में खेत को बाजार से जोड़ने तथा उनसे जुड़े "थ्रू रूट के सुदृढ़ीकरण और नए संपर्क रास्ते बनाने के लिए निर्देशों में संशोधन किया गया। ग्रामीण सड़कों के दीर्घकालीन विकास कार्य को देखते हुए 20 वर्ष के अनुभवों के "विजन डक्यूमेंट" को भारतीय सड़क कांग्रेस के सहयोग से अंतिम रूप दिया जा रहा है।

अगस्त 2004 में अतिरिक्त धन जुटाने की दृष्टि से चार राज्यों की ग्रामीण सड़क परियोजनाओं के लिए (झारखंड, राजस्थान, हरियाणा, उत्तर प्रदेश) विश्व बैंक से 2000 करोड़ रुपए की ऋण पर हस्ताक्षर किए गए। नवंबर 2004 में एशियाई विकास बैंक के साथ दो राज्यों में ग्रामीण सड़क परियोजनाओं के लिए (मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़) 2000 करोड़ रुपए के दूसरे ऋण पर हस्ताक्षर किए गए। तीन राज्यों (पश्चिम बंगाल, असम तथा उड़ीसा) के ग्रामीण सड़क परियोजनाओं के लिए एशियाई विकास बैंक से 2000 करोड़ रुपए के दूसरे ऋण हेतु बातचीत शुरू हो गई है। ग्रामीण सड़क परियोजनाओं के लिए विश्व बैंक के लिए विश्व बैंक से दूसरे 2500 करोड़ रुपए के ऋण हेतु आग्रह किया गया है। प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना के अंतर्गत, मार्च 2005 तक 39000 सड़क कार्यों को सरकारी मंजूरी मिल गई है तथा 10795.25 करोड़ रुपए की राशि दे दी गई है। इन परियोजनाओं के पूरा हो जाने पर अनुमान है कि 1.3 लाख किलोमीटर लंबाई की ग्रामीण सड़कों का निर्माण हो जाएगा तथा 38000 बस्तियों को सड़कों से जोड़ा जाएगा।

**भारत निर्माण**

भारत निर्माण के तहत ग्रामीण सड़कों के लिए निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से तथा ग्रामीण सड़कों के लिए एक व्यापक और विस्तृत दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य विकसित करने के उद्देश्य से भारतीय सड़क कांग्रेस (आईआरसी) के माध्यम से "ग्रामीण सड़क विकास–विजन–2005" को अंतिम रूप दिया जा रहा है और आशा है कि इसे जुलाई 2005 तक जारी कर दिया जाएगा।

**पूर्वोतर में प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना**

प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना के लिए अतिरिक्त धन जुटाने हेतु दूसरे चरण के ऋण के लिए विकास बैंक से 2000 करोड़ रुपए के ग्रामीण सड़क परियोजनाओं के लिए बातचीत शुरू हो गई है जिनमें असम को मिलाकर तीन राज्य (पश्चिम बंगाल तथा उड़ीसा) शामिल हैं। त्रिपुरा में राज्य कार्यान्वयन एजेंसियों की कमी को दूर करने के लिए मंत्रालय ने **एनबीसीसी** के साथ तथा त्रिपुरा सरकार के साथ समझौते पर 2004 में हस्ताक्षर किए हैं जिससे प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजनाओं को **एनबीसीसी** के द्वारा पश्चिम त्रिपुरा में प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजनाओं के दिशानिर्देशों के अनुसार लागू किया जाए। दक्षिण त्रिपुरा जिलों के लिए भी **एनबीसीसी** के साथ करार दिया गया है। पूर्वोतर राज्यों को ध्यान में रखते हुए मार्च 2005 तक 300 सड़क कार्य प्रस्तावों के लिए 1130 करोड़ रुपए की राशि दे दी गई है। इन प्रस्तावों के पूरे हो जाने के उपरान्त पूर्वोतर राज्यों में 1000 किलोमीटर लंबाई की ग्रामीण सड़कें बस्तियों को इससे जोड़ेंगी।

**जल संभरण परियोजनाएं**

भू–संसाधन विभाग समन्वित परती भूमि विकास कार्यक्रम (आई डब्ल्यूडीपी), सूखा संभावित क्षेत्र कार्यक्रम (डीडीपी) जैसे तीन प्रमुख कार्यक्रमों को जल संभरण के आधार पर परती भूमि/अवक्रमित भूमि

*(शेष भाग कवर 3 पर)*

# कुरुक्षेत्र

## ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 51 ● अंक : 8 ● पृष्ठ : 48

ज्येष्ठ–आषाढ़ 1926–27

जून 2005


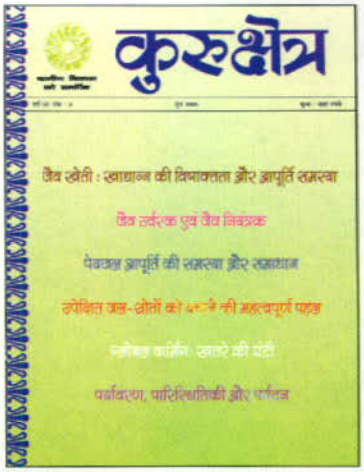



संपादक
**स्नेह राय**

उप संपादक
**जयसिंह**

**संपादकीय पत्र–व्यवहार**
संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014
तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sh.nic.in dpd@pub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
**एन.सी. मजुमदार**

व्यापार प्रबंधक
**जगदीश प्रसाद**
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

आवरण
**राहुल शर्मा**

सज्जा
**संतोष कुमार सिंह**

| | | |
|---|---|---|
| मूल्य एक प्रति | : | सात रुपये |
| वार्षिक शुल्क | : | 70 रुपये |
| द्विवार्षिक | : | 135 रुपये |
| त्रिवार्षिक | : | 190 रुपये |

**विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)**

| | | |
|---|---|---|
| पड़ोसी देशों में | : | 500 रुपये (वार्षिक) |
| अन्य देशों में | : | 700 रुपये (वार्षिक) |


## इस अंक में


| | | |
|---|---|---|
| ● जैव खेती खाद्यान्न की विषाक्तता और आपूर्ति समस्या | डा. शुभंकर बनर्जी | 6 |
| ● जैव उर्वरक एवं जैव नियंत्रक आवश्यक क्यों? | डा. राजीव कुमार सिंह<br>डा. रमेश सिंह | 9 |
| ● रासायनिक खादों का विकल्प जैविक खादें | जगनारायण | 12 |
| ● भोपाल के कोल्हूखेड़ी गांव में जैविक खेती | | 16 |
| ● परंपरागत बीज बचाना जरूरी | | 18 |
| ● ग्रामीण क्षेत्र पेयजल आपूर्ति की समस्या और समाधान | डा. दशमन्त दास पटेल | 19 |
| ● रहिमन पानी राखिए | डा. रवीन्द्र अग्रवाल | 21 |
| ● उपेक्षित जल–स्रोतों को बचाने की महत्वपूर्ण पहल | भारत डोगरा | 23 |
| ● पर्यावरणीय चेतना की आवश्यकता | डा. श्याम मनोहर व्यास | 24 |
| ● ग्लोबल वार्मिंग : खतरे की घंटी | वैभव पाण्डे | 26 |
| ● पृथ्वी के तापमान में वृद्धि घातक | एस.आर. कन्नौजे | 28 |
| ● इलेक्ट्रानिक कचरा पर्यावरण के लिए खतरा | डा. विनोद गुप्ता | 30 |
| ● इस शताब्दी की घातक समस्या – प्रदूषण | कांता | 31 |
| ● भारत का मिनी स्विटजरलैंड – औली | एस.एस. सैनी | 32 |
| ● पर्यटन का एक और स्थान – झारखंड | | 34 |
| ● हिमाचल प्रदेश की पर्यटन नीति | गिरीश चन्द्र पाण्डे | 35 |
| ● पारिस्थितिकी पर्यटन अनमोल विरासत का संरक्षण | डा. राजेश व्यास | 37 |
| ● वैट : पारदर्शी और समरूपी कर सुधार | वेद प्रकाश अरोड़ा | 40 |
| ● वैट : भारतीय अर्थव्यवस्था और विश्व बाज़ार | अरुण कुमार | 43 |
| ● ग्रामीण उद्यमियों की सफलता की गाथा | देवेन्द्र उपाध्याय | 45 |
| ● ग्राम उत्थान समितियां और कोष प्रबंधन | आर.बी. त्रिपाठी | 46 |
| ● रोज़गार का संवैधानिक अधिकार | आशुतोष दीक्षित | 48 |



**कुरुक्षेत्र** की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516



**कुरुक्षेत्र** में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

# मत–सम्मत

कुरुक्षेत्र के मार्च माह का "महिला सशक्तिकरण" विशेषांक पढ़ा। इसमें महिला सशक्तिकरण से संबंधित हर पहलू पर नजर रखी गई। वास्तव में, नारी अबला नहीं सबला है। आज के समय में हमारे समक्ष अनेक उदाहरण प्रस्तुत हैं।

जल की महत्ता समझाने का यह प्रयास प्रशंसनीय है।

**संजीव पटेल**
राजापुल, पटना–01

•••

कुरुक्षेत्र पत्रिका के अनेक अंक पढ़े हैं। हाल ही में मार्च माह 2005 का ग्रामीण विकास को समर्पित अंक पढ़ा। महिलाओं के सर्वक्षेत्रीय–सर्वांगीण सामग्रीयुक्त अंक से मैं बहुत प्रभावित हूं। इस अंक में अनेक विद्वान, पत्रकार एवं लेखकों के सुलझे हुए विचार प्रस्तुत हैं। प्रत्येक आलेख शोधपरक है। लेखकों को विषय के प्रति गहरी जानकारी है जो सामान्य पाठकों के साथ विषय विशेष के शोधकर्ताओं की भी रुचि को परिपूर्ण करती है। इस अंक का महिला विशेष होना और उसमें महिलाओं के हर क्षेत्र को छूना सराहनीय है। सबसे आकर्षक पत्रिका का मुखपृष्ठ है। पत्रिका का मुद्रण भी सराहनीय है। जल संरक्षण संबंधित आलेख भी महत्वपूर्ण हैं। अनीता वर्मा का 'ब्यूटी पार्लर–एक उभरता व्यवसाय' द्वारा भी जानकारी प्राप्त हुई।

**विमा नरगुन्दे**
98, द्वारकापुरी ज्ञान सागर स्कूल, इंदौर, (म. प्र.)

•••

'कुरुक्षेत्र' मार्च माह 2005 महिला सशक्तिकरण का मुखावरण वाकई महिला दिवस, महिला सशक्तिकरण और महिला महिमा से परिपूर्ण भारतीय नारियों की अंतर्राष्ट्रीय राष्ट्रीय बहुआयामी प्रतिभा व उपलब्धियों वाले चेहरों ने हमारे राष्ट्र का गौरव बढ़ाया है, वहीं ये चेहरे सदैव प्रेरणा स्रोत हैं। वंदनीय, नमनीय हैं एवं दर्शनीय प्रशंसनीय संग्रहणीय है। अंतिमावरण पर 'बनीठनी' का चित्र हमारी भारतीय चित्रशैली के अनूठे अंकन को प्रतिभाषित करता है। 'संपादकीय' में प्राचीन काल से अर्वाचीन भारतीय नारी का बड़ा ही बेबाक, सटीक उतार–चढ़ाव व आज नारी के समक्ष समस्या उसका समाधान समुचित है। महिलाओं से संबंधित सारे के सारे आलेख पठनीय व मार्गदर्शक हैं।

**सांवलाराम जामा**
सदर–बाजार रोड, भीनमाल, (राज.)

•••

मैं 'कुरुक्षेत्र' का नया–नया पाठक बना हुं परन्तु इसके पहले ही अंक को पढ़ कर लगा कि सही मायने में कुरुक्षेत्र ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका है।

फरवरी 2005 का अंक के लेख में पेटेंट सम्बंधी महत्वपूर्ण जानकारी ग्रामीण के लिए मील का पत्थर साबित होंगे। ग्रामीण जो कि अपने परम्परागत औधधियों को सदियों से इस्तेमाल कर रहे है उन्हें मालूम नहीं कि कितने विदेशी राष्ट्र उनके औषधियों का पेटेंट कराने में लगे हुए हैं और यह पेटेंट उनके लिए कितना हानिकारक है शायद हमारे ग्रामीण भाइयों को मालूम नहीं। परन्तु यह लेख उन्हें सचेत करने के काफी हद तक मददगार साबित होंगे।

**अमित कुमार पोददार**
नवरतन दाता, पूर्णिमा, (बिहार)

•••

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका कुरुक्षेत्र मार्च 2005 का अंक पढ़ने का स्वर्ण अवसर मिला। 8 मार्च को अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाता है कुरुक्षेत्र मे मुखपृष्ठ महिलाओं के चित्र प्रकाशित किये जिन्होंने अपने–अपने कार्य क्षेत्र मे महत्वपूर्ण योगदान दिया।

**एम. मनोहर एव. थानवी**
भजन चौरी, जोधपुर, 34200 (राज.)

•••

महिला सशक्तिकरण की पृष्ठभूमि में झांकती पत्रिका कुरुक्षेत्र का मार्च अंक अत्यंत ही ज्ञानवर्धक एवं प्रेरणादायक है। प्रस्तुत अंक में महिलाओं की जीवन दशा एवं दिशा के विविध आयामों को रेखांकित किया गया है। जिस घरा–घाम, पर कभी यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमन्ते तत्र देवता का प्रबल शंखनाद होता था आज वहीं अगर नारी अपने आंचल में तिरस्कार एवं दुर्व्यवहार को समेटे फिर रही है तो यह निश्चय ही किसी भी सभ्य समाज के लिए चिंता का विषय माना जाना चाहिए। सिद्धांत रूप में भले ही नारी को पुरुषों की सहगामिनी का दर्जा प्राप्त हो पर व्यवहार रूप में वह अपने उन अधिकारों से कोसों दूर है जिनकी वह वास्तविक हकदार है। महिलाओं के मानवाधिकारों का संरक्षण आलेख में लेखक ने अत्यंत ही सारगर्भित जानकारियों पाठकों तक प्रेषित करने का प्रयास किया है। अलका रस्तोगी के 'महिला सशक्तिकरण प्रयास एवं लक्ष्य में अंतर्गत एक कठोर कृत संकल्पों के साथ प्रयास की आवश्यकता पर बल दिया गया है। प्रकाश नारायण नाटाणी ने 'महिला सशक्तिकरण एवं आरक्षण' में आरक्षण की कठोर परंतु वास्तविक सच्चाइयों से अवगत कराया है। पत्रिका के निरंतर उज्ज्वल भविष्य की कामनाओं के साथ।

**अमरेन्द्र कुमार**
भागलपुर

•••

ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका कुरुक्षेत्र का मार्च अंक जो पूर्णतः महिला सशक्तिकरण को नवधारणा पर आधारित भी काफी रोचक एवं ज्ञानवर्धक प्रतित रही।

प्रतापमल देवपुरा ने अपने आलेख में उन पहलुओं की ओर इशारा किया है जिनके आधारस्तंभों पर महिला सशक्तिकरण की नींव खड़ी की जा सकती है।

संपादकीय की सरल एवं सुग्राह्य भाषा के प्रति हमारी लेखनी आभार व्यक्त करती है। पत्रिका की स्वर्णिम सफलता की कामनाओं के साथ–

**रेणु कुमारी**
ग्राम–भागलपुर, (बिहार)

•••

कुरुक्षेत्र का मार्च 2005 अंक पढ़ा, सराहनीय एवं संग्रहणीय अंक लगा। महिलाओं को केंद्रित कर इतनी सारी सामग्री अपने एक पत्रिका में समाहित कर दिया है। इसके लिए बधाइयां।

सोना दीक्षित और अरुण कु. दीक्षित द्वारा लिखा गया लेख "महिलाओं के मानवाधिकारों का संरक्षण" काफी पसंद आया।

**धनंजय मणि त्रिपाठी**
गोरखपुर, (उत्तर प्रदेश)

•••

मार्च 2005 का अंक महिला सशक्तिकरण विषयों पर बहुत ही हृदय को छू लेने वाली सामग्री थी। सम्पादकीय इस पत्रिका का सार था।

**कृष्ण कुमार जौहर**
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

•••

ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका कुरुक्षेत्र के मार्च अंक में महिला सशक्तिकरण को आधारस्तंभ बनाया गया है। प्रस्तुत अंक में प्रकाशित आलेख महिला सशक्तिकरण एवं आरक्षण कई रोचक एवं उत्कृष्ट जानकारियों से भरपूर हैं। वस्तुतः महिलाओं को आरक्षण दिए जाने के मामले में मेरा मानना है कि सिर्फ 33 प्रतिशत आरक्षण दे दिए जाने मात्र से महिलाओं का उचित एवं सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। इसके लिए यह आवश्यक है कि पुरुष प्रधान यह समाज महिलाओं के प्रति अपनी सोच में एक सकारात्मक परिवर्तन लाए। उनके शिक्षा स्तर को ऊपर लाने की एक ईमानदार कोशिश करे। वरना इसके अभाव में वह सिद्धांत की एक बंद पिटारी मात्र रह जाएगी जो दूर से सुन्दर एवं आकर्षक तो दिखेगी परंतु किसी का कल्याण जिससे संभव न होगा। ग्रामीण परिवेश में मैं एक ऐसी शैक्षणिक संस्था संचालित कर रहा हूं जिसमें अपेक्षाकृत कमजोर एवं विपन्न परिवार के बच्चे शिक्षा अर्जन हेतु मेरे पास आते हैं। उन बच्चों को मैं उन समस्त जानकारियों को उनके अभिभावक तक प्रेषित करने का एक माध्यम बनाता हूं जिससे उनके परिवार दशा एवं दिशा में सुधार ला सकें। और यह सब लोकप्रिय पत्रिका कुरुक्षेत्र की बदौलत। संस्था के बच्चों सहित मेरी हार्दिक शुभकामनाएं स्वीकार करें।

**कृष्णानंद पांडेय**
भागलपुर

•••

आपकी पत्रिका कुरुक्षेत्र अंक मार्च, 2005 (महिला विमर्श) की चर्चा खूब हो रही है। मैं हिन्दी साहित्य की प्रत्येक विद्या में लिखता हूं। आपकी पत्रिका से जुड़ना चाहता हूं।

**डा. सुनील कुमार अग्रवाल**
चंदौसी, मुरादाबाद, (उ.प्र.)

•••

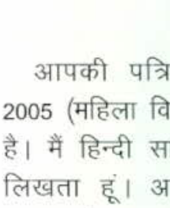


बजट 2005–06 पर केंद्रित कुरुक्षेत्र अप्रैल 2005 का अंक बेहद उपयोगी एवं संग्रहणीय है। बजट के सभी पहलुओं पर लेखकों ने जिस तरह पैनी कलम चलायी है और सहज सुगम भाषा में जनसामान्य को समझने योग्य बनाया है निश्चित ही वह उनके समग्र अध्ययन व योग्यता का परिणाम है, इससे तमाम ऐसी खामियों से परदा हट गया जो बजट के बारे में ज्ञान के अभाव से प्रतीत हो रही थी।

**कृष्ण कुमार उपाध्याय, एडवोकेट**
बस्ती, (उत्तर प्रदेश)

•••

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) के वर्ष 2005 के वित्तीय बजट पर केंद्रित कुरुक्षेत्र का यह अंक भी नवीन जानकारियों और योजनाओं से लबालब रहा। इस बार संपादकीय ने भी ध्यान खींचा। आज मानवजीवन इतनी विसंगतियों से भर गया है कि कही जीने की राह ही नही सूझती परंतु कुछ समस्याओं के पैदा होने के लिए हम ही स्वयं जिम्मेदार हैं कोई और कष्टमय जीवन जीने को विवश करता है। बजाय हम किसी को कोसने के स्वयं अपनी स्थिति का आंकलन करें और जीवन में फिर आये अंधेरे को स्वयं के प्रकाश से ही सुंदर बनाएं।

इस अंक में ग्रामीण युवाओं हेतु घर बैठे रोजगार 'सबके लिए शिक्षा जरूरी' अनिवार्य शिक्षा की ओर बढ़ते कदम और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बैंकों का योगदान जैसे लेख सराहनीय हैं यदि इन पर अमल हो सके तो देश में अंधेरे में भटकती युवा पीढ़ी का कुछ कल्याण जरूर हो सकेगा।

**छैलबिहारी शर्मा शिवसदन**
छाता

•••

अप्रैल 2005 का कुरुक्षेत्र का हिन्दी का अंक पढ़ने का मिला, अंक पढ़ने के बाद अत्यंत खुशी हुई। इसमें "ग्रामीण विकास एवं प्रौढ साक्षरता एक अध्ययन" एवं "ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बैकों का योगदान" समाज को दिशा देने वाले लेख थे। वहीं दूसरी ओर स्वरोजगार हेतु लिखित लेख "ग्रामीण युवाओं हेतु घर बैठे रोजगार" एक सारगर्भित लेख था, जिसमें डा. सुरेन्द्र कपाड़िया ने बड़े सुन्दर ढंग से समाज के निम्न तबके के लोगों को स्वरोजगार के बारे में विस्तृत जानकारी दी। "संपूर्ण स्वच्छता अभियान" और निर्मल ग्राम पुरस्कार" भी जानकारी से भरपूर लेख रहे। "भारत में सामुदायिक रेडियो" लेख भी रोचक एवं अच्छा लगा। अच्छे लेखों के लिए आपको और लेखकों को साधुवाद।

**कुलदीप सिंह**
हिसार, (हरियाणा)

•••

मैं यूपीएससी की तैयारी में लगा हूं। मुझे इस पत्रिका को पहली बार अप्रैल, 2005 का अंक पढ़ने का मौका मिला। मुझे बहुत ही अच्छा लगा।

**सुबोध कान्त प्रकाश आर्य**
टिकारी, गया, (बिहार)

•••

कुरुक्षेत्र के अप्रैल, 2005 का बजट पर विशेष अंक बहुत ही अच्छा लगा। यह सत्य है कि इस बजट से गांवों की दशा में उल्लेखनीय सुधार होगा। सभी लेखों द्वारा यहीं प्रमाणित होता है।

**संजीव पटेल**
पटना, (बिहार)

# संपादकीय

यदि अंतिम परिणाम हमारे नियंत्रण में नहीं है तो क्या घोर परिश्रम करना सार्थक है? प्रत्येक सुबह नाविक अपनी यात्रा यह जानते हुए भी प्रारंभ करता है कि हवा के बहने की दिशा और गति, धारा का प्रवाह, तूफान की संभावना सभी उसके नियंत्रण से बाहर है। उसके पास चप्पू होता है और अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु धैर्य। उसके नियंत्रण से बाहर की परिस्थितियां उसे अपने पथ की रूपरेखा तैयार करने से कभी नहीं रोकतीं। हमारे नियंत्रण से बाहर के कारक हमें अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु गंभीर प्रयास करने से नहीं रोकते हैं। हमारे हाथों में चप्पू और बाधाओं को पार करने की दृढ़ता कभी कभार की विफलता की अपेक्षा ज्यादा विश्वास के साथ सफलता सुनिश्चित करते हैं।

बुद्धि अपने नियंत्रण से बाहर के मुद्दों पर हमारे असफल होने का काई कारण नहीं है। सही विकल्प उन्हें अपनी राह छोड़ देना है तबतक जो रास्ता मिलता है उसे ही स्वीकारें। हम जो राह चुनते हैं उसमें कुछ कांटे अवश्य होंगे। क्या हम अपनी आगे की यात्रा रोक कांटों को निकालने बैठ जाते हैं? या हम जूते पहनकर अपने गंतव्य की ओर बढ़ जाते हैं? यदि सभी लोग राह के कांटों की परवाह किए बिना आगे नहीं बढ़े होते तो कभी कोई सामाजिक सुधार नहीं हुआ होता। दूसरी तरफ यदि हम कांटे निकालने के लिए अपनी यात्रा रोक देते हैं तो अपने जीवन में हम कभी भी गंतव्य प्राप्त करने योग्य नहीं होंगे।

समाज सुधारकों के लिए कांटों को दूर करना भी पाने आप में गंतव्य प्राप्त करना था। उनके दिमाग में दूसरा कोई गंतव्य नहीं था। मानव समाज ऐसे महानुभावों का आभारी है। अपने जीवनकाल में हमसभी दुविधा का सामना करते हैं। सही तरीका है लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित करना और अन्य चीजों की उपेक्षा करना। यदि लक्ष्य चिड़िया की आंख है तो उसके शरीर के अन्य अंगों से कोई मतलब नहीं। पत्तों और शाखाओं को ध्यान से दूर रखना होगा तभी हम लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं।

यह कैसी निराशा है? लक्ष्य नहीं प्राप्त होने पर निराशा मानवोचित है। परंतु सबकुछ नहीं खोया है। प्राप्त होने पर निराशा मानवोचित है। प्राप्त करने के प्रयासों से यह अनुभव होता है कि कुछ चीजें काम आएंगी जबकि अन्य नहीं। प्रक्रिया के दौरान हम नए और अनअन्वेषित विचारों को आजमाते हैं, तो हम ऐसी स्थितियों से गुजरते हैं जो लक्ष्य से किसी प्रकार कम लाभदायक नहीं हैं। जीवन में बुरे समझौते जैसा कुछ नहीं है। प्रत्येक विफलता हमें सफलता के करीब लाती है। हम सीखते हैं कि किसी भी उपक्रम में सफलता की दर शत प्रतिशत नहीं हो सकती है। ऐसा हो सकता है कि दस प्रयासों में से एक सफल हो। लेकिन वह एक कौन-सा है? इसे जानने का एकमात्र तरीका है कि सभी दस प्रयास किए जाएं। आपके भाग्य में जितना मिलना लिखा है वह आपसे कोई छीन नहीं सकता और जो नहीं मिलना है वह कोई दे नहीं सकता।

# जैव खेती

## खाद्यान्न की विषाक्तता और आपूर्ति समस्या

डा. शुभंकर बनर्जी

इस जगत में सभी जीवधारियों को जीवन धारण के लिए उदरपूर्ति के साधनों पर निर्भर रहना ही पड़ता है। विशेष तौर पर मानव समाज ने जब से सभ्यता तथा संस्कृति की विकास–यात्रा तय की तब से भोज्य तथा पेय पदार्थों की आपूर्ति तथा उपलब्धता की प्रकृति भी समयानुसार परिवर्तित होती रही। विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्र में हुई व्यापक प्रगति ने भी इस क्षेत्र में अपना ठोस प्रभाव जमाया। नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकी ने भी कृषि उत्पादन के क्षेत्र में अभूतपूर्व वृद्धि दर्ज की।

परन्तु स्वास्थ्य क्षेत्र में हुई व्यापक प्रगति के बावजूद जन सामान्य के स्वास्थ्य स्तर पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ा। अंधाधुंध प्रौद्योगिकी विकास ने हमारी सामान्य जीवन शैली को इतना अत्याधुनिक बना दिया कि हमारा सामान्य स्वास्थ्य का स्तर सुधरने के बजाए और भी गिरता जा रहा है। इसका मूल कारण यह भी है कि आधुनिक मानव 'विज्ञान तथा तकनीकी विकास' पर इतना निर्भर हो गया कि प्राकृतिक जीवन शैली अपनाने के आदर्श को मानो भूल ही गया।

उपर्युक्त तथ्य का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है – हरित क्रांति, जिसका मुख्य आधार है – उन्नत तथा संकर बीज, कीटनाशक रसायन, सिंचाई की नई तकनीक तथा आधुनिकतम कृषि प्रबंध इत्यादि। परंतु अब इसके प्रतिकूल प्रभावों के लक्षण भी सामने आ रहे हैं। इस संदर्भ में विश्व खाद्य संगठन तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक आकलन के अनुसार भारत सहित अधिकतर विकासशील देशों के 90 प्रतिशत जन–साधारण प्रतिदिन विषाक्त खाद्य पदार्थों का सेवन करने के लिए मजबूर हैं। इस तरह की खाद्य सामग्रियों में अन्न, दाल, दूध, फल तथा सब्जियां आदि प्रमुख हैं, और इन पदार्थों का सेवन करना भी उनकी मजबूरी बन जाती है। इस तरह के विषाक्त खाद्य पदार्थों का आहार लेने से सिरदर्द, उच्च रक्तचाप, जी घबराना, सफेद दाग, पाचन तंत्र की खराबी, अम्ल, पथरी, प्रजनन क्षमता में कमी तथा कैंसर जैसे प्राणघातक रोगों के होने की आशंका हो जाती है।

वास्तव में कृषि सम्बन्धित विभिन्न क्रियाओं के दौरान ही खाद्य पदार्थों में विषाक्त तत्वों का प्रवेश होता है। अतः कृषि विज्ञान के अनुसार विषैले खाद्य पदार्थों को दो भागों में बांटा जा सकता है। पहला है– सम्पर्क विष (कॉन्टैक्ट पॉइजन) जो पौधों पर छिड़काव के दौरान कीटों तथा किसानों को प्रभावित करता है। दूसरा है– व्यवस्थित विष (सिस्टमेटिक पॉइजन) जिसके छिड़काव के पहले ही पौधा विषाक्त बन जाता है और बाद में कीट उस पौधे के सम्पर्क में आने से पहले ही मर जाता है।

साधारण तौर पर पेड़–पौधों को कीड़ों, चैपा (एफिड), रोली, दीमक, कातरा सफेदी एवं फफूंद आदि से बचाने के लिए किसान कई प्रकार के विषाक्त कीटनाशकों का छिड़काव करते हैं। दूसरी ओर पैदावार में वृद्धि करने के लिए पोटाश, यूरिया तथा सल्फेट आदि रासायनिक उर्वरकों का भी अंधाधुंध उपयोग किया जाता है। ऐसे रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि तो होती है परंतु दूसरी ओर इसका दुष्प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है। स्पष्ट है कि जिस रसायन से कीट–पतंगों की मृत्यु होती है उसका विपरीत प्रभाव मानव के स्वास्थ्य पर भी तो पड़ेगा। अर्थात इन कीटनाशकों का भी दुष्प्रभाव मानव की कोशिकाओं पर पड़ता है। उदाहरण के तौर पर मोनो क्रोटोफॉस, डाइपोक्रोन और एफोलक्स जैसे कीटनाशक रसायनों का अत्यधिक उपयोग करने से मानव के सामान्य स्वास्थ्य पर घातक दुष्प्रभाव पड़ता है।

यहां तक कि फसल काटने के बाद भी भंडारण के लिए रासायनिक कीटनाशकों (जैसे – एल्मूनियम फास्फाइड) का भरपूर उपयोग किया जाता है। वैसे ध्यान देने वाली बात यह भी है कि अनाज को सुरक्षित रखने के लिए विषैले रसायनों का धुंआ उपयोग में लाना ज्यादा प्रभावी रहता है। परंतु यह तरीका हितकारी होने के बावजूद ज्यादातर मामलों में अनाज की बोरियों में ही कीटनाशक गोलियां तथा घोल मिला दिया जाता है। यदि बिना धोए इस प्रकार के अनाज को पिसवा लिया जाए या सीधे तौर पर उपयोग किया तो इसके सेवनकर्ता को सिर–दर्द, उल्टी, चक्कर, पेट की गड़बड़ी आदि की शिकायत हो जाती है। उदाहरण के तौर पर बाजार में बिकने वाली फूलगोभी, दरअसल प्राकृतिक रूप से सफेद नहीं होती बल्कि एक विशेष प्रकार के रसायन के घोल में डुबोया हुआ होने से ऐसी सफेदी नजर आती है। ऐसा करने का मुख्य कारण यह है कि नैसर्गिक रूप से मिलने वाली फूल गोभी का रंग पीला–सा होता है जिन्हें ग्राहक पसंद नहीं करते हैं।

इसी तरह से मटर के पौधों को भी कीड़ों से बचाने के लिए रसायन के घोल का छिड़काव किया जाता है। इसका दुष्प्रभाव पौधे तथा मटर की फलियों पर लगभग एक माह तक बना रहता है। हालांकि इन रसायनों के पैकेटों पर स्पष्ट निर्देश लिखा होता है, फिर भी किसान उन निर्देशों की अनदेखी या उपेक्षा करके फलियां एक माह से पहले ही बाजार में बेच देते हैं। इसके अलावा आलू, अरबी तथा अदरक आदि की फसलें कई माह तक सुरक्षित या संरक्षित रखने के लिए विकिरण (रेडियेशन) पद्धति का प्रयोग भी किया जाता है। दरअसल

इन विकिरणों की सहायता से उन तत्वों तथा जीवाणुओं को नष्ट किया जाता है जो इन फसलों तथा सब्जियों को सड़ाते–गलाते हैं। यह तो सही है कि इस विधि से आलू, प्याज आदि लम्बी अवधि तक खराब नहीं होते परन्तु साथ ही यह भी कटु सत्य है कि इस प्रक्रिया के बाद उनकी पौष्टिकता में कमी आ जाती है।

यह वैज्ञानिक तथ्य है कि परमाणु विखण्डन तथा विकिरणों के दुष्प्रभाव से कैंसर होने की आशंका बढ़ जाती है, परन्तु दूसरी ओर यह कहना भी कहां तक उचित है कि खाद्य पदार्थों के संरक्षण के लिए प्रयुक्त विकिरण हानि रहित है। यह कटु सत्य विश्व स्तर पर उजागर हो चुका है कि हिरोशिमा, नागासाकी तथा रूस के परमाणु सयंत्र चैरनोबिल के आसपास रहने वाले लोगों को इन विकिरणों के दुष्परिणामस्वरूप कई प्रकार की स्वास्थ्यगत समस्याओं से जूझना पड़ा है और यह सिलसिला अब भी जारी है। यहां तक कि एक्स–रे तथा तेज धूप की पराबैंगनी किरणों से भी मानव कोशिकाओं पर अत्यधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं।

इन विषाक्त रसायनों का उपयोग केवल कीटों का नाश करने तक ही सीमित नहीं है बल्कि फलों को पकाने के लिए भी इनका भरपूर उपयोग किया जाता है। जैसे– साधारण तौर पर केला, पपीता, आम, चीकू, सेब, अनार, अनन्नास तथा आलू बुखारा आदि फलों को पेड़ से कच्चा ही तोड़ लिया जाता है तथा इच्छित गन्तव्य तक पहुंचाकर फिर 'कार्बाइड' द्वारा पकाया जाता है। दरअसल फलों को नरम तथा रसीला बनाने के लिए 'एसिटिलीन गैस' की महत्वूपर्ण भूमिका रहती है जो काफी विषाक्त प्रभाव वाली गैस होती है।

इसी क्रम में अचार, मुरब्बा, चटनी तथा अन्य खाद्य पदार्थों को लम्बी अवधि तक सुरक्षित रखने के लिए रासायनिक तत्वों का प्रयोग किया जाता है जिनकी निर्धारित मात्रा से थोड़ी सी भी अधिक होने से सेवनकर्ता को रोगग्रस्त होने की मजबूरी झेलनी पड़ती है। इस तरह से नैतिक मूल्यों तथा वस्तु गुणवत्ता से परे वर्तमान भारतीय बाजार व्यवस्था में विषाक्त खाद्य पदार्थ धड़ल्ले से बिकते रहे हैं। बच्चों की विशेष प्रिय वस्तु 'चॉकलेट' में निकल धातु, फिनाइल, इथाइल एमीन, पायोक्रोमीन, जानथीम इत्यादि घातक पदार्थ पाए जाते हैं। मानव के तंत्रिका–तंत्र पर इन रसायनों का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यहां तक कि इन चॉकलेटों में जीवाणु भी मिल सकते हैं। नियमित रूप से चॉकलेट का सेवन करने से कैंसर, मधुमेह, उच्च रक्त चाप, दमा, लीवर की खराबी जैसे प्राणघातक रोग होने की आशंका उत्पन्न हो जाती है।

वर्तमान युग 'फास्टफूड्स' का है। विशेष तौर पर 'चाइनीज फास्ट फूड' का प्रचलन तो बहुत ही अधिक है। सच तो यह भी है कि सभी तरह के चीनी खाद्य पदार्थों में अजीनों मोटो या सोडियम मोनो ग्लूटामेट नामक रसायन डाला जाता है जिसकी वजह से एक विशेष प्रकार के स्वाद की अनुभूति होती है। भारत के निवासी भी इसी विशेष प्रकार के स्वाद की लालसा में इस तरह के रसायन का सेवन अधिक मात्रा में करते हैं जबकि मूलतः चीनी लोग इनका उपयोग एक निश्चित या कम मात्रा में ही करते हैं। इस तरह के रसायन के अत्यधिक सेवन से उल्टी, चक्कर, सिरदर्द, पेट की खराबी, माइग्रेन आदि की शिकायत हो जाती है।

कई बार ऐसा भी देखा गया है कि सभी प्रकार की सावधानियों को बरतने के बावजूद हाथ–पैरों की नसों में भयंकर दर्द की अनुभूति होती है। दरअसल 'टाइरामिन' नामक रसायन के कारण ऐसा होता है। यह रसायन शराब, कॉफी, चॉकलेट, पनीर, चेरी, कलेजी, बीन इत्यादि में पाया जाता है। इन खाद्य पदार्थों में इस रसायन की मात्रा पाई जाती है क्योंकि इनके उत्पादन की प्रक्रियाओं में कृत्रिम एवं रासायनिक पदार्थों का उपयोग निरंतर बढ़ रहा है।

इसी तरह से भोज्य सामग्रियों के रंग तथा सुगंध पर हम स्वाभाविक रूप से मोहित तो होते हैं परन्तु सच्चाई तो यही है कि कृत्रिम रंग तथा महक का प्रयोग आजकल बहुत अधिक होने लगा है। हल्दी, मिर्च, धनिया, चाय, पिसे हुए गरम मसालों या अन्य मसालों में से ऐसे रसायन आधारित कृत्रिम रंगों और सुगंधों का भरपूर प्रयोग किया जाता है। खांडसारी से बनी मिठाइयों में भी ऐसी कृत्रिमता पायी जाती है जो आकर्षक होने के बावजूद हानिकारक होती है।

साधारणतः छोटे बच्चों को शरबत, मिल्करोज, आइसक्रीम बर्फ, लच्छे, खट्टे–मीठे दूसरे पेय पदार्थों के चटकीले रंग बहुत पसंद आते हैं। बच्चों की इस कमजोरी का लाभ उठाते हुए सस्ते एवं घातक रंग तथा सुगन्धित रसायन आदि बच्चों के खाद्य पदार्थों में मिलाए जाते हैं। जबकि इस समस्या का कानूनी निवारण करने की पहल भी की गई है। खाद्य पदार्थ निवारण अधिनियम–1954 के अन्तर्गत कृत्रिम रंगों का उपयोग अवैध घोषित हो चुका है। परन्तु ग्राहकों की रुचि को देखते हुए तथा उन्हें आकर्षित करने के लिए ऐसे खाद्य पदार्थों की बिक्री धड़ल्ले से जारी है। उल्लेखनीय है कि भारत में खाद्य पदार्थों में प्रयोग किये जाने वाले रंगों की स्वीकृत मात्रा 110 पी.पी.एम. (प्रति दस लाख में एक भाग) तय की गई है जबकि हलवाइयों तथा व्यापारियों द्वारा इस निर्धारित मात्रा से पांच–दस गुणा अधिक रंगों का प्रयोग किया जाता है।

खाद्य पदार्थों में मिलाने योग्य स्वीकृत रंगों में ऐसे आठ रंगों को सम्मिलित किया गया है जो मानक स्तर के होने के साथ–साथ हानि रहित भी अवश्य हों। परन्तु ऐसे रंग काफी मंहगे होते हैं तथा ज्यादा चटकीले नहीं होते हैं। अतः लागत कम करने के अलावा ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए भी मिठाइयों की दुकानों में लड्डू में 'मोहनिल येलो', लाल रंग के लिए 'लैड क्रोमेट' तथा अन्य वस्तुओं में रोजामाइन, ओरामाइन, सूडान 3–4, आरेंज–4, मैलाचाइट ग्रीन आदि रसायनिक रंगों का प्रयोग धड़ल्ले से किया जाता है। मोहनिल येलो से कैंसर तथा सूडानी रंगों से गुर्दे तथा यकृत के असाध्य रोगों के होने की आशंका सदैव बनी रहती है।

उल्लेखनीय है कि दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में कई ऐसे कारखाने पकड़े गए जहां सिंथेटिक दूध तथा नकली देसी घी बनाया जाता था। ऐसे अवैध कारोबार अब भी जारी हैं तथा पकड़े जाने का सिलसिला भी इसी तरह चलता रहेगा। अब तो बाजार में देसी घी सहित सभी प्रकार की सुगंध के 'ऐसेन्स' खुले तौर पर मिलने लगे हैं। इन 'ऐसेन्स' की सहायता से ऐसे अवैध व्यापार करना अब आसान हो गया जिसके अंतर्गत नकली चीजों को आसानी से असली कहकर खुले तौर पर बेचना संभव हो गया है। जबकि ऐसी नकली खाद्य वस्तुओं

का सेवन करने से कैंसर जैसे कई प्राणघातक रोगों की आशंका उत्पन्न हो जाती है। मानव के स्वास्थ्य से खिलवाड़ करते हुए निहित स्वार्थी तथा लोभी व्यवसाइयों की अवैध गतिविधियां तमाम कानूनी प्रतिबंधों के लागू करने के बावजूद बखूबी जारी हैं।

इसके लिए महज कानूनी प्रावधानों को बनाना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि यथोचित कठोर दंडात्मक कार्यवाही करने की भी पहल अनिवार्य रूप से की जानी चाहिए। हालांकि इन अवैध गतिविधियों पर रोक लगाने की दिशा में कई प्रकार की चेष्टाएं की जा रही हैं परन्तु फिर भी सामान्य जनता की पर्याप्त जागरूकता के बिना सम्पूर्ण सफलता प्राप्त करना वाकई कठिन काम है। वैसे खाद्य पदार्थों की शुद्धता सुनिश्चित करने के लिए एक सुदृढ़ प्रशासनिक तंत्र की सुव्यवस्था निर्धारित की जाने की आवश्यकता भी महसूस की जा रही है। हालांकि इस तंत्र के अंतर्गत खाद्य अपमिश्रण विभाग, स्वास्थ्य विभाग तथा उनकी सहायता हेतु पुलिस विभाग भी कार्यरत है परंतु यथोचित अनुपालन की कमी होने के कारण इस नियंत्रण–तंत्र का वास्तविक लाभ कारगर ढंग से अभी तब उभरकर नहीं आ पाया है।

पूरे देश में तथा प्रदेश स्तर पर भी विभिन्न मंत्रालय इस क्षेत्र में कार्यरत तो हैं परन्तु इस तरह की नियंत्रण व्यवस्था के बावजूद खाद्य पदार्थों में मिलावट, नकली खाद्य सामग्री तथा विषाक्त खाद्य वस्तुओं का बाजार वैसे ही चल रहा है। कटु सत्य तो यह है कि विषाक्त या मिलावटी खाद्य पदार्थों पर नियंत्रण करने वाले विभाग तथा अभिकरण तब ही सक्रिय होते हैं जब कोई एकाएक अनहोनी हो जाती है या ऐसी शिकायत सामने लायी जाती है। अतः विभागीय तौर पर पहल न होने के कारण देश में खाद्य अपमिश्रण की घटनायें सामान्य बात हो गयी हैं।

इस बीच शीतल पेय में कीटनाशक रासायनिक अवशेषों की उपस्थिति ने भी एक नया विवादास्पद विषय राष्ट्रीय स्तर पर उठाया। परंतु शीतल पेय से भी अधिक गंभीर मुद्दा तो सामान्य खाद्य पदार्थों तथा पेय जल में मिलावट तथा उसके विषाक्त प्रभाव को समझा जा रहा है। स्पष्ट है कि सामान्य खाद्य समाग्रियों तथा पेय जल का उपयोग सभी लोग करते हैं, अतः उनमें विषाक्त तत्व पाया जाना तो सम्पूर्ण देश के जन स्वास्थ्य के लिए चिंताजनक बात है।

इस विषय पर काफी शोधपरक अध्ययन हो चुके हैं जिसके अंतर्गत यह तथ्य उजागर हुआ है कि कीटनाशकों के द्वारा प्रदूषण की स्थिति अत्यंत भयावह है। अब तो मूल प्रश्न यह नहीं रह गया कि किस खाद्य या पेय पदार्थ में कितनी मात्रा में विषाक्तता है बल्कि इस तरह की विषाक्तता के प्रभावों से बचने का स्थायी उपाय क्या है? समस्या का स्थायी समाधान करने की दिशा में ठोस तथा कारगर पहल करने की चेष्टा अवश्य की जानी चाहिए।

स्वाभाविक रूप से इस समस्या का प्राथमिक तौर पर यही समाधान है कि मूलतः कृषि क्षेत्र से ही रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग न्यूनतम स्तर पर हो। वैसे यह भी वास्तविक तथ्य है कि किसी फसल पर छिड़की गई कीटनाशक दवा की थोड़ी–सी मात्रा ही कीटों पर प्रभाव डालने में सक्षम हो पाती है। शेष अधिकांश मात्रा हमारे प्राकृतिक वातावरण पर व्यापक रूप से प्रतिकूल प्रभाव डालती है तथा उसका परिणाम व्यापक तौर पर विनाशकारी होता है। इतना नहीं, कई कीटनाशक दवाएं तो मिट्टी में ही टिकी रहती हैं और दीर्घकालीन दुष्प्रभाव डालती हैं। बाद में यही रासायनिक पदार्थ जल स्रोतों तक पहुंच जाते हैं और उनके दुष्प्रभावों से जल संसाधनों को मुक्त करवाना आसान नहीं होता है।

इस तरह के रासायनिक कीटनाशकों में मानव तथा अन्य प्राणियों के शरीर में जमा होने की एक विशेष प्रवृत्ति भी होती है जिसके परिणामस्वरूप कई प्रकार की दीर्घकालीन स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न होती हैं। अतः यह अनिवार्य आवश्यकता बन चुकी है कि सामान्य स्वास्थ्य की रक्षा के लिए न केवल इन कीटनाशकों के उपयोग को न्यूनतम कर दिया जाए बल्कि इसी कसौटी पर इन पर पूर्णरूप से रोक लगाने की कानूनी प्रक्रिया प्रारंभ करने की दिशा में भी सकारात्मक कदम उठाए जाएं।

परंतु इस तरह की पहल करने के अभाव में कीटनाशकों के उपयोग में कमी लाने के बजाए बढ़ावा ही मिला है। इसका एक तकनीकी पक्ष यह भी रहा है कि हमने जिस कृषि तकनीक को अपनाया है उसके अंतर्गत इन रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग को ही सर्वाधिक प्रोत्साहन मिलता रहा है।

इस तरह से स्पष्ट है कि कृषि पद्धति में मूलभूत या आमूल परिवर्तन करना अत्यावश्यक है वरना कीटनाशकों के उपयोग को कम करना या उस पर रोक लगाना संभव नहीं है। इसके अलावा यदि ऐसे बीज बोए जा रहे हैं जिनके अंतर्गत एक विशेष प्रकार के कीड़ों के अत्यधिक प्रकोप होने की आशंका रहती है तो स्वाभाविक तौर पर उन कीड़ों को मारने वाले विशेष प्रकार के कीटनाशकों की भी व्यवस्था करनी पड़ेगी। जब इन बीजों को कृषि के विशाल क्षेत्रफल में बोया गया हो तो इस तरह की परिस्थिति अवश्य उत्पन्न होगी। अतः संपूर्ण रूप से रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग को बंद करने में तभी सफलता मिल सकती है जब इस तरह प्रचलित कृषि तकनीकी में समग्र सुधार किया जाएगा।

परिस्थिति की त्रासदी यह भी है कि स्वास्थ्य के लिए हानिकारक रसायनों के उपयोग पर हम पूरी तरह से निर्भर हो चुके हैं और यही मजबूरी इन पर नियंत्रण प्राप्त करने की सबसे बड़ी बाधा भी है। निरंतर जनसंख्या वृद्धि के दबाव के कारण उनकी उदर पूर्ति की समस्या स्वाभाविक रूप से उठ रही है जिसके लिए अधिक खाद्यान्न उत्पन्न करने के लिए कीटनाशकों की सहायता लेनी पड़ती है जिसके परिणामस्वरूप कीटनाशक दवाओं, खरपतवार नाशकों, रासायनिक कीटनाशकों आदि के उपयोग करने की मजबूरी सामने आती है। इस तरह से एक ओर तो जन स्वास्थ्य के लिए संकट उत्पन्न हो रहा है वहीं दूसरी ओर विशाल जनसाधारण की खाद्यान्न आपूर्ति के लिए इस तरह के हानिकारक रासायनिकों के उपयोग पर निर्भरता भी बढ़ती जा रही है।

इस संदर्भ में कुछ वैज्ञानिकों ने इस मजबूरी से बचने की बात भी की है। उनके मतानुसार रासायनिक दवाओं तथा उर्वरकों पर निर्भर रहे बिना भी बेहतर खाद्यान्न उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। दरअसल इस तरह की मजबूरी को चुनौती देते हुए उन्होंने इस तथ्य पर बल प्रदान किया है कि कृत्रिम रसायनों पर निर्भरता के बिना ही अच्छी उत्पादकता प्राप्त करने के साधन हमारे पास हैं।

उल्लेखनीय है कि अमेरिका की कृषि व्यवस्था को ही रसायनों पर आधारित कृषि

का आधारस्तंभ माना जाता है। परंतु वर्ष 1989 में अमेरिकी कृषि वैज्ञानिकों ने ही एक अभूतपूर्व रिपोर्ट जारी की जिसने पूरे विश्व को ही चौंका दिया। इस रिपोर्ट में इस तथ्य को स्पष्टतः स्वीकार किया गया था कि कृत्रिम रसायनों की सहायता के बिना अर्थात जैव खेती के आधार पर की गई खेती भी उतनी ही उत्पादक सिद्ध हो सकती है।

उपर्युक्त रिपोर्ट के आने के बाद जैव खेती के पक्ष में अपनी आवाज उठाने वालों की बात और भी प्रबल होकर हमारे सामने उभरकर आयी। रासायनिक खेती पर निर्भर हुए बिना, जैव खेती की सहायता से बेहतर फसल प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की जा सकती है, इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए कई महत्वपूर्ण उपयोगों की जानकारी भी मिली। इन उपयोगों के अंतर्गत प्रारंभ से ही जैव खेती के माध्यम से यथायोग्य उत्पादन प्राप्त करने की चेष्टा की गई जिसमें पर्याप्त सफलता भी मिली।

कृषि वैज्ञानिकों ने कृषि प्रयासों का विस्तृत अध्ययन किया जिसके अनुसार यह तथ्य भी उजागर हुआ कि इस साल लाख से भी अधिक किसान परिवारों ने रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों की सहायता लिए बिना ही खाद्य उत्पादन तथा खाद्य सुरक्षा को बेहतर करने में सफलता प्राप्त की। यह भी विशेषरूप से ध्यान देने योग्य बात है कि ऐसे प्रयासों से न केवल पर्यावरणीय सुरक्षा सुनिश्चित हो सकती है बल्कि बेहतर खाद्यान्न उत्पादन के मुख्य उद्देश्य की कसौटी पर भी हम सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

हालांकि इस परिप्रेक्ष्य में एक प्रतिकूल पक्ष यह भी उभरकर आ रहा है कि जैव खेती की तमाम खूबियों के बावजूद यह भी मजबूरी सामने आती है कि जिस भूमि को रासायनिक खेती की आदत बन चुकी है उस पर बाद में जैव खेती करना संभव नहीं है। परंतु यह पक्ष भी पूरी तरह से सही नहीं है। इस मसले पर विचार करने के लिए कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक डा. मिगेल अततीयरी ने एक महत्वपूर्ण प्रयास किया है। उन्होंने बताया कि इस समय पर्यावरण संरक्षण के तरीकों को अपनाते हुए विश्वस्तर पर लगभग 50 लाख हेक्टेयर भूमि को सुधारने का प्रयास 25 लाख किसान परिवार कर रहे हैं।

ऐसा प्रायः देखा गया है कि कृत्रिम रसायनों का अत्यधिक उपयोग करने से जिस मिट्टी का प्राकृतिक उपजाऊपन कम हो चुका है उसमें यदि गोबर तथा कंपोस्ट का उपयोग किया जाए तो उसकी उर्वरकता अवश्य वापस आ सकती है। हालांकि यह भी सच है कि किसान अपनी कम उपजाऊ खेती की भूमि को इस प्रक्रिया से एक साथ उपजाऊ तो नहीं बना सकते, परन्तु एक निश्चित क्रम में यदि ऐसी प्रक्रिया अपनायी जाती है तो मात्र चार–पांच वर्ष की अवधि में ही कम उपजाऊ बनी कृषि भूमि फिर से उपजाऊ बन सकती है।

विशेष तौर पर भारत के कृषि वैज्ञानिकों, संगठनों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने जैव खेती की उपयोगिता पर न केवल जोर दिया है बल्कि इस तथ्य को प्रमाणित तथा प्रचारित करने के लिए भी चेष्टा की है। उदाहरण के तौर पर आंध्र प्रदेश में डेकन डेवलपमेंट सोसाइटी, उत्तर प्रदेश में बिजनौर, पश्चिम बंगाल में सेवा संस्था इत्यादि संस्थानों ने जैव खेती को प्रोत्साहित करने का मानो जनांदोलन ही छेड़ दिया है। उनकी चेष्टाओं से जैव खेती को बेहतर सिद्ध करने की दिशा में महत्वपूर्ण सफलता भी मिली है।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर क्यूबा का उदारहण महत्वपूर्ण है जहां जैव खेती के प्रयोगों से क्यूबा ने अपनी कृषि तथा खाद्य समस्या को हल करने में व्यापक सफलता प्राप्त की है इससे पहले क्यूबा में भी रसायनों पर आधारित कृषि प्रचालित थी। जब से सोवियत संघ के विघटन के बाद क्यूबा को बाहरी सहायता मिलनी बंद हो गयी तब क्यूबा ने कृषि क्षेत्र में प्राकृतिक तौर पर आत्मनिर्भर रहने का निर्णय लिया और जैव खेती अपनाते हुए अपनी खाद्यान्न समस्या का समाधान करने की दिशा में सफलता प्राप्त की।

हालांकि जैव खेती के क्षेत्र में भी आधुनिक विज्ञान की आवश्यकता अवश्य पड़ती है। इस तरह के विज्ञान की विशेष भूमिका इस लिए अत्यावश्यक समझी जा रही है क्योंकि विभिन्न प्रक्रियाओं को सही ढंग से समझने के लिए तथा उसी के अनुसार कार्य करके अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए आधुनिक विज्ञान की सहायता अवश्य ली जानी चाहिए। इस तरह की वैज्ञानिक सहायता के माध्यम से हम परंपरागत ज्ञान का अनुकूल लाभ प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। यह न केवल आवश्यक है बल्कि अनिवार्य भी है क्योंकि जैव खेती की पारम्परिक समझ का इतिहास चार हजांर वर्ष या उससे भी पुराना है जिसकी विज्ञान–सम्मत व्याख्या करके, उसी के अनुरूप अपनाने का निर्णय किया जाता है।

भूमि की उर्वरकता को प्राकृतिक ढंग से बनाये रखने के लिए जैव खेती के अनुसार स्थानीय संसाधनों (जैसे–गोबर, पत्तियां, दूसरे प्रकार की कम्पोस्ट आदि) का उपयोग किया जाता है। भारतीय कृषि परंपरा में व्यापक विविधता वाली फसलों की किस्में आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। वर्तमान युग की भी यही मांग है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समृद्ध जैव विविधता बनायी रखी जाए। अतः कृषि कार्य के दौरान एक दूसरे से मेल रखने वाली और स्थानीय जलवायु के अनुकूल विविध प्रकार की फसलें उगानी चाहिए। साथ ही उन फसलों की कई तरह की किस्में भी अवश्य उगानी चाहिए इससे जैव विविधता की समृद्धि बनी रहती है।

स्पष्ट है कि यदि जैव विविधता बनी रहेगी तब किसी भी कीड़े या रोग का प्रकोप तेजी से फैलने की आशंका भी अपने आप कम हो जायेगी। वैसे यह भी सही कि यदि इसके बावजूद किसी तरह की ऐसी समस्या पैदा होती भी है तो उसके समाधान के लिए स्थानीय वनस्पतियों जैसे नीम की सहायता से उपचार किया जा सकता है। इसके अलावा विषाक्त रसायनों का न्यूनतम उपयोग सुनिश्चित करने से उन खेतों में ऐसे पक्षियों और जीवों की भी उपस्थिति होगी जो कीड़ों का नाश करने में सक्षम हैं। इससे हानिकारक कीड़ों पर प्राकृतिक नियंत्रण प्राप्त करने में भी महत्वपूर्ण सफलता मिल सकती है। इसका एक सकारात्मक पक्ष यह भी है कि इस तरह की कृषि प्रक्रिया की लागत भी कम होती है।

अतः खाद्य पदार्थों की विषाक्तता से निपटते हुए यदि इस समस्या पर वाकई नियंत्रण प्राप्त करने की दिशा में सफलता पानी है तो प्राकृतिक जैव खेती को ही अपनाना होगा जिससे न केवल पर्यावरणीय सुधार की उपलब्धि मिलेगी बल्कि खाद्यान्न की मांग की भी पूर्ति संभव होगी तथा किसानों पर भी कर्ज का भार कम होगा और वे आर्थिक रूप से अवश्य सम्पन्न होंगे। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

# जैव उर्वरक एवं जैव नियंत्रक

## आवश्यक क्यों?

डा. राजीव कुमार सिंह और डा. रमेश सिंह

संपूर्ण विश्व में स्वस्थ जीवन एवं पर्यावरण की आवश्यकता महसूस की जा रही है। हमारे देश में हरित–क्रांति को सफल बनाने हेतु रासायनिक उर्वरकों और कृषि रक्षा रसायनों का उपयोग बढ़ा, फलतः अनाज के उत्पादन में तो हम आत्मनिर्भर हो गए, परंतु अनाज गुणवत्ता प्रभावित होने के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य, पशु–पक्षियों, मछलियों, लाभदायक कीटों, मृदा, जल तथा वातावरण पर भी दूषित प्रभाव पड़ा। इस कुप्रभाव से बचने के लिए आज जैविक खेती की आवश्यकता महसूस की गई, क्योंकि जैविक खेती से उत्पादन को बिना प्रभावित किए हुए खाद्यानों की गुणवत्ता में सुधार होता है और इस प्रकार के उत्पादों से अच्छा मूल्य प्राप्त कर कृषक अधिक से अधिक लाभ कमा सकते हैं। अतः आज "कार्बनिक खाद्य" पदार्थ की रुचि बढ़ रही है और इसी के कारण "पारिस्थितिकीय मित्रता" वाली खेती की लोकप्रियता भी बढ़ने लगी है। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन एवं समन्वित नाशीजीव प्रबंधन जैविक खेती के महत्वपूर्ण घटक हैं, और बड़े पैमाने पर अपनाने के लिए किसानों में जागरूकता लाने की आवश्यकता है।

**जैव उर्वरक** – जैव उर्वरक जीवाणु खाद है जिसके उपयोग से 30–40 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेअर भूमि को प्राप्त होती है और उपज में 10–20 प्रतिशत बढ़ोतरी होती है और साई फसल अमृत के उपयोग से 20–25 प्रतिशत तक उपज बढ़ जाती है। ये रासायनिक उर्वरकों के पूरक तो हैं ही साथ ही उनकी क्षमता भी बढ़ाते हैं। फास्फोबैक्टीरिया के उपयोग से फास्फोरस की उपलब्धता में 20–30 प्रतिशत की बढ़ोतरी हो जाती है।

### जैविक खाद

**संपूर्ण फसल आहार** : यह जैविक खाद लाभदायक जीवाणुओं की सहायता से तैयार की गई है। जिसमें वर्मी कंपोस्ट तथा सूक्ष्म जीवों का मिश्रण रहता है। यह खाद पौधों को सभी 16 प्रकार के जरूरी तत्वों को उपलब्ध कराती है। इसके उपयोग से 20–25 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि होती है। पौधों की जड़ें मजबूत तथा शाखाएं अत्यधिक विकसित होती हैं। फूल तथा पत्तियों का गिरना रुक जाता है। अन्य खादों की अपेक्षा यह पांच गुना अधिक लाभकारी होती है।

**उपयोग विधि** : फलदार वृक्षों जैसे संतरा, अंगूर, आम, नींबू इत्यादि में प्रयोग के लिए 5 किग्रा. साई फसल अमृत को 100 किग्रा. सड़ी गोबर की खाद में मिलाने के उपरांत 4–6 दिन तक छायादार स्थान पर रख दें। तत्पश्चात प्रति वृक्ष एक किग्रा. मिक्चर का उपयोग करें। नर्सरी के पौधों के लिए 100 ग्राम मिक्चर का उपयोग प्रति गमले की दर से वर्ष में दो बार उपयोग करें।

| क्र. सं. | जैव उर्वरक का नाम | उपयुक्त फसलें | संस्तुत प्रयोग विधि | आवश्यक मात्रा |
|---|---|---|---|---|
| 1 | फसल अमृत | सभी फसलें फलदार एवं जंगल वृक्ष सहित | मृदा उपचार | 5–10 किग्रा. प्रति हेक्यटेयर |
| 2 | ए.यू. राइजोगोल्ड प्लस (राइजोबियम) | सभी दलहनी फसलें | बीजोपचार | 200 ग्राम प्रति 10 किग्रा. बीज |
| 3 | ए.यू. एजोटो गोल्ड प्लस (एजेटोबैक्टर) | दलहनी फसलों को छोड़कर अन्य सभी फसलों के लिए | बीजोपचार, जड़ उपचार एवं मृदा उपचार | 200 ग्राम / 10 किग्रा. बीज 5 किग्रा. / हेक्यटेयर |
| 4 | ए.यू. एजोगोल्ड प्लस | दलहनी फसलों को छोड़कर अन्य सभी फसलों के लिए | बीजोपचार, जड़ उपचार एवं मृदा उपचार | 200 ग्राम / 10 किग्रा. बीज 5 किग्रा. / हेक्यटेयर |
| 5 | ए.यू. फास्फोगोल्ड प्लस (फास्फो बैक्टीरिया) | दलहनी फसलों सहित सभी फसलों के लिए | बीजोपचार जड़ उपचार एवं मृदा उपचार | |
| 6 | ए.यू.के. गोल्ड प्लस (एसिटो बैक्टर) | गन्ना एवं चुकंदर | मृदा उपचार | 5 किग्रा. / हेक्यटेयर |

**खेत में उपयोग** : दलहन, तिलहन, अनाज, सब्जियों, कपास, गन्ना, आलू आदि सभी प्रकार की फसलों में 10 किग्रा./हे. की दर से 200–250 किग्रा. सड़ी गोबर की खाद में मिलाने के बाद 4–6 दिन तक छायादार स्थान पर रखने के पश्चात खेत की अंतिम जुताई के समय या बुवाई के समय बिखरा दें।

## जैव–उर्वरकों का उपचार कैसे करें?

### बीज उपचार

● 50 ग्राम गुड़ को आधा लीटर पानी में गरम कर घोल बनाएं। ● घोल के ठंडा हो जाने के पश्चात् बाल्टी में पलट दें फिर 200 ग्राम जैव उर्वरक को मिलाएं। ● बाल्टी में 10 किग्रा. बीज डालकर हलके हाथों से अच्छी प्रकार मिलाएं ताकि सभी बीजों पर जैव उर्वरक समान रूप से लग जाए। ● उपचारित बीज को छाया में सुखाकर तुरंत बुवाई करें।

### जड़ उपचार

● यह विधि रोपाई वाली फसलों के लिए उपयुक्त है। ● 4 किग्रा जैव उर्वरक का 20–25 लीटर पानी में घोल बनाएं। ● घोल में 500 ग्राम गुड़ का कोई अन्य चिपचिपा पदार्थ उपयोग करें। ● एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए पर्याप्त पौधे की जड़ को 20–30 मिनट तक घोल में डुबाएं। ● उपचारित पौध की शीघ्र रोपाई करें।

### मृदा उपचार

● मृदा उपचार हेतु 5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से जैव उर्वरक का प्रयोग करें।

● जैव उर्वरकों को 80–100 किग्रा. गोबर की सड़ी खाद अथवा 60–60 किग्रा. कंपोस्ट प्रति वर्ग मीटर कंपोस्ट में अच्छी तरह मिलाएं।

● इस प्रकार तैयार मिश्रण को बुवाई के समय भी 24 घंटा पूर्ण तक हेक्टेयर क्षेत्रफल में समान रूप से छिड़के अथवा जड़ में डालें।

### विशेष

● नाइट्रोजन जैव उर्वरकों के साथ फास्फो बैक्टीरिया का प्रयोग आवश्यक है और अत्यंत लाभकारी भी है। ● अलग–अलग दलहनी फसलों के अनुरूप ही राइजोबियम कल्चर का उपयोग अधिक लाभकारी होगा।

## जैव उर्वरकों के उपयोग से लाभ

● जैव उर्वरक सस्ते होते हैं और कम खर्च में उत्पादन बढ़ाने का कार्य करते हैं। ● जैव उर्वरक वायुमंडल की नाइट्रोजन को फसल को उपलब्ध कराते हैं। मिट्टी की अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाते हैं तथा अगली फसल को भी पहुंचाते हैं। ● जैव उर्वरक वृद्धिकारक हारमोंस उत्पन्न करते हैं जिनसे पौधों की वृद्धि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। ● मृदाजन्य रोगों पर नियंत्रण, सूक्ष्म जीवों की संख्या में आशातीत वृद्धि तथा पर्यावरण सुरक्षा जैव उर्वरकों के अन्य प्रमुख लाभ हैं। ● जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों का स्थान नहीं ले सकते। हां, इनकी आवश्यक मात्रा को कम कर सकते हैं।

**जैव नियंत्रक** : जैव नियंत्रकों के अंतर्गत जैविक कीटनाशक एवं जैविक एजेंट आते हैं।

**जैविक कीट/रोग नाशक** : ऐसे उत्पाद हैं जो जीव–जंतुओं, सूक्ष्म जीवों तथा पेड़–पौधों से प्राप्त किए जाते हैं। यह उत्पाद पर्यावरण एवं स्वास्थ्य को बिना हानि पहुंचाए फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कीट एवं व्याधियों का नियंत्रण करते हैं तथा कुछ ही दिनों में भूमि एवं जल से मिलकर पारिस्थितिक तंत्र का एक अंग बन जाते हैं।

**जैविक एजेंट** : ऐसे कीड़े–मकोड़े एवं जीव जंतु जो दूसरे जंतु को खाकर अथवा फसल को नुकसान पहुंचाने वाले कीटों (शत्रु कीट) पर अंडे देकर अपना जीवनचक्र पूरा करते हैं।

**एन.पी.वी.** : यह कीड़ों में एक घातक बीमारी फैलाने वाला विषाणु है जो अति संक्रमणशील होता है। इसके छिड़काव से कीड़े मर जाते हैं। परंतु लाभदायक कीटों पर किसी भी प्रकार का कुप्रभाव नहीं डालता है।

**उपयोग** – 250 गिडार (इल्ली) से बना एन.पी.वी. प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें। इसे 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

**जैव–नियंत्रक**

| क्र. सं. | जैव नियंत्रक का नाम | नष्ट होने वाले कीट/रोगों का नाम | फसल |
|---|---|---|---|
| 1 | ए.यू. डरमाप्लस (ट्राइकोडमी) | उकठा रोग, जड़ सड़न, बीज विगलन आदि | धान, चना, अरहर, मटर, मसूर, सोयाबीन, कपास, आलू, गन्ना, सूरजमुखी, अलसी आदि फल एवं सब्जी। |
| 2 | एजोलिन (नीम आधारित) | 200 प्रकार के कीट | अनाज, फल एवं सब्जियां, तिलहन दलहन, गन्ना, कपास |
| 3 | त्रिवेणी (बिवेरिया) | अर्धकूपक, तना छेदक, दीमक, आदि | अनाज, दलहन, तिलहन, सब्जी एवं फल, कपास |
| 4 | निपो (NPV) | तंबाकू, अर्धमूषक आदि | अनाज, दलहन, गन्ना, कपास आदि |

## त्रिवेणी (बिवेरिया)

यह फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले विभिन्न कीटों के नियंत्रण हेतु उपयोग की जाने वाली एक प्रकार की मित्र फफूंदी है।

**कार्यशीलता** : आलू का कदुआ, धान का भूरा फुदका, चना, कपास, टमाटर और अरहर का फली छेदक, सफेद मक्खी, माहु, थ्रिप्स, दीमक, छाल, खाने वाले कीटों के रोकथाम हेतु प्रभावी है।

**भूमि में उपयोग** : 50 किलोग्राम अच्छी सड़ी गोबर में 3 किलोग्राम त्रिवेणी को छायादार स्थान में अच्छी तरह मिलाकर 10 से 15 दिन तक रखें और मिश्रण को एक हेक्टेयर खेत में खेत की आखिरी जुताई अथवा बुवाई के समय बिखेर दें। जिससे मिट्टी में पड़े हुए लार्वे, अंडे संक्रमित होकर मर जाते हैं।

**छिड़काव हेतु उपयोग विधि** : 3 किलोग्राम त्रिवेणी पाउडर को 750–1000 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। कीट छिड़काव के 24–48 घंटे के अंदर संक्रमित होकर मर जाते हैं। दस दिन के अंतराल पर (कीटों की संख्या यदि अधिक हो तो) कुल तीन छिड़काव करें।

**त्रिवेणी से होने वाले फायदे**

● पर्यावरण अनुकूल एवं अवशेष रहित। ● पशु पक्षी, जानवर एवं मनुष्यों के लिए सुरक्षित।

• आसानी से उपयोग में लाया जा सकने वाला। • फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कीटों के लाभ प्रौढ़ावस्था तक प्रभावी। • लेपिडोप्टेरा गण के कीटों के प्रति विशेष रूप से प्रभावी।

## ट्राइकोडर्मा और अन्य जैवीय पदार्थों का मिश्रण

ट्राइकोडर्मा मिट्टी में प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाली मित्र फफूंद है।

**संस्तुति** : दलहनी फसलों (चना, मटर, मसूर, उरद, मूंग, अरहर) तिलहनी फसलों (मूंगफली, सोयाबीन, सूरजमुखी, तिल) कपास, धान मक्का, गेहूं, गन्ना, पोस्ता।

**सब्जियां** : आलू, मिर्च, बैंगन, प्याज, टमाटर, फूल गोभी आदि।

**फल** : आम, अमरूद, संतरा, नींबू, पपीता आदि के फफूंद जनित रोगों के नियंत्रण हेतु। मृदा जनित रोग जैसे उकठा, सूखा, गलना, जड़ गलना, तना गलना, अंगभारी, आर्द्रपतन आदि रोगों के नियंत्रण में विशेष प्रभावी है।

**उपयोग विधि**

**बीज उपचार** : बीज उपचार के लिए 8–10 ग्राम एयूडर्मा पाउडर को 50 ग्राम गुड़ की सकरी में ठंडा होने के उपरांत प्रति किलोग्राम बीच की दर से मिलाए। बीज को छाया में सुखाने के बाद बुआई करें।

**भूमि उपचार** : 4–5 किग्रा. एयूडर्मा पाउडर को 60 किग्रा. सडी गोबर की खाद में मिलाकर एक सप्ताह तक छाया वाले स्थान में रखें। तत्पश्चात 1 हेक्टेयर खेत में बिखेर कर जुताई करें।

बागवानी में प्रयोग हेतु 200 ग्रा. एयूडर्मा पाउडर प्रति पेड़ की दर से साल में दो बार मानसून की शुरूआत एवं समाप्ति पर उपयोग करें।

**पौधशाला उपचार** : नर्सरी हेतु 500 ग्राम एयूडर्मा को 100 लीटर पानी में घोल बनाकर बीज की बुआई के बाद 10 वर्ग मीटर क्षेत्रफल की नर्सरी में डालें ताकि घोल 10 सेमी. की गहराई तक पहुंच जाए।

**कंद उपचार** : कंद उपचार के लिए एयूडर्मा के घोल (500 ग्राम एयूडर्मा पाउडर को 100 लीटर पानी) में कंद डुबा कर बुआई पूर्व छायादार स्थान पर सुखा लें।

पौधों की जड़ उपचार के लिए पौधों का रोपने के जड़ को 50 ग्राम एयूडर्मा पाउडर को 10 लीटर पानी के घोल में उपचरित कर रोपाई करें।

## ऐजोलीन 300 नीम तेल पर आधारित

**संस्तुति** : यह नीम तेल आधारित जैव कीट नाशक है। जिसकी संस्तुति फसलों को पहुंचाने वाले चेपा तथा सुंडी कीटों के लिए की गई है। एक लीटर ऐजोलीन को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से शाम के समय छिड़काव करें। इसके छिड़काव से फसल पारिस्थिति की तंत्र में पाए जाने वाले मित्र कीट पूर्णरूपेण सुरक्षित करते हैं।

**सावधानियां**

- यदि कीटनाशक को निगल लिया गया हो तो जहर के लक्षण दिखने पर डाक्टर को तुरंत बुलाएं।
- इसे त्वचा के संपर्क में नहीं आने देना चाहिए। उपयोग के बाद हाथों को साबुन से अच्छी प्रकार से धो लें।
- खाद्य सामग्री तथा बच्चों से दूर ठंडे तथा हवादार जगह में ताला लगा के रखें।
- इसका छिड़काव शाम को करें।

## बैसिलस यूरीजियेंसिस (बीटी)

यह एक प्रकार का जीवाणु है जो कि लेपीडोप्टरान वर्ग की सूड़ियों के मिडगर में विष उत्पन्न करता है जिसमें सूड़ियों की मृत्यु हो जाती है। यह बहुभक्षी कीटों पर विशेष रूप से फली भेदक, तंबाकू की सूड़ी, अर्धलूपक, तना छेदक आदि का प्रभावी नियंत्रण करता है इस प्रकार यह कपास, अरहर, चना, अलसी, तिल, सरसों, धान आदि फसलों की रक्षा पर्यावरण को बिना क्षति पहुंचाए करता है। साथ ही साथ फसलों के मित्र कीटों को संरक्षण भी प्रदान करता है।

इसके अतिरिक्त यह कपास के गुलाबी कीटे, पित्तीदार कीड़े एवं पत्तीलपेटक कीट को भी नियंत्रित करता है।

**प्रयोग विधि** : 500–700 ग्राम बी.टी. को 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर 10 दिन के अंतराल पर तीन बार छिड़काव करना चाहिए।

**जैव नियंत्रकों के प्रयोग से लाभ**

- पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाता है।
- मानव स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है।
- आर्थिक रूप से लाभकारी है।
- पारिस्थितकीय तंत्र का अनुरक्षण करता है।
- कृषि लागत मूल्यों को कम करता है।
- उत्पाद गुणवत्तायुक्त होते हैं एवं उनका प्राकृतिक स्वाद बना रहता है।
- पुनरुत्थान, प्रतिरोध एवं परावर्धी कीट उत्पाद को कम करता है। ❑

**(लेखक इलाहाबाद विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान विभाग से संबद्ध हैं।)**

## गुणवत्ता वाले उर्वरकों का उत्पादन

उर्वरक (नियंत्रण) आदेश, 1985 में देश में उर्वरकों के उत्पादन और बिक्री के संबंध में पर्याप्त सुरक्षा उपायों का प्रावधान किया गया है। किसी भी व्यक्ति को किसी ऐसे उर्वरक या उर्वक के मिश्रण को बेचने/उत्पादन करने की अनुमति नहीं है जो उर्वरक (नियंत्रण) आदेश में निर्धारित किए गए मानकों के अनुरूप न हों। उर्वरकों की गुणवत्ता का परीक्षण करने के लिए देश में 67 उर्वरक नियंत्रण परीक्षण प्रयोगशालाएं हैं जिनमें से भारत सरकार की चार प्रयोगशालाएं फरीदाबाद, मुम्बई, चेन्नई और कल्याणी में हैं। भारत सरकार द्वारा भौतिक मिश्रणों के गुणवत्ता नियंत्रण के लिए कोई पृथक एजेंसी गठित नहीं की गई है।

## कृषि

कृषि संबंधी आर्थिक नीति तथा विकास कार्यों की आवश्यकताओं के अध्ययन के लिए 110.89 करोड़ रुपये की एकछत्र योजना। इसके अंतर्गत मुख्य कृषि उपजों की कीमतों का अध्ययन किया जाएगा और कृषि–आर्थिक अनुसंधान केंद्रों का गठन किया जाएगा। (20.4.20005)

# रासायनिक खादों का विकल्प जैविक खादें

**जगनारायण**

मानव, पशु वृक्ष और पौधों की भांति मिट्टी भी एक सजीव तत्व है। मिट्टी के एक ढेल में हजारों प्रकार के करोड़ सूक्ष्म जीव निवास करते हैं। ये सूक्ष्म जीव या जीवाणु ही हमारी खेती और मृदा के स्वास्थ्य के मूल आधार होते हैं। वर्तमान समय में खेती में हो रहे रासायनिक उर्वरकों के अनियोजित उपयोग से मृदा में पाये जाने वाले उपयोगी मित्र जीवाणुओं का लगातार ह्रास होता जा रहा है, जिससे भूमि का स्वास्थ्य निरन्तर गिरता जा रहा है। मृदा की यह स्थिति पौध–पोषक जैविक तत्वों के अभाव के चलते मृदा के रासायनिक संगघटकों में हो रही अव्यवस्था के कारण ही हो रही है।

भारत जैसे प्राचीन कृषि प्रधान देश के किसान हजारों वर्षों से उर्वरकों के रूप में जैविक खादों का प्रयोग करत रहे हैं। प्राचीन भारतीय कृषि गौपालन से सम्बद्ध रही है। भारतीय किसान हल चलाने के लिए बैल,दूध के लिए गाय, भैंस और बकरी पालता रहा है। पशुओं के गोबर और गोमूत्र से बनी खादों को खेतों में डालकर यहां जैव संरक्षणीय खेती भी होती रही है।

बदलते परिवेश में बढ़ती आबादी का पेट भरने के लिए रासायनिक खादों और संकर बीजों के उपयोग से हमने अपना उत्पादन कई गुणा बढा लिया, जिससे हमारा देश जो कभी अपनी बहुसंख्यक 'आबादी का पेट भरने के लिए पी.एल. 480 जैसे विदेशी सहयोग पर निर्भर था आज अपनी पूरी आबादी को भोजन कराने के बाद विश्व के कई देशों को अन्न निर्यात करने लगा। लेकिन रासायनिक उर्वरको का यह जादू अब खत्म होने लगा है। 60 के दशक में हरित क्रांति के नाम से बढ़ रहा हमारा अन्न उत्पादन अब एक बिंदु पर ठहरता नजर आ रहा है, जबकि हमारी आबादी का बढ़ना निबधि गति से जारी है। दूसरी ओर विशेषज्ञों का मानना है कि अब हम रासायनिक खादों के उपयोग से उत्पादन के अंतिम बिन्दू पर पहुंच गये हैं। आज उर्वरकों एवं रासायनिक कीटनाशकों के असंतुलित उपयोग के चलते खेती में निम्नलिखित समस्या आने लगी है (1) फसलों के लिए पानी की मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है। (2) मृदा कठोर हो रही है। (3) खेतों की जल धारक क्षमता में लगातार गिरावट आ रही है। (4) मृदा और जल में विषाक्तता बढ़ रही है। (5) फसलोपयोगी मित्र जीवों की संख्या में लगातार कमी आ रही है। (6) कृषि उत्पादों में रसायनों की मात्रा वृद्धि से उनमें विषाक्तता और गुणवत्ता विहीनता की स्थिति पैदा हो रही है। (7) कृषि उत्पादों में खनिज तत्व एवं विटामिन घट रहे हैं। (8) भूजल एवं सतही जल सहित सम्पूर्ण पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है। (9) कृषि उत्पादों की लागत कीमत बढ़ रही है। (10) भूमि की उर्वरा शक्ति घट रही है। उपर्युक्त समस्याओं ने स्थिति को इतना विषम बना दिया है कि हम समय रहते नहीं चेते और रासायनिक खादों और कीटनाशकों के प्रयोग को नियंत्रित नहीं किया या उसके उपयोग में अपेक्षित कमी नहीं लाई गई तो संपूर्ण कृषि योग्य भूमि एक समय बांझ हो जाएगी और तब हम उसमें अन्न का एक दाना नहीं पैदा कर पायेंगे, यहां हमें यह जान लेना चाहिए कि हमारी प्राचीन मोहनजोदड़ों सभ्यता के साथ दुनिया कई अन्य प्राचीन सभ्यताओं के विनाश के कारणों में भी मृदा के स्वास्थ्य का बिगड़ना एक कारण था।

स्थिति की गम्भीरता को समझते हुए भारत सरकार ने दसवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि के क्षेत्र में कम लागत और उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादनों के प्राप्ति और दीर्घकालीन स्थाई खेती के लिए जैविक खेती के रूप में बायोटेक, बायोडाइनामिक्स के रूप में एकीकृत नाशी जीव प्रबंधन (आईपीएनएम) केचूआ खाद इत्यादि का प्रोत्साहन देकर स्वच्छ पर्यावरण तथा मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने की प्रविधि पर बल दिया है। इसी प्रकार कृषि नीति में स्वच्छ एवं मुक्त वातावरण से कृषि क्षेत्र में गुणवत्ता युक्त सुधार लाने की भी बात कही गई है। इसी क्रम में उपयुक्त कृषि पद्धतियों का प्रचार–प्रसार कर जिससे भूमि और जल प्रबंधन के साथ ही भूमि की उर्वराशक्ति को दीर्घकाल तक बनाये रखने के लिए जैव उर्वरकों के उपयोग को उत्साहित करने की बात भी कही गई है।

## सरकारी नीति

वर्तमान समय में खेती के लिए सबसे अधिक व्यय रासायनिक खादों पर ही हो रहा है। इसके लिए भारत सरकार द्वारा भारी अनुदान भी दिया जाता रहा है। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि रासायनिक उर्वरकों के मामले में हम पूरी तरह आत्मनिर्भर भी नहीं हैं। हम उर्वरकों के लिए कच्चे माल और तैयार उर्वरक दोनों का ही आयात करते हैं। इन दोनों में ही भारी बहुमूल्य विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है। रासायनिक उर्वरकों के साथ ही देश में कीटनाशकों का उपयोग भी लगातार बढ़ता ही जा रहा है।

विडम्बना यह है कि हमारी सरकार रासायनिक खादों के हानिप्रद प्रभावों को जानते हुए भी वर्तमान बढ़ती जनसंख्या के भोजन के लिए उसके प्रयोग को बढ़ावा दे रही है जो निम्न तालिका से स्पष्ट है।

भारत सरकार प्रति वर्ष कृषकों के रासायनिक खादों पर 15 से 20 हजार करोड़ रुपये की छूट के रूप में सहायता देती है। यही नहीं प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर रासायनिक खादों का उपयोग बढ़ाने का लक्ष्य भी निर्धारित किया जाता है। इस सम्बंध में सरकारी विशेषज्ञों

**भारत में लगातार बढ़ता रासायनिक खादों का उपयोग**

| वर्ष | उपयोग हजार टन में |
|---|---|
| 1951–52 | 69.8 |
| 1960–61 | 293.8 |
| 1970–71 | 2556.6 |
| 1980–81 | 5515.6 |
| 1990–91 | 12546.3 |
| 2000–01 | 16702.3 |

के दोष–मूल्य नीति के चलते यह कहा जा जा रहा है कि देश की बढ़ती आबादी के लिए पर्याप्त अन्न का उत्पादन बिना रासायनिक खादों के नहीं हो सकता।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने सरकारी विशेषज्ञों की इस नकारात्मक सोच को बदलें। हमें रासायनिक खादों के विकल्पों के निर्माण के अलावा उपलब्ध साधनों का प्रचार–प्रसार करना होगा।

### रासायनिक खादों के विकल्प

हमारे कृषि वैज्ञानिकों ने अपने शोध और कठिन परिश्रम के बल पर रासायनिक खादों के अनेक विकल्प प्रस्तुत किये हैं, जिनके उपयोग से मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवों का पोषण और सरंक्षण तो होता ही है, हमारा पर्यावरण भी सुरक्षित रहता है। इन जैविक खादों के उपयोग से प्राप्त परिणामों से भी यह सिद्ध हो चुका है कि इस प्रकार के गैर रासायनिक जैविक खादों के उपयोग से रासायनिक खादों के बराबर उत्पादन लिया जा सकता है, यह तथ्य प्रयोग सिद्ध है।

### रासायनिक उर्वरकों का विकल्प

भारत विश्व का प्राचीनतम् देश है, मानव ने कृषि का आरम्भ इसी क्षेत्र में किया था, जो उत्तरोत्तर विकसित होने के साथ ही विश्व के अन्य भागों में प्रचारित–प्रसारित हुआ। यहां पारम्परिक रूप से जैविक खेती होती रही है, लेकिन अधिक अन्न उपजाने के लालच में हमने कृषि की अपनी प्राचीन मौलिक परम्परा छोड़ रासायनिक खेती को अपनाया, जिसका दुष्परिणाम आज सम्पूर्ण विश्व झेल रहा है। रासायनिक खादों को विकल्प स्वरूप जैविक खादें इस प्रकार है–

- नेपेड कम्पोस्ट खादें,
- सूक्ष्म जैविक खादें,
- बॉयो डायनमिक खादें
- अजोला एवं नील हरित शैवाल
- केंचुए की खाद
- बायो डायनेमिक खादों के सहयोग से बनी आधुनिक खादें
- तरल जैविक खादें

### नेपेड कम्पोस्ट खादें

यह कम से कम गोबर का प्रयोग करके अधिक से अधिक जैविक खाद प्राप्त करने की आधुनिक तकनीक है। इस पद्धति द्वारा एक गाय से पूरे वर्ष मिलने वाले गोबर से 80 से 100 टन (कम से कम 150 गाड़ी) जैविक खाद तैयार हो जाती है, जिसकी कीमत 40,000 रुपये के आस–पास आती है। इस खाद में नाइट्रोजन 0.5 से 1.5 प्रतिशत, फास्फोरस 0.5 से 0.9 प्रतिशत, पोटेशियम 1.2 से 1.4 प्रतिशत तक पाया जाता है।

### विशेषतायें

- एक किलोग्राम गोबर से 30 से 40 किलोग्राम तक उत्तम जीवाणु युक्त नेपेड कम्पोस्ट प्राप्त होती है।
- नेपेड कम्पोस्ट में शत–प्रतिशत गोबर से बनी परम्परागत् जैविक खाद की तुलना में तीन से चार गुना अधिक उर्वरा शक्ति भी होती है।

### सूक्ष्म जैविक खादें

आधुनिक पद्धति बनी सूक्ष्म जैविक खादें वस्तुतः सूक्ष्म जीवों के समूह हैं ये सूक्ष्म जीव वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन को भूमि में पौधों के पोषक तत्व के रूप में प्रतिस्थापित कर देते हैं। नत्रजन स्थाईकरण के अलावा ये सूक्ष्म जीव विभिन्न हारमोन्स, सूक्ष्म तत्व एवं विटामिनों को भी मुक्त करते हैं जिससे पौधों में अधिकाधिक वृद्धि होती है।

### सूक्ष्म जैविक खादों के प्रकार

- सहजीवी नत्रजन स्थिर करने वाली सूक्ष्म जैविक खाद– राइजोवियम एजोस्पीरिल्म आदि।
- स्वतंत्र नत्रजन स्थिर करने वाली सूक्ष्म जैविक खाद–एजेटोबैक्टर आदि।
- फास्फोरस घोलक सूक्ष्म जैविक खाद।
- माइकोराइजा।

### सूक्ष्म जैविक खादों की विशेषतायें

- जैविक खादों के सूक्ष्म जीव मृदाजनित व्याधियों को भी रोकते हैं।
- सूक्ष्म जैविक खादें फसल का उत्पादन 10 से 20 प्रतिशत बढ़ा देती हैं।
- सूक्ष्म जैविक खादों के उपयोग से मृदा में स्थित सूक्ष्म मित्रजीव एवं कीटों की संख्या में वृद्धि होती है।
- फसलों के उत्पादन में सूक्ष्म जैविक खादों के उपयोग से रासायनिक खादों की तुलना में कम व्यय आता है।
- अलग–अलग फसलों के लिए अलग–अलग सूक्ष्म जैविक खादों का उपयोग कर अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है।

### बायो डायनेमिक खादें

आस्ट्रेलिया के चर्चित विचारक एवं वैज्ञानिक डा. रूडाल्फ स्टेनर ने मिट्टी की बनावट एवं पृथ्वी से प्रकृति के सूक्ष्म अन्तःसम्बंधों का गहराई से अध्ययन करने के बाद यह पाया कि मिट्टी, वनस्पति और जीवों पर ब्रह्माण्ड और उसमें उसमें निहित शक्तियों और तत्वों का स्पष्ट प्रभाव है। इसी तथ्य के आधार पर डा. रूडाल्फ स्टेनर ने 'बायो डायनमिक' या 'जीवन उर्जा' नामक एक ऐसी पर्यावरण संरक्षणीय जैविक खेती की पद्धति की खोज की जिससे विभिन्न अपशिष्टों का उपयोग नक्षत्रों की गतिविधि के अनुसार करके कृषि क्रियाओं को निर्धारित कर मिट्टी और उसमें उगाई जाने फसलों के मध्य एक ऐसी प्रभावकारी स्थिति लाई जाती है, जिससे मिट्टी और उसमे उगने वाली फसल दोनो के स्वास्थ्य को अधिकाधिक समृद्ध किया जाता है।

इस आधुनिक विधा के द्वारा अपशिष्टों से तैयार खादों को प्रिपरेशन 500 से 507 का नाम दिया गया जिनका विवरण इस प्रकार है–

**प्रिपरेशन 500** इस खाद के निर्माण में मौलिक प्रजाति की मरी हुई दुधारू गाय की सींग में गाय के ताजे गोबर की भरकर सितम्बर–अक्टूबर के शुक्ल पक्ष में जमीन के अन्दर निर्धारित प्रक्रियाओं को ध्यान में रखते हुए दबा दिया जाता है। मार्च–अप्रैल के महीने में इस सींग को जमीन के अन्दर से निकाल कर सींग में भरी खाद को मिट्टी के बर्तन में रखकर ठंडे स्थान पर सुरक्षित कर लिया जाता हैं। सींग से प्राप्त खाद की 30 से 35 ग्राम मात्रा को 15 लीटर वर्षा के शुद्ध रसायन और जीवाणु रहित पानी में अच्छी तरह एक से डेढ़ घंटे तक घड़ी की सुई की दिशा के उल्टा और पुनः सीधा घुमा कर अच्छी तरह से मिलाने के बाद बने इस घोल को झाडू या

बिना नोडल वाले स्प्रे मशीन से फसल की बुआई के पूर्व छिड़काव कर दिया जाता है, स्प्रे से छिड़काव करने के पूर्व इस बात ध्यान रखा जाता है कि उससे किसी प्रकार की अन्य रासायनिक गतिविधियों का संचालन न हुआ हो, इसके साथ ही यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि सींग में भरा गया गोबर चार–पांच दिन से हरा पौष्टिक आहार खाने वाली स्वस्थ दूध दे रही गाय का ही हो।

**प्रिपरेशन 501** : इस प्रिपरेशन के निर्माण के लिए स्वच्छ बालू को लेकर उसे अच्छी तरह पीस कर कपड़े से छानने के बाद मरी गाय के सींग में भरकर मार्च–अप्रैल के महीने में जमीन में दबा दिया जाता है। सितम्बर–अक्टूबर में इसे जमीन से निकाल कर 30 लीटर शुद्ध जल में मात्र एक ग्राम सींग से प्राप्त खाद प्रिपेरशन 500 की तरह घोल कर व्रीव दबाव वाले स्प्रेयर से सुबह या शाम के समय खड़ी फसल की पत्तियों पर छिड़काव किया जाता है।

**प्रिपरेशन 502** : यह प्रिपरेशन थरों ब्लाज्म (एचीलस मीलिफोलियम) नामक जंगली घास के फूलों से बनायी जाती है। ग्रीष्म ऋतु में इन फूलों को मरे हुए बकरे के पेट में भरने के बाद उसके पेट को सील कर सूरज की रोशनी वाली जगह पर लटका दिया जाता है। शरद ऋतु आने पर इसे जमीन में दबा दिया जाता है। इसे अंधेरे में मिट्टी से बाहर निकाल कर हवा रहित डिब्बे में भर कर रख दिया जाता है। इसकी एक ग्राम मात्रा अन्य बायोडायनामिक के साथ मिलाकर प्रयोग की जाती है, जिससे मिट्टी में पोटाश, नत्रजन और सूक्ष्म पोषक तत्वों की आपूर्ति होती है।

**प्रिपरेशन 503** : इस जैविक खाद या प्रिपरेशन का निर्माण 'मैट्रिकेरिया केमोमिला' नामक पौधे के फूल को मरी हुई गाय की छोटी आंत में भर कर जाड़े के दिनों में मिट्टी में गाड़ने के गाद के पश्चात सड़ने पर होता है। इस प्रिपरेशन प्रोटीन को सड़ने से रोकने के साथ ही कम्पोस्ट निर्माण की प्रक्रिया को गति प्रदान करता है। इसके साथ ही यह प्रिपरेशन से कवकजनित पादप रोगों पर लगाने के अलावा हानिप्रद कवकों को भी नष्ट कर देता है।

**प्रिपरेशन 504** : इस प्रिपरेशन के निर्माण के लिए स्टीगिंग नेटल (यूरिका डायोका), नामक पौधे को तने फूल और पती के साथ भूमि में दबा दिया जाता है। पूरे एक साल तक मिट्टी में दबे रहने पर यह गाढ़े काले रंग का हो जाता है। इस प्रक्रिया से तैयार जैविक खाद खेत में लौह तत्वों की आपूर्ति के साथ ही सल्फर, पोटेशियम, अमोनिया तथा नाइट्रोजन के अनुपात को ठीक रखने का काम करती है।

**प्रिपरेशन 505** : इस प्रिपेरशन के निर्माण के लिए ओक वृक्ष (क्यूरिकस रोबार) छाल को छोटे–छोटे को हड्डी के छोटे टुकड़ों में काटने के बाद पीस कर मृत गाय या भेड़ की खोपड़ी में भर दिया जाता है। पुनः खोपड़ी के छेदों को हड्डी के छोटे टुकड़ों से बन्द करके उसे एक वर्ष तक नम वातावरण में संरक्षित कर दिया जाता है। यह प्रिपरेशन मृदा में कैल्शियम फिक्स करने वाले बैक्टिरिया और एजांइमों के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण करता है, जिससे खेत में इसके प्रयोग के बाद चूने की 1/3 भाग की आपूर्ति से ही काम चल जाता है। यह प्रिपरेशन मृदा के पी. एच. मान को बढ़ाने के साथ ही कवकों पर रोक लगाने का भी काम करता है।

**प्रिपरेशन 506** : इस प्रभावकारी प्रिपरेशन का निर्माण हैण्डीलौन (टेराक्सेकम आफिसनेल) के सूखे फूलों से होता है। इसके फूलों को हल्का सुखा लेने के बाद इसे मृत गाय या भैंस की आंत में लपेट कर शरद ऋतु में मिट्टी में दबा दिया जाता है। पुनः इसे वसंत ऋतु में जमीन से बाहर निकाल कर प्रयोग किया जाता है। इस प्रिपरेशन से मृदा को सीलिसिल्क एसिड पोटेशियम की प्राप्ति होती है।

**प्रिपरेशन 507** : इस प्रभावकारी प्रिपरेशन का निर्माण हैण्डीलौन (टेराक्सेकम आफिसनेल) के सूखे फूलों से होता है। इसके फूलों को हल्का सुखा लेने के बाद इसे मृत या भेस की आंत में लपेट कर शरद ऋतु में मिट्टी में दबा दिया जाता है। पुनः इसे बसन्त ऋतु में जमीन से बाहर निकाल कर प्रयोग किया जाता है। इसे प्रिपरेशन से मृदा को सीलिसिल्क एसिड पौटैशियम की प्राप्ति होती है।

**प्रिपरेशन 507** : इस प्रिपरेशन वेलेरियन (वेलेरिएना अधिसनिएलिस) के सूखे फूलों से तैयार किया जाता है। इस बीच इसे फूलों को कुचलकर कांच के बर्तन में रखकर कुछ दिनों तक धूप में रख दिया जाता है। इस बीच इसे हिलाते–डुलाते रहते हैं। थोड़े समय बाद इन फूलों का रस निचोड़ लिया जाता है। इस द्रव की 5 से 10 मि.ली. मात्रा को एक गैलेन गरम पानी में मिलाकर कम्पोस्ट पर छिड़काव किया जाता है, इसके सीधे भूमि पर छिड़काव भी लाभकारी रहता है। इसके प्रयोग से मृदा में फास्फेट की उपलब्धता तो बढ़ती ही है, फसल पाले से सुरक्षित हो जाती है।

## आधुनिक हरी खादें/नील हरित शैवाल और अजोला

भारतीय कृषक अपने पूवर्जों से प्राप्त परम्परागत खेती में हरी खाद के रूप में सनई दैंचा आदि फसलों को उगाने के बाद उसे खेत में जोत कर भूमि में मिलाकर सड़ा देता है, जिससे खेत की उर्वरा शक्ति में पर्याप्त वृद्धि होती है। आधुनिक युग में वैज्ञानिकों ने इस विधा को थोड़ा आगे बढ़ाकर पानी में पैदा होने वाली नीलहरित शैवाल एवं अजोला जैसी वनस्पतियों का हरी खाद के रूप में उपयोग कर मृदा की उत्पादकता और फसलों का पोषक तत्वों की आपूर्ति का जैविक माध्यम खोजा है।

### केंचुआ खाद

भारत में गांव और खेती से प्राप्त जैव अपशिष्टों के उपयोग से कम्पोस्ट खादों के निर्माण की परम्परा रही है। आधुनिक युग में वैज्ञानिकों ने खेती से प्राप्त पुआल पेड़ों के पत्तों एवं खेती से प्राप्त अन्य अपशिष्टों से आधारित केंचुआ खाद निर्माण की प्रवधि का विकास किया है। इस जैविक खाद निर्माण प्रक्रिया से केचुओं द्वारा कृषि अपशिष्टों और अन्य सड़नशील जैविक पदार्थों का भक्षण कर बिष्ठा के रूप में उच्चस्तरीय पादपीय पोषक तत्वों से युक्त जैविक खाद उपलब्ध करायी जाती है। केचुआ खाद में नत्रजन 1.3 फास्फेट, 0.50 प्रतिशत कार्बन नत्रजन 19 प्रतिशत और साइट्रेक विलयक फास्फेट 0.005 प्रतिशत तक पाया जाता है। केंचुए की खाद रासायनिक खादों का श्रेष्ठतम विकल्प है। एक ओर जहां इसके निर्माण में कृषि अपशिष्टों का प्रयोग होता है, वहीं दूसरी ओर ग्रामीणों को रोजगार और स्वनिर्मित हानिरहित जैविक उर्वरक की प्राप्ति होती है। ग्रामीण केचूआ बेचकर भी आय कर लेते हैं।

## बायोडायनेमिक प्रक्रिया से बनी अन्य खादें

वैज्ञानिकों द्वारा समय की आवश्यकता को ध्यान में रखकर की गई खोजों में

बायोडायनमिक खादों के रूप में सड़नशील कचरे और गोबर पर आधारित ऐसी जैविक खादों का निर्माण किया गया है जिनका प्रयोग कर रासायनिक खादों के समान लेकिन हानिरहित सुरक्षित कृषि उत्पाद प्राप्त किया जा सकता है। इसमें कुछ के विवरण इस प्रकार है–

## कचरे एवं गोबर की आधुनिक खाद

सड़नशील कचरे और गोबर से बनने वाली इस खाद के निर्माण के लिए कचरें और गोबर का 4×2 मीटर क्षेत्रफल में 1.5 मीटर उंची परतदार ढ़ेरी बनाई जाती है। इसमें बायोडायनेमिक प्रिपरेशन संख्या 502 और 506 की अलग–अलग दो–दो ग्राम की मात्रा को 10 मिली वेरियम (507) के 5 प्रतिशत घोल के साथ कचरे और गोबर की ढेरी में 30 से. मी. की गहराई तक किये गये पांच छेदों को बन्द कर दिया जाता है। अच्छी जैविक खाद के निर्माण के लिए ढेरी को अच्छी तरह से नम रखना चाहिए। इस प्रकार कचरे की ढेरी को हर दो माह में उलटते रखना चाहिए। इस प्रकार छः माह में अच्छी जैविक खाद तैयार हो जाती है।

### काऊ पेट पिट

जमीन में एक मीटर लंबा, 60 मीटर चौड़ा तथा 2.5 से.मी गहरा गडढ़ा बनाये, इसकी दीवारों को रसायन रहित लकड़ी के पटरे/ईटों से घेर कर इसमें गाय का ताजा गोबर भर दें। इसके बाद प्रिपरेशन 502–506 को गोबर की सतह पर 20–20 से.मी की दूरी पर अंगूठे से छेद करके डाल दें। साथ ही बेसाल्ट और अण्डे के छिल्के को कूटकर डालना भी लाभकारी रहता है। इस गड्ढ़े को मोटे बोरे से ढककर गड्ढे को नमी बनाये रखा जाता है। इसे उपर से नालीदार सीमेंट की चादर या किसी ऐसी वस्तु से ढक दिया जाता है, जिससे इसमें वर्षा का जल न जा सके। चार से पांच सप्ताह के बाद जब इसे खोला जाता है तब इसमें कोई बदबू नहीं रहती। इस खाद का प्रयोग प्रिपरेशन 500 के साथ मिलाकर किया जाता है।

### तरल जैविक खादे

पशुओं के मल–मूत्र से बनी ये जैविक खादें तरल रूप में होती है, जिनको सिंचाई के पानी के साथ या स्प्रे एवं अन्य साधनों से छिड़क कर खेत और फसल में फैला दिया जाता है। इस प्रकार की खादों का विवरण इस प्रकार है–

### संजीवनी खाद

देशी गाय का 15 किलो ताजा गोबर, 15 किलो गौ मूत्र और 15 किलो सादा पानी को मिलाकर मिट्टी के एक घड़े में डालकर इसमें आधा किलो गुड़ को पानी में घोल कर मिलाने के बाद इस घेंड़े के मुंह को ढककर मिट्टी पुते कपड़े से सील कर देवें। एक हफ्ते के बाद इसे खोल ले। 200 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ जमीन में सिचाई के समय जल के साथ प्रवाहित कर दें। यह द्रव खाद यूरिया का जैविक विकल्प है।

### तरल खाद

एक बड़े ड्रम या मटके में गाय, भैंस, सुअर, मुर्गी और कबूतर आदि के मल–मूत्र मछली, समुद्री वनस्पति और वृक्षों के पत्तों को डालने के बाद पानी से भर दिया जाता है, फिर प्रिपरेशन 502 और 506 की थोड़ी मात्रा मलमल कर कपड़े में बांध कर ड्रम या मटके के पानी में भर दिया जाता है। इसके साथ ही विलेरियम को अलग से घोल कर पानी में डाल देते है। इस घोल को थोड़े–थोड़े समय के अन्तराल पर लकड़ी के डंडे या छड़ से मिलाया जाता है। लगभग एक माह में यह तरल खाद तैयार हो जाती है। इसे 45 लीटर पानी में घोल कर एक हेक्टेयर खेत में छिड़काव किया जा सकता है।

### शोध

रसायनिक खादों के प्रयोग के चलते मिट्टी की बिगड़ती सेहत के मद्देनजर दुनिया भर में रसायनिक खादों के विकल्प के रूप में जैविक खादों पर शोध जारी है, जिसके चलते स्थानीय स्तर पर उपलब्ध जैविक संसाधनों से जैविक खादों की निर्माण जारी है। आज आवश्यकता है कि कृषकों को जैविक खादों की गुणवत्ता और विशेषता से अवगत कराकर उनके उपयोग और निर्माण की प्रविधि के साथ ही उपलब्ध स्थानीय जैविक खादों की गुणवत्ता और विशेषता से अवगत कराकर उनके उपयोग और की प्रवधि के साथ ही उपलब्ध स्थानीय जैविक संसाधनों से जैविक निर्माण और शोध के लिए उत्साहित किया जाये। इसके साथ ही कृषि शोध–केंद्रों, सामाजिक संस्थाओं और शैक्षणिक संस्थाओं के जैविक खादों पर व्यापक शोध कार्यक्रम को बढ़ावा दिये जाने की भी विशेष आवश्यकता है। ❑

**(लेखक स्वतंत्र पत्रकार तथा लोकोत्थान समिति के सचिव हैं।)**

## अनुसूचित जनजाति के बेरोजगारों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्र

जनजातीय कार्य मंत्रालय जनजातीय क्षेत्रों में व्यावसायिक प्रशिक्षण हेतु केंद्रीय क्षेत्रीय योजना चलाता है, जिसके तहत राज्य सरकारों/संघ राज्य प्रशासनों तथा गैर–सरकारी संगठनों को व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्र स्थापित करने और चलाने हेतु शत–प्रतिशत अनुदान दिए जाते हैं। यह योजना राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्रों हेतु वर्ष 1992–93 से चलाई जा रही है। इस योजना के अंतर्गत 1998–से गैर सरकारी संगठनों हेतु अनुदान शुरू किया गया है। प्रत्येक व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्र में उस क्षेत्र की रोजगार संभाव्यता पर आधारित पारम्परिक कौशल में 5 व्यवसाय होते हैं। प्रत्येक व्यवसाय के प्रशिक्षण में 100 प्रशिक्षार्थियों की क्षमता है तथा व्यवसायों में पाठयक्रम पूरे करने की अवधि एक वर्ष है। विगत तीन वर्षों में 119 व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों हेतु सहायता अनुदान जारी किए गए हैं।

इस योजना को दसवीं पंचवर्षीय योजना में आगे जारी रखने हेतु अनुमोदित किया गया है। राज्य/संघ राज्य क्षेत्र से प्राप्त संपूर्ण प्रस्तावों के आधार पर व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्रों को मंजूरी दी जाती है। अतः नए केंद्रों की संख्या पूर्व निर्धारित नहीं है।

प्रत्येक वर्ष प्रस्ताव प्राप्त होना एक सतत प्रक्रिया है। पूर्व वर्ष में स्वीकृत केन्द्रों की वास्तविक प्रगति रिपोर्ट, उपयोगिता प्रमाण–पत्र के साथ सभी अर्थों में संपूर्ण प्रस्ताव प्राप्त होने तथा योजना के अंतर्गत फंड उपलब्ध होने पर सहायता अनुदान जारी किए जाते हैं।

# भोपाल के कोल्हूखेड़ी गांव में जैविक खेती

एक इंसान की लगन, सकारात्मक सोच की दिशा में कुछ अनूठा कर गुजरने की उसकी बेचैनी किस तरह समाज में क्रांति का रचनात्मक आह्वान करने का काम करती है। इसका उदाहरण महाराष्ट्र के यवतमाल जिले के पुसर गांव में रहने वाले नारायण देवराव पंढरीपांडे किसान हैं जिन्होंने जैविक खाद बनाने की ऐसी विधि विकसित की कि ये विधियां उनके नाम से पहचानी जाने लगीं। इस तरह नाडेप (नारायण देवराव पंढरीपांडे के नाम का संक्षिप्तीकरण) विधि चलन में आई। आज देश–भर में कृषि के क्षेत्र में जिस तरह से जैविक खेती को बड़े उत्साह के साथ किसान अपना रहे हैं उनकी प्रेरणा 'नाडेप' अर्थात नारायण देवराव पंढरीपांडे हैं।

किसानों को भी कृषि कार्यों में रासायनिक खाद के बजाय जैविक खाद इस्तेमाल करनी चाहिए। जैविक खाद खेत की उर्वरक शक्ति को बढ़ाती है जिससे उत्पादन बढ़ता है। अभी गुना के निकट बमोरी में कुछ लोगों ने केंचुए से खाद बनाई जिसे उन्होंने तीस लाख रुपये में बेचा है। इसी तरह के कार्य संपूर्ण मध्य प्रदेश में होने चाहिए। प्रदेश के हर जिले के ब्लाकों में तीन–तीन गांवों में जैविक खाद बनाने का काम किया जा रहा है। इसी तरह यदि गोबर का अधिकांश उपयोग गोबर संयंत्र में किया जाए तो इससे न सिर्फ ईंधन की बचत होगी बल्कि अच्छी गुणवत्ता वाली खाद भी प्राप्त होगी। महात्मा गांधी का गांवों को स्वावलंबी बनाने का सपना जैविक खेती से ही पूरा होगा। पिछले काफी समय से प्रदेश की कृषि में व्यावहारिक रूप से चलन में आ चुकी रासायनिक खादों के उपयोग की आदत के विकल्प के रूप में जैविक खाद को तैयार करने और उसके प्रयोगों को लेकर किसानों में एक अलग ही तरह की समझदारी देखी जा रही है। आज हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि किस तरह से हम खाद्यान्नों के उत्पादन को बढ़ा सकें क्योंकि दिन–ब–दिन बढ़ती जनसंख्या के कारण निश्चित रूप से ऐसे प्रयासों को किए जाने की आवश्यकता है ताकि प्राकृतिक संसाधनों को भी नष्ट होने से बचाया जा सके और भावी पीढ़ी को खाद्यान्न को लेकर किसी भी प्रकार की असुरक्षा, कमी या अभाव न रहे। जैविक एवं टिकाऊ कृषि के माध्यम से बिना हवा, पानी, मिट्टी की गुणवत्ता के प्रभावित हुए इस प्रकार का उत्पादन प्राप्त किया जा सकता हैं जो हमें मानवीय पर्यावरण को नष्ट किए बगैर हासिल होगा।

यह तो सभी जानते हैं कि मिट्टी में पाए जाने वाले अनेक सूक्ष्म जीवाणु विभिन्न प्रकार से कृषि का पोषण करते हैं। इन जीवाणुओं का भोजन जीवांश पदार्थ होते हैं। जिस भूमि में जीवांश पदार्थ पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं उसमें सूक्ष्म जीवों द्वारा जीवांश पदार्थों को विघटित करके पौध पोषण किया जाता है। इस तरह जीवांश पदार्थ के माध्यम से प्रमुख पोषक तत्व तो बढ़ते ही हैं साथ ही साथ पौधों की वृद्धि और उत्पादन पर भी प्रभाव पड़ता है। हमारे खेतों में पर्याप्त मात्रा में फसल अवशिष्ट, कार्बनिक अवशिष्ट आदि उपलब्ध हैं जिनके उचित उपयोग से अच्छी गुणवत्ता वाली खाद तैयार करना आसान है। गोबर का ही उपयोग, हम देखते हैं कि कितनी बड़ी मात्रा में ईंधन के रूप में किया जा रहा है और इसी प्रकार मवेशियों को खुला छोड़ देने के कारण भी खाद के लिए गोबर की उपलब्धता प्रभावित हो जाया करती है। ऐसे में हमें चाहिए कि अधिक से अधिक गोबर का उपयोग खाद बनाने के लिए किया जाए। इन सब बातों को ही ध्यान में रखते हुए मध्य प्रदेश में जैविक खेती के जरिए जैविक खाद को प्राप्त करने का एक तरह से मध्य प्रदेश शासन द्वारा एक प्रोत्साहन आंदोलन भी चलाया जा रहा है। इसके अंतर्गत प्रत्येक विकासखंड का एक गांव इस आंदोलन की जागरूकता एवं प्रेरणा के लिए चुना गया है। इस प्रकार कुल 313 जैविक खेती गांव इस कार्यक्रम के लिए चुने गए हैं। इन गांवों में बायोमास एवं गोबर से खाद बनाने हेतु विभिन्न विधियों के प्रचार का व्यापक कार्यक्रम चलाया जा रहा है। यह तो पिछले काफी समय से महसूस किया जा रहा है कि रासायनिक खादों के प्रयोग से खाद्यान्नों और वनस्पतियों का मूल स्वाद प्रभावित हो रहा है। अक्सर हम देखते हैं कि रासायनिक खादों के उपयोग से उपजी सब्जियों में भी नैसर्गिक गुण प्रभावित हो रहे हैं। ऐसे में जैविक खेती के जरिए खाद्यान्नों, वनस्पतियों और सब्जियों के मूलभूत गुणों की जैविक खाद के उपयोग से रक्षा की जा सकती है।

भोपाल से तकरीबन चालीस किलोमीटर दूर फंदा विकासखंड में ग्राम पंचायत सेमरीकला के गांव कोल्हूखेड़ी में जैविक खाद बनाने के लिए जैविक खेती का प्रयोग काफी उत्साह के साथ किया जा रहा है। तकरीबन दो–तीन साल पहले इस गांव में इस प्रयोग की प्रेरणा शासकीय योजनाओं और जानकारों के जरिए पहुंची। इस तरह वहां के किसानों द्वारा जैविक खेती को अपने खेतों के लिए अपनाए जाने की शुरुआत की गई। यहां इस गांव में मुख्य रूप से गेहूं, चने, सोयाबीन आदि की फसल हुआ करती है। पहले यहां पर गन्ना भी काफी मात्रा में हुआ करता था लेकिन पिछले कुछ सालों से जिस तरह से पानी का संकट गहराता गया, वैसे–वैसे गन्ने की खेती भी प्रभावित होने लगी। फिर भी गन्ने की खेती को लेकर यहां के किसानों को निराशा नहीं है। उनका मानना है कि जैसे ही सेमरीकला जलाशय (बांध) बनकर पूरा हो जाएगा उसके बाद यहां लोगों को हाने वाली पानी की परेशानी खत्म हो जाएगी तब फसलें पानी के कारण प्रभावित नहीं हुआ करेंगी। यह उनका ऐसा आशावाद है जिससे ग्रामीणों के उत्साह का पता चलता है। कोल्हूखेड़ी में हो रही जैविक खेती की क्रांति को लेकर ग्रामीणजनों से काफी बातचीत हुई। परिपक्व उम्र के किसानों के साथ–साथ नई पीढ़ी के युवाओं से बात करने पर यह बात सामने आई कि मध्य प्रदेश में जिन–जिन गांवों में जैविक

खेती को व्यवहार में लाया जा रहा है। उससे ग्रामीणजन भी ये जान गए हैं कि अब जैविक एवं टिकाऊ कृषि के इस्तेमाल के जरिए मानवीय पर्यावरण को नष्ट किए बिना ही भविष्य में सबके लिए खाद्य सामग्री प्राप्त की जा सकती है। आजादी के बाद भारत ने कृषि क्षेत्र में प्रगति के लिए पश्चिमी देशों का अनुसरण कर बैल, गोबर तथा गोमूत्र के स्थान पर यंत्रों, रासायनिक खादों, कीटनाशकों आदि का काफी उपयोग किया है। लेकिन किसानों की अब की पीढ़ी रासायनिक खादों के दुष्परिणामों को जितना जानना चाहती है। ऐसे में इस बात के प्रति विश्वास होता है कि भविष्य में जैविक खेती निरंतर प्रोत्साहित होती रहेगी।

गांव कोल्हूखेड़ी में प्रायः हरेक घर में जैविक खेती की यथासंभव कोई न कोई पद्धति अपनाई जा रही है। यह देखकर विस्मय होता है कि किसान खुशियों के साथ अपनाई गई विधियों के बारे में जानकारी देते हैं और पूरी प्रक्रिया समझाते हैं। कई घरों और खेतों में जाने पर ज्ञात हुआ कि वहां विविध तरीकों को अपनाया जा रहा है। जीवामृत खाद के लिए साठ किलो गोबर, दस लीटर गोमूत्र, दो किलो किसी भी दाल का आटा, दो किलो गुड़ और दो किलो दही को मिलाकर दो दिन तक रखने के उपरांत इस मिश्रण को दो सौ लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ कृषि भूमि में डालने से खेत में सूक्ष्म जीवाणुओं और ह्यूमस की वृद्धि होती है। इसी प्रकार फलदार वृक्षों की छतरी के आसपास एक फुट चौड़ी तथा एक फुट गहरी खाई खोदकर उसे कचरे से भरकर जीवामृत से गीला करने से भी बेहतर परिणाम सामने आए हैं। इसी प्रकार देसी गाय के पंद्रह किलो ताजे गोबर, पंद्रह लीटर ताजे गोमूत्र, पंद्रह लीटर पानी, एक पाव गुड़ को अच्छी तरह मिट्टी के घड़े में घोलकर, मटके के मुंह पर कपड़ा या टाट मिट्टी से बांध देने के उपरांत चार छः दिन रखने पर तैयार होने वाली खाद को मटका खाद का नाम दिया गया है। इस खाद में दो सौ लीटर पानी मिलाकर एक एकड़ खेत में बोने के पंद्रह दिन बाद इसका छिड़काव करना चाहिए जिसे सात दिन बाद पुनः दोहराया जाना चाहिए। इस तरीके से हम देखेंगे कि फसल नैसर्गिक ढंग से विकसित हो रही है।

नारायण देवराव पंढरीपांडे ने जैविक खाद बनाने की ऐसी विधि विकसित की है जिसके मुताबिक जमीन में एक टांका बनाया जाता है। टांके को भरने के लिए गोबर, कचरा (बायोमास) और बारीक छनी हुई मिट्टी की आवश्यकता होती है। इस प्रकार इन सबके सहयोग से जीवांश को नब्बे से एक सौ बीस दिन पकाने में वायु संचार प्रक्रिया का उपयोग करते हैं। इस तरह से तैयार खाद में प्रमुख रूप से 0.5 से 1.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.5 से 0.9 प्रतिशत स्फुट एवं 1.2 से 1.4 प्रतिशत पोटाश के अलावा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व भी पाए जाते हैं। नाडेप विधि भी तीन प्रकार से विस्तारित है – पक्के नाडेप, भू नाडेप और टटिया नाडेप। किसान अपनी सहूलियत के मुताबिक ये विधियां अपनाते हैं।

जैविक खाद तैयार करने की एक और पद्धति वर्मी कंपोस्ट को भी किसानों ने काफी उत्साह से अपनाया है। केंचुए को किसानों का मित्र एवं भूमि की आंत कहा जाता है। यह सांद्रीय पदार्थ, ह्यूमस व मिट्टी को एकसार करके जमीन के अंदर अन्य परतों में फैलाता है जिससे जमीन पोली होती है और हवा का आवागमन तथा जलधारण की क्षमता बढ़ जाती है। केंचुए के पेट में रासायनिक क्रिया तथा सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रिया होती है तथा इनके पेट में मिट्टी तथा सांद्रीय पदार्थ अनेक बार अंदर–बाहर आते–जाते हैं जिससे मिट्टी में ह्यूमस की मात्रा बढ़ जाती है तथा यह ह्यूमस केंचुए के माध्यम से मिट्टी के चारों ओर फैलती है। ऐसा पाया गया है कि इस खाद के उपयोग से मिट्टी में नाइट्रोजन सात गुना, फास्फोरस ग्यारह गुना और पोटाश चौदह गुना बढ़ता है। इस खाद को बनाने के लिए फसल का बचा हुआ कूड़ा–कचरा, रसोईघर का बचा हुआ जूठन, पशुओं को गोबर, सब्जियों या फलों के छिलके, पत्तियों का कचरा आदि को एक मीटर लंबे, चौड़े तथा गहरे गड्ढा खोदकर सारी प्रक्रिया की जाती है। प्रारंभ में इन सबके साथ सौ केंचुए डालने होते हैं जिनकी वृद्धि बाद में हो जाती है। इस प्रकार इस प्रक्रिया से तैयार खाद भी बड़ी उपयोगी होती है। सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि ये सारी घरेलू और स्वयं विकसित विधियां धीरे–धीरे एक तरह से कृषि क्रांति के रूप में तब्दील होती जा रही हैं। मध्य प्रदेश के विकासखंडों के तीन सौ तेरह गांवों में इसे अपनाया गया है। महात्मा गांधी का गांवों को स्वावलंबी बनाने के सपने को साकार करने में जैविक खेती एक बढ़ी भूमिका निभा सकती है। बशर्ते कृषक पीढ़ी इसे और अधिक रुचि और लगन से अपनाए। ❑

## अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास हेतु योजनाएं

अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना और अनुसूचित जनजातियों के लिए जनजातीय उप योजना की कार्यनीति बनाई गई हैं जिनका उद्देश्य भूमि सुधार, कृषि पशुपालन, ग्रामीण एवं लघु उद्योग, लघु व्यवसाय आदि कार्यक्रमों के माध्यम से इन समुदायों का सामाजिक–आर्थिक विकास सुनिश्चित करना है। विशेष संघटक योजना एवं जनजातीय उपयोजना को कार्यान्वित कर रहे राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों को विशेष सहायता प्रदान की जाती है जो इन समूहों के आर्थिक विकास कार्यक्रमों पर अतिरिक्त बल देने के लिए होती है। इनके अतिरिक्त आय सर्जक क्रियाकलापों के वित्त पोषण के लिए तीन राष्ट्रीय वित्त एवं विकास निगम अनुसूचित जातियों के लिए राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं विकास निगम, अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम तथा सफाई कर्मचारियों के लिए राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त और विकास निगम तथा सफाई कर्मचारियों के लिए राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त एवं विकास निगम गठित किए गए हैं। अनुसूचित जाति विकास निगमों और अनुसूचित जनजाति विकास निगमों की सहायता के लिए केंद्रीय प्रायोजित योजनाएं, अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास के लिए 49 प्रतिशत का शेयर पूंजी अंशदान करती है। योग्य अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति परिवारों की पहचान करना और उन्हें आर्थिक विकास के लिए परियोजनाएं शुरू करने के वास्ते प्रेरित करना, इन निगमों के मुख्य कार्यकलापों में शामिल हैं।

# परंपरागत बीज बचाना जरूरी

लगभग तीन–चार दशकों से विश्व के अधिकांश देशों के कृषि क्षेत्र में एक विकट समस्या उभरी है। यह है विभिन्न फसलों की बहुत सी परंपरागत प्रजातियों का लुप्त होना। कई देशों में यह देखा गया है कि बहुत सी फसलों की प्रजातियां जो किसानों के पास पीढ़ी दर पीढ़ी सैकड़ों वर्षों से सुरक्षित थीं वह कुछ दशकों में ही खेतों से गायब होने लगीं।

इसकी मुख्य वजह यह थी कि किसानों को विभिन्न फसलों की ऐसी नई किस्में उपलब्ध हो रही थीं। जिनमें रसायनिक खाद व कीटनाशकों का उपयोग कर फसलों की अधिक उत्पादकता प्राप्त की जा सकती थी। जैसे–जैसे जल्दबाजी में यह नई फसलें खेंतों में पहुंची, वैसे–वैसे बहुत सी परंपरागत किस्मों के लुप्त होने की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। किसान परिवारों की नई पीढ़ी को प्रायः परंपरागत बीजों के बारे में जानकारी नहीं थी।

यह प्रवृत्ति विश्व कृषि व खाद्य सुरक्षा के लिए बहुत चिंताजनक है क्योंकि किसानों के पास जो जैव विविधता हजारों वर्षों से सुरक्षित रही है वह कृषि के बहुमुखी व टिकाऊ विकास के लिए बहुत जरूरी है। इन परंपरागत फसलों में ऐसे कई गुण थे जो हमारे देश में व विश्व स्तर पर खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के बहुत महत्वपूर्ण हैं।

भारत में धान की हजारों परंपरागत किस्में मौजूद रही हैं। कृषि वैज्ञानिक डा. रिछारिया ने स्वयं धान की लगभग 17000 किस्मों व उप किस्मों को उनके गुण सहित सूचीबद्ध किया था। गेहूं की भी सैकड़ों किस्में मौजूद रही हैं। इसी तरह विभिन्न अन्य फसलें विशेषकर मोटे अनाजों की विविध किस्में भी खेतों में सैकड़ों वर्षों से उपलब्ध रहीं हैं। हमारे देश की जलवायु जैव–विविधता के पनपने के अनुकूल है। हमारे देश में कृषि का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है और किसानों के पास जो समुद्र ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहा। उसने खेतों में फसलों की बेहतर समृद्ध जैव विविधता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इसका लाभ यह मिलता रहा कि अलग–अलग तरह की भूमि व मिट्टी के लिए उसके अनुकूल बीज उपलब्ध हो जाते थे। चूंकि किसी भी गांव के खेतों में कई विविध किस्मों की फसल बोई जाती थीं। अतः किसी एक बीमारी या कीट में फैलने पर पूरी फसल क्षतिग्रस्त नहीं होती थी। यदि मौसम प्रतिकूल हुआ तो उसके अनुकूल फसल की किस्मों या बीजों में बदलाव कर फसल को बचाया जा सकता था। उदाहरण के लिए जिस वर्ष सूखे की स्थिति चल रही है उस वर्ष ऐसे बीज बोना जिसमें सूखा सहने की क्षमता हो या कम पानी में पनपने की क्षमता हो।

इसके अतिरिक्त किसी फसल की विभिन्न किस्में अपने अलग–अलग खाद्य गुणों के लिए जानी जाती थी। उदाहरण के लिए चावल की विभिन्न किस्में अपने विशिष्ट स्वाद व सुगंध के लिए मशहूर रही हैं। चांवल की कोई किस्म खीर बनाने के लिए सबसे उपयुक्त थी, कोई चिदवदा (पौद्य) बनाने के लिए तो कोई मुरमुरा (मूढ़ी) बनाने के लिए। भारत में परम्परागत चावल की ऐसी किस्में भी उपलब्ध रही हैं जो रासायनिक खाद व कीटनाशकों के बिना ही आज की उत्पादकता के बराबर या उससे अधिक उत्पादकता देने के सक्षम थीं, पर ऐसी किस्में कुछ तरह की भूमि या मिट्टी के लिए ही उपयुक्त मानी गई थीं।

इन परंपरागत किस्मों के लुप्त होने से निश्चय ही हमारे जीवन का बहुत सा स्वाद व सुगंध हमसे छिन गया। पर खाद्य सुरक्षा की जो क्षति हुई वह इससे कहीं अधिक गंभीर व व्यापक है। परंपरागत किस्मों के लुप्त होन का एक अर्थ यह है कि विविध तरह के बीजों में जो बीमारियों व हानिकारक कीटों के विरुद्ध प्रतिरोधक शक्ति थी, वह अब उपलब्ध नहीं रही। इन फसलों के लुप्त होने का एक अन्य अर्थ यह है कि बाढ़, सूखे या दलदलीकरण जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों में जो बीज पनप सकते हैं वे बीज उपलब्ध नहीं रहे।

अब विश्व में जलवायु बदलाव के संकट के साथ मौसम का तरह–तरह का अप्रत्याशित व्यवहार देखा जा रहा है। इस स्थिति में तो परंपरागत बीजों द्वारा उपलब्ध करवाई गई जैव विविधता और भी आवश्यक है।

इस संदर्भ में कभी–कभी यह कहा जाता है कि स्थिति इतनी चिन्ताजनक नहीं है क्योंकि बहुत से परंपरागत बीज जो किसानों के खेतों में लुप्त हो गए हों, किंतु उन्हें वैज्ञानिको ने अनेक 'जीन–बैकों में बचा कर रखा है ताकि आवश्यकता पड़ने पर इनका उपयोग हो सके। इनमें से कुछ जीन बैंक भारत सहित विभिन्न देशों की सरकारों ने अपने स्तर पर स्थापित किए हैं।

दूसरी ओर अन्य विशेषज्ञों ने याद दिलाया है कि करोड़ों किसानों के खेतों में जितनी जैव विविधता सुरक्षित रह सकती है, थोड़े से जीन बैंकों में उसका बहुत कम हिस्सा ही सुरक्षित रखा जा सकता है। एक छोटे से स्थान पर बहुत सी किस्में एकत्र कर ली जाएं तो किसी दुर्घटना या लापरवाही से क्षतिग्रस्त होने की संभावना भी रहती है। वैसे भी खेतों में प्राकृतिक माहौल में जैव विविधता को जो सुरक्षा मिल सकती है, उसकी बराबरी जीन बैंक कभी नहीं कर सकते हैं।

अतः खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से सबसे कारगर उपाय यही है कि किसानों के खेतों में ही जैव विविधता को सुरक्षित रखा जाए। हमारे पूर्वज को तो इस बारे में बहुत गहरी जानकारी थी, पर किसानों की नए पीढ़ी को नए सिरे से परंपरागत बीजों की सुरक्षा के लिए सचेत करने के लिए एक विशेष अभियान चलाने की आवश्यकता है इस समय भी आस–पास के जिन गांवों से विभिन्न किस्मों के परंपरागत बीज मिल सकते हैं, उन्हें लाकर अपने खेतों में सुरक्षित रखना चाहिए। उसके लिए जरूरी है कि बीज बचाने, रखने और आपस में बांटने का किसानों का हक सदा के लिए सुनिश्चित रहे। साथ ही किसानों को परंपरागत बीज बचा कर रखने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु सरकार को उन्हें सहायता भी देनी चाहिए। इस सार्थक कार्य में विभिन्न संगठनों, महिला व युवा संगठनों स्कूलों व कालेजों तथा स्वैच्छिक संस्थाओं की भी भूमिका हो सकती है। ❑

**(भारत डोगरा, साभार : पत्र सूचना कार्यालय)**

## कृषि

पौधों की किस्मों की सुरक्षा और किसानों के अधिकारों के लिए प्राधिकरण का गठन। इसका मकसद विश्व व्यापार समझौते व बौद्धिक संपदा के अधिकार के तहत व्यापार संबंधित कानून के अंतर्गत नए किस्म के पौधों के अनुसंधान और विकास के लिए विनियोग को बढ़ाने के अलावा बीज उद्योग को गति देना है जिससे किसानों को उन्नत किस्म के बीज आसानी से सुलभ हो सकें। (2.9.2004)

# ग्रामीण क्षेत्र

## पेयजल आपूर्ति की समस्या और समाधान

डा. दशमन्त दास पटेल

जल जीवन की अनिवार्यता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि अधिकतर आदि सभ्यताएं विभिन्न नदी–घाटियों में जन्मी और फली–फूली हैं। अनेक महत्वपूर्ण नगर, नदी, झील, तालाब आदि किसी न किसी जल स्रोत के किनारे ही बसे हैं, लेकिन जल के स्रोत अन्नत नहीं है पृथ्वी पर उपलब्ध कुल पानी का केवल 0.3 प्रतिशत भाग ही साफ और शुद्ध होता है। प्रगति की दौड़ में अधिक से अधिक पानी के उपयोग की होड़ सी लगी है। आधुनिक शहरी परिवार प्राचीन खेतिहर परिवार की तुलना में छ : गुना अधिक पानी खर्च कर रहा है।

विकसित देशों में पेयजल सहज उपलब्ध हो जाता है परन्तु विकासशील एवं निर्धन देश के निवासियों को पेयजल प्राप्त करने के लिए काफी संघर्ष करना पड़ता है। अधिकांश जनसंख्या को पीने के लिए दूषित पानी भी नही मिल पाता, जिसका परिणाम यह होता है कि गरीब देशों की 80 प्रतिशत बीमारियां अशुद्ध पेयजल और गंदगी के कारण होती हैं। लगभग 1.5 अरब व्यक्ति शुद्ध पेयजल की सुविधा से वंचित हैं। प्रतिदिन लगभग 35 हजार व्यक्ति अतिसार रोगों का शिकार बनते हैं।

भारत में जल प्रदूषण की समस्या इतनी गंभीर तो नहीं है, लेकिन स्थिति यहां भी दिन–प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। केंद्रीय जल प्रदूषण निवारण और नियंत्रण मण्डल नई दिल्ली की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार देश में 142 प्रथम श्रेणी के नगरों से प्रतिदिन 70,06,740 किलोमीटर सीवेज निकलता है। शहर ही क्यों, हमारे गांव भी प्रदूषण के मामले में पीछे नहीं है, अंतर केवल इतना है कि गांवों में पेयजल की कमी, मल प्रवाह, सफाई और चिकित्सा व्यवस्था के अभाव तथा सामाजिक एवं आर्थिक कारणों से प्रदूषण फैलता है। हमारे देश की अधिकांश ग्रामीण जनता खुले कुओं, पोखरों, तालाबों झीलों या नदी–नालों का पानी पीती है, जो प्रायः प्रदूषित होता है।

### पेयजल समस्याग्रस्त क्षेत्र

पेयजल समस्याग्रस्त क्षेत्र उसे माना जाता है जहां–

- भूमिगत जल का स्तर लगभग 15 मीटर से नीचे है।
- मोटर से चलने वाले पंपसेटों के लिए बिजली का ग्रिड उपलब्ध नहीं है।
- ऐसे गांव, जहां 1.6 किलोमीटर के अंदर पेयजल के सुनिश्चित स्रोत नहीं है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त ऐसे गांव भी पेयजल समस्याग्रस्त क्षेत्र के अंतर्गत शामिल किए जाते हैं, जहां उपलब्ध जल में लवण, लौह, फ्लोराइड एवं कुछ विषैले तत्व अधिक मात्रा में उपस्थित हैं अथवा जहां हैजा एवं अन्य जल से उत्पन्न बीमारियां महामारी के रूप में फैलती है।

### पेयजल आपूर्ति एवं स्वच्छता दशक

1980 में विश्व में लगभग दो अरब व्यक्ति स्वच्छ जल से वंचित थे। इस बात को दृष्टिगत रखते हुए संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 1981 से 1990 को अंतर्राष्ट्रीय पेयजल आपूर्ति व स्वच्छता दशक घोषित किया। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, विश्व स्वास्थ्य कार्यक्रम, यूनीसेफ और विश्व बैंक ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पेयजल आपूर्ति व स्वच्छता दशक में नेतृत्व की भूमिका निभाई थी तथा लगभग 40 देशों में पेयजल कार्यक्रम चलाया गया। इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं– बेनिन, कोंगो, घाना, गिनी, माली, नाइजीरिया, सेनेगल, केमरून जैरे, बोत्सवाना, कीनिया, मलवी, सूडान, तंजानिया, युगांडा, जाम्बिया, जिम्बावे, अफ्रीका, चीन, थाइलैण्ड, इंडोनिशिया व फिलीपीन्स पूर्वी एशिया, भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका व नेपाल दक्षिण एशिया, बालिविया, मैक्सिको और पेरू (लैटिन अमेरीका)।

अंतर्राष्ट्रीय पेयजल दशक समाप्त हो जाने के बावजूद अभी भी अधिकांश व्यक्ति पेयजल की सुविधा के अभाव में नारकीय जीवन जीने को विवश हैं। विश्व की 8 अरब से अधिक जनसंख्या में से 2.5 अरब लोग अब भी स्वच्छ पेयजल से वंचित है। इस दशक के दौरान मात्र 20 प्रतिशत लोगों को और स्वच्छ पेयजल की सुविधा दी गई।

### भारत में पेयजल प्राप्ति के प्रयास

पहले अकाल आयोग ने नाजुक क्षेत्र में सिंचाई के विकास में राज्य द्वारा पहल किए जाने पर बल दिया था। 1897–98 और 1899–1900 के अकाल के बाद 1901 में पहला सिंचाई आयोग गठित किया गया। बंगाल के 1943 के अकाल के बाद सन् 1945 में केंद्रीय जल मार्ग, सिंचाई और नौवहन आयोग बनाया गया जो बाद में केंद्रीय जल और ऊर्जा आयोग में बदल गया। वर्तमान में इसे केंद्रीय जल आयोग कहा जाता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति का प्रबंधन राज्यों का दायित्व है। 1951 में प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही राज्यों के बजट में पेयजल पर ध्यान दिया गया। सन् 1952 में अधिक अन्न उपजाओ जांच समिति की सिफारिश पर लघु सिंचाई योजनाओं को चलाने और मौजूदा कुंओं तथा जलाशयों को ठीक करने पर बल दिया गया।

1954 में राष्ट्रीय पेयजल तथा स्वच्छता कार्यक्रम आरम्भ किया गया, परन्तु यह देखा गया कि केवल आसान पहुंच वाले राज्यों में ही पेयजल कार्यक्रम का लाभ पहुंचा। अतः

केंद्रीय सरकार को अनुरोध करना पड़ा कि प्रत्येक राज्य पेयजल समस्याग्रस्त गावों का पता लगाए तथा समस्या का तत्काल हाल खोजे। इस हेतु चौथी पंचवर्षीय योजना में विश्व जांच पड़ताल प्रभाग स्थापित करने के लिए राज्यों की सहायता की गई।

सन् 1972–73 में त्वरित ग्रामीण "जल आपूर्ति कार्यक्रम" आरम्भ किया गया जो पांचवीं योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम को शुरू करते ही 1974–75 वापस ले लिया गया। इस कार्यक्रम को 1977–78 में पुनः चालू किया गया। 1977 में संयुक्त राष्ट्र जल सम्मेलन ने पहली बार पेयजल तथा स्वच्छता के विषय को अन्य जल मुद्दों से अलग किया। छठी योजना के शुरू तक लगभग 1.92 लाख गांवों में पेयजल उपलब्ध कराया गया था। सातवीं योजना में 1.62 लाख समस्याग्रस्त गांवों में पेयजल उपलब्ध कराये जाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

ग्रामीण जनता को पेयजल उपलब्ध कराए जाने के लिए 1986 में "राष्ट्रीय पेयजल मिशन" शुरू किया गया। सातवीं योजना में त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम के अंतर्गत 201.22 करोड़ रुपए राष्ट्रीय पेयजल मिशन के अंतर्गत 150 करोड़ रुपए व राज्य क्षेत्र के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत 2253.25 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया। इन तीनों कार्यक्रमों का उद्देश्य 1995 तक देश के सभी गांवों में पीने के पानी की व्यवस्था करके पेयजल तथा स्वच्छता के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय मानकों को प्राप्त करने का लक्ष्य पूरा करना था। सातवीं योजना में शेष सभी 1,62,000 गांवों में पेयजल आपूर्ति का लक्ष्य था, किंतु लगभग 1.54 लाख समस्याग्रस्त गांव ही इस समस्या से मुक्त किए जाने हेतु शेष रह गए। 1995–96 में 5295 गांवों में पेयजल आपूर्ति सुनिश्चित करने का लक्ष्य था।

सातवीं योजना में देश के दुर्गम भागों में पेयजल उपलब्ध कराने हेतु विभिन्न क्षेत्रों में 55 मिनी मिशन परियोजनाएं प्रारंभ की गई हैं, जिनसे समन्वित वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी तरीकों से लाभ उठाया जा सके। ये निम्नलिखित हैं– खारेपन पर नियंत्रण, फ्लोरोसिस पर नियंत्रण, अधिक लौह को दूर करना, गिनीकृमि का दूर करना, वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी तरीकों से जल स्रोत का पता लगाना, जल संरक्षण और भूमिगत जल की सम्पूर्ति, जल गुणवत्ता की निगरानी, जल का शुद्धिकरण, रखरखाव के तरीकों में सुधार, जन जागरूकता अभियान आदि। पेयजल आपूर्ति कार्यक्रम केवल समस्याग्रस्त गांवों में पानी पहुंचाने तक ही सीमित नही है। गांवों में पेयजल उपलब्ध कराने के बाद 40 लिटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन में वृद्धि करके 70 लिटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन करने की योजना है। साथ ही साथ वर्तमान के 250–300 व्यक्तियों पर एक जल स्रोत हैंडपंप या स्टैंड पोस्ट के साथ नलकूप की स्थिति में सुधार के 150 लोगों की जनसंख्या पर एक जल स्रोत की व्यवस्था करने का प्रस्ताव है। इस कार्य में उन क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जा रही है, जहां अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की जनसंख्या अधिक है।

## समाधान हेतु कुछ सुझाव

भारत के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में फैली इस विश्वव्यापी समस्या का हल करने के लिए यदि निम्नलिखित सुझावों पर अमल किया जाता है तो काफी हद तक इस समस्या पर नियंत्रण किया जा सकता है।

- अनुमान है कि 30–35 प्रतिशत जल भाप बनकर उड़ जाता है। इसे रोकने के प्रयत्न किये जाने चाहिए।
- 30–40 प्रतिशत पानी टूटे–फूटे और पुराने नलों से रिस–रिसकर और बहकर व्यर्थ चला जाता है। कुशल प्रबंध द्वारा इस हानि को रोका जा सकता है।
- मुख्य रूप से महिलाओं का ही यह दायित्व होता है कि वह परिवार के पेयजल की स्वच्छता सुनिश्चित करें अतः महिलाओं को जल आपूर्ति और स्वच्छता के प्रबंध में प्राथमिकता देनी चाहिए। पानी और स्वच्छता के विषय में चेतना पैदा करने में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।
- पेयजल की आपूर्ति एवं स्वच्छता के तकनीकी ज्ञान को अधिकारियों के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाना आवश्यक है।
- कुएं, नल व हैण्डपंप के माध्यम से स्वच्छ पानी उपभोक्ता तक पहुंचाना आवश्यक है। पानी लाने, भंडारण करने और उपभोग करने की प्रक्रिया किस प्रकार की उचित है, यह ज्ञान प्रत्येक उपभोक्ता तक पहुंचाना चाहिए।
- नगरों और गांवों में जल आपूर्ति के साथ–साथ मल–प्रवाह की भी प्रर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए।
- कोई भी नया उद्योग लगाते समय साथ–साथ ही उपचार संयंत्र लगाए जाएं जिससे पानी में अवशिष्टों की ऐसी निश्चित मात्रा ही जा जा सके जो हानिकारक न हो।
- हैण्डपंपों की उचित देखभाल करने के लिए तकनीकी ज्ञान की जानकारी का विस्तार किया जाना आवश्यक है। घरों में पानी रखने के लिए ऐसे बर्तनों का उपयोग किया जाना चाहिए जिनसे पानी सुरक्षित रहे तथा गंदे हाथ न लगें। नदियो के तली में कूड़ा जमा होने के कारणों से पेयजल का अभाव बढता जा रहा है। अतः अधिक मात्रा में वनरोपण किया जाना चाहिए, जिससे ऋतुचक्र समयानुकूल चलता रहे।
- कृषि के विकास में सिंचाई की भूमिका तथा हरित क्रांति के दौरान भू–जल के अंधाधुंध दोहन से भूमिगत जल स्तर में गिरावट आई। इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि जो पानी कारखानों तथा मल प्रवाह द्वारा दूषित हो जाता है, उसके पुनर्शोधन की व्यवस्था प्रत्येक क्षेत्र में की जाए।
- जल उपयोग तथा प्रबंध समुदाय के सामाजिक ढांचे से जुड़ा है इसलिए तकनीकी और सामाजिक पक्षों के बीच तालमेल होना आवश्यक है।
- पेयजल की आपूर्ति के साथ–साथ यह भी नितांत आवश्यक है कि आम जनता, जो जल का उपयोग कर रही हैं। यह जानकारी दे कि जल अमूल्य एवं नैसर्गिक सम्पति है, जिससे वह इसका किफायती उपयोग कर सके।
- इस प्रकार जल के उचित संरक्षण, कुशल प्रबंध एवं किफायती उपयोग से ही पेयजल की विकट समस्या का हल संभव है अन्यथा वह दिन दूर नहीं, जब पानी की बूंद तेल की बूंद से अधिक महंगी हो जाएगी। इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि वैज्ञानिक विधि पर आधारित बहुपक्षीय रणनीति विकसित करने में आम व्यक्तियों के प्रयत्नों को बढ़ावा दिया जाए और इस कार्य में संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों, सरकार और स्वैच्छिक संस्थाओं का सहयोग प्राप्त किया जाए। ❑

**(लेखक नवयुग कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) में सहायक प्रवक्ता हैं।)**

# रहिमन पानी राखिए

डा. रवीन्द्र अग्रवाल

'रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून' यह रहीम की एक काव्योक्ति मात्र नहीं है बल्कि पानी के संकट और पानी के संरक्षण के संबंध में लगभग सवा चार सौ वर्ष पूर्व दी गयी एक चेतावनी थी। पानी को लेकर आए दिन हो रहे विवादों के संदर्भ में इस चेतावनी की प्रासंगिकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यह उस समय की जरूरतों और पानी के संकट की गहराई से अनुभूति का ही प्रतिफल है कि पूरे देश में, स्थानीय आवश्यकता के अनुरूप, जल संरक्षण के उपाय किए जाते रहे हैं। राजस्थान में यद्यपि वर्षा बहुत कम होती है फिर भी जितना पानी बरसता था उसे संचित करने के उपाय गांव–गांव में किए जाते थे। बरसात का यह संचित पानी ही आम आदमी की जरूरतों को पूरा करता था।

वर्षा जल को संचित करने और पूरे वर्ष उससे खेतों की सिंचाई करने के लिए बनाए जाने वाले तालाब और पोखरों की परम्परा कई जगह अभी भी प्रचलन में है। हालांकि औद्योगिक क्रांति के बाद, जीवन शैली के प्रति सोच में आए बदलावों ने इन परम्परागत जल स्रोतों के प्रति उपेक्षा का रुख ही अपनाया।

एक ओर जलसंरक्षण उपायों के प्रति उपेक्षा और दूसरी तरफ बदलती जीवन शैली और जनसंख्या की वजह से पानी की बढ़ती आवश्यकता के कारण जल संकट के बादल रोज गहराते जा रहे हैं। केन्द्र सरकार के एक अनुमान के अनुसार 2010 तक देश में पानी की आवश्यकता 694 से 710 घन कि.मी., 2025 तक 784 से 850 घन कि.मी. और 2050 तक 973 से 1180 घन कि.मी. होगी। पानी की उपलब्धता की दृष्टि से देखें तो देश में इस समय उपयोग में आ सकने योग्य पानी 690 घन कि.मी. है। स्पष्ट है कि पानी की उपलब्धता और आवश्यकता में दिनों दिन खाई बढ़ती जा रही है।

यदि इस खाई को पाटने के अभी से समुचित उपाय नहीं किए गए तो कृषि, पशुपालन, औद्योगिक व पेयजल आवश्यकता के लिए पानी उपलब्ध नहीं हो सकेगा। तब कैसा होगा जीवन? इस संबंध में कविवर रहीम ने तो सवा चार सौ साल पहले ही "बिन पानी सब सून" कहकर चेतावनी दे दी थी। रहीम की विशिष्टता यह कि उन्होंने चेतावनी देने से पहले "रहिमन पानी राखिए" कह कर संकट के समाधान का उपाय भी बता दिया था। पानी संभाल कर रखने का यह मूल मंत्र आज जन–जीवन का ध्येयमंत्र बनता जा रहा है।

केन्द्रीय वित्त मंत्री पी.चिदम्बरम ने इस वर्ष के अपने बजट भाषण में परम्परागत जल निकायों के जीर्णोद्वार पर विशेष बल दिया। उन्होंने चालू वर्ष के दौरान कम से कम पांच जिलों में प्रायोगिक तौर पर ऐसे जल निकायों की मरम्मत, नवीकरण तथा पुनः स्थापना किए जाने की घोषणा की। उन्होंने आश्वासन दिया कि इस परियोजना के कार्यान्वयन के लिए धन से संबंधित कोई बाधा नहीं आएगी। इसके साथ ही वित्त मंत्री ने राष्ट्रव्यापी जलसंचयन योजना शुरू करने की भी घोषणा की है। इस योजना के अन्तर्गत एक लाख सिंचाई यूनिटें बनाए जाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय के अन्तर्गत वाटरशेड कार्यक्रम के तहत जल संचयन योजना पर पहले ही काम चल रहा है। जल संचयन के लिए संचालित की जा रही विविध योजनाओं से यह बात रेखांकित होती है कि गांव का पानी गांव में और खेत का पानी खेत में पर अमल कर जल संकट से मुक्ति पाई जा सकती है।

जल संचयन के परम्परागत उपायों के साथ ही नदियों पर बांध बनाकर और नलकूप व कुओं द्वारा जल का पुनर्भरण कर वर्षा जल संचित किया जा सकता है। नदी पर बांध बना कर जन सामान्य को सूखे से राहत दिलाने का एक उदाहरण मेवाड़ में गोमती नदी पर बना राजसमन्द है। लगभग सवा तीन सौ साल पूर्व बना यह राजसमन्द आज भी क्षेत्र की पानी की मांग को पूरा करता है। मेवाड़ के महाराणा राजसिंह ने 1660 में बड़े भयंकर सूखे से राज्य को मुक्ति दिलाने के लिए राजसमन्द का निर्माण करवाया, जो 15 वर्ष में बनकर तैयार हुआ था। तबसे राजसमन्द सूखा राहत और जलसंचय का अनुपम उदाहरण है।

नदियों पर छोटे बांध बनाकर जलसंचय के प्रयास पिछले कुछ वर्षों से पूरे देश में किए जा रहे हैं। इस दृष्टि से गुजरात सबसे अग्रणी कहा जा सकता है। गुजरात में बने इन रोक बांधों (चैक डैम) से एक प्रकार से जलक्रांति आ गई है। भूमिगत जलस्तर में सुधार हुआ है और कृषि उत्पादन में भी वृद्धि हुई है।

महाराष्ट्र के जलगांव व अमरावती जिलों में बने परित्रवण तालाबों से जल स्तर में 10 मीटर से अधिक की वृद्धि हुई और खेतों को सिंचाई के लिए पानी मिला। कर्नाटक के कोलार जिले में चेक–डैम और तालाबों के निर्माण से फसलों की पैदावार में 150 से 200 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। मध्य प्रदेश के झाबुआ जिले में एक हजार से अधिक रोक बांध बनाए गए, जिससे पानी की समस्या का समाधान हुआ और फसल उत्पादन में वृद्धि से किसानों का लाभ बढ़ा।

राजस्थान में तरुण भारत संघ द्वारा किया गया कार्य तो सर्वविदित है, जिसके प्रयासों से सूखी हुई नदियों में भी बारह महीने पानी रहने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि जिन गांवों से वर्षों से पलायन हो रहा था उन गांवों में अब लोग वापस आकर खेती करने लगे हैं।

चैक डैम और तालाब व जोहड़ बनाकर ग्रामीण क्षेत्रों में ही जल संचयन किया जा सकता है। यह प्रक्रिया शहरी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं कही जा सकती जबकि शहरी क्षेत्रों में भी जलसंचय की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी ग्रामीण क्षेत्र में। शहरी क्षेत्रों में आवासीय व औद्योगिक जरूरतों की पूर्ति के लिए भूमिगत जल के दोहन से जलस्तर काफी नीचे चला गया। इस जलस्तर को सुधारने का एकमात्र उपाय वर्षा जल का संचयन ही है। यह जलसंचयन नलकूप और कुओं से पुनर्भरण द्वारा किया जा सकता है। शहरी क्षेत्रों में पुनर्भरण की कितनी क्षमता है इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि दिल्ली में 100 वर्ग मीटर आकार की छत पर एक वर्ष में 65 हजार लीटर वर्षा जल एकत्र किया जा सकता है। इस जल से चार सदस्यों वाले एक परिवार की पेयजल और घरेलू जल आवश्यकताएं 160 दिन तक पूरी की जा सकती हैं। दिल्ली में जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, और आई.आई.टी परिसर में वर्षा जल पुनर्भरण के लिए किए गए उपायों के सार्थक परिणाम सामने आए हैं।

वर्षा जल संचयन और पुनर्भरण का उद्देश्य जहां भूमिगत जलस्तर को सुधार कर पानी की उपलब्धता बढ़ाना है, वहीं इससे जल की गुणवत्ता में सुधार होता है और पर्यावरण पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। भूमिगत जल स्तर में वृद्धि से भूमिजल दोहन में प्रति नलकूप ऊर्जा की भी बचत होती है। भूजल स्तर में एक मीटर की वृद्धि से लगभग 0.40 किलोवाट बिजली की बचत होती है। इस प्रकार एक पम्प को वर्षभर दस घंटे रोज चलाने पर लगभग 1460 किलोवाट बिजली की बचत होती है। इससे स्पष्ट है कि भूजल स्तर में सुधार के विविध आयामी लाभ हैं।

वर्षा जल संरक्षण का लाभ इस तथ्य से भली प्रकार समझा जा सकता है कि चेरापूंजी में, जहां विश्व में सर्वाधिक पानी बरसता है, वहां लोगों को पेयजल लाने के लिए कई किलोमीटर चलना पड़ता है, जबकि राजस्थान में रूपारेल नदी के आसपास स्थिति भिन्न है। राजस्थान में यद्यपि बहुत कम पानी बरसता है, परन्तु जल संरक्षण सुझावों के फलस्वरूप यहां पानी का संकट नहीं है।

जल संरक्षण केवल वर्षा जल का संचय ही नहीं बल्कि जल का सदुपयोग और मित्तव्ययता से जल का उपयोग भी है। यह कार्य हम सब कर सकते हैं। इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए हमें बस यह करना होगा–

- हर रोज ऐसे उपाय करें जिससे पानी की बचत हो– यह बचत भले ही एक बूंद की हो।
- उतने ही पानी का उपयोग करें, जितना आवश्यक है।
- जलसंरक्षण के लिए अपने मित्रों का एक ग्रुप बनाएं और उसके माध्यम से जनजागरण करें।
- पानी की टोंटी को अनावश्यक रूप से खुला न छोड़ें। जब मंजन कर रहे हों तो टोंटी बंद रखें। टोंटी तभी खोलें जब हाथ–मुंह धोना हो।
- जिस पानी से हरी सब्जियां धोई गई हैं, उसे बगीचे में उपयोग करें।
- कपड़े धोने से बचे पानी का उपयोग शौचालय में हो।

हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि पानी का कोई दूसरा विकल्प नहीं है। पानी जीवन है। पानी के बिना जीवन असम्भव है। अतः वर्षा जल के रूप में अमृत की जो बूंदे प्रकृति से उपहार में मिलती हैं, उन्हे सहेज कर रखें।❑

## जलाशयों में जलभंडारण की स्थिति

केंद्रीय जल आयोग देश के 76 महत्वपूर्ण जलाशयों में मौजूदा पानी की स्थिति पर नजर रख रहा है। इनमें से 31 जलाशयों के पन–बिजली संबंधी फायदे हैं और इनकी स्थापित क्षमता के दौरान यानी पहली जून 2004 को इनकी कुल क्षमता का 13 प्रतिशत जल मौजूद था। 21.4.2005 को इनकी क्षमता का 21 प्रतिशत जल इन जलाशयों में मौजूद था। जलाशयों में मौजूदा जल भंडार पिछले वर्ष की तुलना में 117 प्रतिशत और पिछले 10 वर्ष की इसी अवधि के औसत की तुलना में 94 प्रतिशत है। इन 71 जलाशयों में से 35 जलाशयों में जल भंडारण पिछले 10 वर्ष के औसत की तुलना में 80 प्रतिशत या इससे कम है। मौजूदा जल का अधिक से अधिक फायदेमंद इस्तेमाल करने के उद्देश्य से केंद्रीय जल आयोग कृषि तथा सहकारिता विभाग से संपर्क बनाये हुए है और साप्ताहिक आधार पर जल भंडारण की स्थिति की जानकारी फसल मौसम निगरानी दल को उपलब्ध करा रहा है ताकि फसलों के लिए उचित रणनीति बनायी जा सके। आयोग जल संसाधन आयोजना से संबंधित विभिन्न विभागों और मंत्रालयों को भी जल भंडारण स्थिति की जानकारी दे रहा है।

पन–बिजली क्षमता वाले 31 जलाशयों में से 18 जलाशयों में जल भंडारण पिछले 10 वर्ष की औसत क्षमता की तुलना में कम है। ❑

## गांवों में सुरक्षित पेयजल

ग्रामीण पेयजल आपूर्ति राज्य का विषय है। भारत सरकार राज्य सरकारों को राज्यों द्वारा जल आपूर्ति योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए केन्द्र प्रायोजित त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम (एआरडब्ल्यूएसपी) के माध्यम से तकनीकी और वित्तीय सहायता प्रदान करती है। राज्यों को प्रदत्त 15 प्रतिशत एआरडब्ल्यूएसपी अनुदान का उपयोग जल गुणवत्ता समस्याओं को दूर करने के लिए किया जा सकता है। पहली अप्रैल, 1998 से राज्य सरकारों को स्वयं जल आपूर्ति योजना बनाने, डिजाइन करने, मंजूर करने तथा कार्यान्वित करने के लिए अधिकार दिए गए हैं और उन्हें परियोजनाओं की स्वीकृति के लिए केन्द्र सरकार से अनुरोध करने की आवश्यकता नहीं है। आंध्र प्रदेश की राज्य सरकार से उपलब्ध जानकारी के अनुसार आंध्र प्रदेश के तटीय क्षेत्रों में अधिकांश झींगा पालन प्रभावित क्षेत्र, विशेषकर पूर्वी गोदावरी, पश्चिम गोदावरी और नेल्लोर जिलों को संरक्षित जल आपूर्ति (पी.डब्ल्यू.एस.) योजनाओं और व्यापक संरक्षित जल आपूर्ति (सी.पी.डब्ल्यू.एस.) योजनाओं से कवर किया गया है तथा सुरक्षित वैकल्पिक सतही जल स्रोत उपलब्ध कराए गए हैं। ❑

**(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)**

# उपेक्षित जल-स्रोतों को बचाने की महत्वपूर्ण पहल

**भारत डोगरा**

हमारे देश में परंपरागत तौर पर विभिन्न समुदाय बहुत समृद्ध जल स्रोत विकसित करते रहे हैं, पर विविध कारणों से इनमें से अनेक जल स्रोत क्षतिग्रस्त हो चुके हैं। जल संसाधनों के अनेक जानकार व्यक्ति और संगठन यह मांग उठाते रहे हैं कि इनकी सफाई और मरम्मत से अपेक्षाकृत कम खर्च पर सिंचाई की क्षमता बढ़ाई जा सकती है, वह भी ऐसी क्षमता जो गांववासियों के अपने नियंत्रण में होगी। अतः यह प्रसन्नता का विषय है कि हाल ही में केन्द्रीय सरकार ने इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है।

इस वर्ष 27 जनवरी को केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने उपेक्षित जल स्रोतों के जीर्णोद्धार की एक महत्वपूर्ण स्कीम स्वीकृत की है। 300 करोड़ रुपये की इस स्कीम का 75 प्रतिशत खर्च केन्द्रीय सरकार उठाएगी तथा शेष 25 प्रतिशत योगदान राज्य सरकारों द्वारा किया जाएगा। इस स्कीम का क्रियान्वयन समय सात से दस वर्ष बताया गया है।

ऐसे कुछ उपाय सरकारी प्रोत्साहन से पहले से हो रहे हैं, जैसे कि राजस्थान में कुंडी बनाने के लिए कुछ स्थानों पर सरकारी सहायता दी गई है। मिजोरम में आईजोल शहर में जल संकट दूर करने के लिए छत पर जल संग्रहण की व्यवस्था के लिए सरकारी सहायता दी गई है। सांची (भोगल के पास मध्य प्रदेश में) की परंपरागत जल व्यवस्था थी, उसे नया जीवन देने का प्रयास पुरातत्व विभाग करता रहा है। अब एक व्यापक योजना के आने से इस तरह के छिटपुट प्रयास एक राष्ट्रीय अभियान का रूप ले सकते हैं, विशेषकर यदि इस योजना के क्रियान्वयन में आम लोगों की नजदीकी भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

जल संरक्षण के विभिन्न उपाय हमारे देश की जरूरतों के अनुसार बहुत समय से किसी न किसी रूप में अपनाएं जाते हैं। चाहे राजस्थान और बुंदेलखंड के तालाब हों या बिहार की आहार पईन व्यवस्था, नर्मदा घाटी की हवेली हो या हिमालय की गूलें, महाराष्ट्र की बंधारा विधि हो या तमिलनाडु की एरी व्यवस्था, इन सब माध्यमों से अपने–अपने क्षेत्र की विशेषताओं के अनुसार स्थानीय लोगों ने वर्षा के जल के अधिकतम और बढ़िया उपयोग की तकनीकें विकसित कीं।

बिहार के गया जिले में जब तक आहार और पईन व्यवस्था सशक्त रही, इसने बाढ़ तथा सूखे दोनों को रोकने में सहायता दी। राजस्थान में भयानक सूखे के दिनों में देखा गया कि जहां आधुनिक पेयजल स्रोतों के आने के बाद भी परंपरागत संग्रहण की उपेक्षा नहीं की गई थी, वहां लोगों की पेयजल के मामले में आत्मनिर्भरता बनी हुई है, पर जहां लोगों ने परंपरागत संग्रहण की उपेक्षा की थी वहां के लोग पानी को तरस रहे थे।

परंपरागत जल–संग्रहण की प्रणालियां एक सामूहिक प्रयास है। बुंदेलखंड और नर्मदा क्षेत्र की हवेली पद्धति को लें या बिहार की आहार पईन पद्धति को, यह किसानों के सामूहिक प्रयास या तालमेल के बिना संभव नहीं है। तालाब बनाने में, उसके रख–रखाव में, उसकी सफाई में पूरे गांव का योगदान होता रहा है। यहां तक कि घुमंतू पद्धति लोगों ने भी अपने सामूहिक प्रयासों से जल–संरक्षण व संग्रहण को उल्लेखनीय देन दी। कच्छ की वीरदी पद्धति मालधारी समुदाय की देन है, जबकि उदयपुर में आज तक जल का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत बनी हुई पिचौला झील बंजारों ने बनाई थी।

बहुत से तालाब जो राजाओं ने बनवाए थे उनके अपने या अपने घराने के उपयोग के लिए थे। जनसाधारण के उपयोग के अधिकांश जलस्रोत गांव समुदाय ने स्वयं बनाए। अतः परंपरागत जलस्रोत पर काम करना है तो यह समझना बहुत जरूरी है कि उसे बनाने और रख–रखाव की समुदाय की क्या व्यवस्था थी, उसकी क्या कमजोरियां व क्या खूबियां थीं।

वास्तव में परंपरागत पानी के स्रोत बचाने तथा हरियाली बचाने के कार्य के साथ गांव समुदाय को नया जीवन देना और उसे रचनात्मक कार्य के लिए आंदोलित करना बहुत नजदीकी तौर पर जुड़ा हुआ है। जब तक गांव समुदाय का पुनर्जागरण नहीं होगा तब तक ऐसे अन्य कार्य बहुत कठिन हैं। बुजुर्गों के ज्ञान और युवावर्ग के आदर्शों तथा उत्साह का समन्वय करते हुए गांव समुदाय का पुनर्जागरण बेहद आवश्यक है।

परंपरागत स्रोत और तकनीक को महत्व देने का यह अर्थ नहीं है कि विज्ञान की नई उपलब्धियों के आधार पर उसमें बदलाव या सुधार नहीं होने चाहिए। यह बदलाव या सुधार अवश्य हो सकता है पर ध्यान देने योग्य बात है कि परंपरागत तकनीक की स्थानीय स्थिति की जो मूल समझ है उसके विरुद्ध कोई बदलाव नहीं करना चाहिए।

जलस्रोतों को उनके जल ग्रहण को साफ स्वच्छ रखने की पहले बहुत अच्छी परंपरा थी। इस अनुशासन का प्रसार ग्रामीण परिवारों में और स्कूलों की शिक्षा के माध्यम से भी होना चाहिए। इस तरह के सांस्कृतिक पर्व आयोजित हो सकते हैं जिनके तालाबों आदि को साफ करने के श्रमदान को जोड़ा जाए।

यदि इस तरह व्यापक जन सहयोग से कार्य किया गया तो हाल में घोषित स्कीम के बहुत अच्छे परिणाम मिल सकते हैं। साथ ही भविष्य में जल–स्रोतों पर अतिक्रमण रोकने के लिए समुचित कार्यवाही भी होनी चाहिए।❑

# पर्यावरणीय चेतना की आवश्यकता

डा. श्याम मनोहर व्यास

भारतीय संस्कृति "वसुधैव कुटुम्बकम" के सिद्धान्त को मानती है। विश्व बन्धुत्व की भावना का प्रसार करती है। पर्यावरण संरक्षण आज के युग की मांग है। स्वच्छ पर्यावरण ही जीवन को सुखी, सम्पन्न एवं आनंदमय बनाता है। 5 जून का दिन सारे विश्व में "पर्यावरण दिवस" के रूप में मनाया जाता है। प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग सीमित एवं सुव्यवस्थित रूप से किया जाना चाहिए। पृथ्वी में जीवन को बनाये रखने की अपार क्षमता है लेकिन यह तभी तक है जब तक पर्यावरण के मुख्य अंग हवा, पानी, वनस्पति, पेड़–पौधे, जीव–जंतुओं तथा खनिज सम्पदा का संरक्षण किया जाए।

देश के भीतर व अन्य देशों में मनुष्य का विकास, प्रगति व शांति प्रयास के प्रबन्ध तथा लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति एक दूसर से जुड़े हुए हैं। प्रत्येक नागरिक को उर्जा के संरक्षण, वन्य जीवन संरक्षण तथा देश में स्वच्छता और हरित क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए प्रयास करना चाहिए। प्रदूषण को रोकने के लिए हर नागरिक अपने स्तर पर प्रयास करे। वर्तमान में राष्ट्रीय पर्यावरण नीति तैयार करने की परम आवश्यकता है। वैसे केंद्र व राज्य स्तर में इसके लिए पृथक से मंत्रालय है। इससे संबंधित केंद्रीय तथा राज्य प्राधिकरणों, सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र के निगम समूहों, अर्द्ध सरकारी संगठनों, शैक्षिक और अनुसंधान निकायों आदि से परामर्श कर पर्यावरण संरक्षण कार्यक्रम को क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

पर्यावरणीय संकट विशेष रूप से वायु–प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण तथा वनोन्मूलन की समस्या विकसित देशों से अधिक विकासशील देशों में है।

यदि शिक्षण संस्थाएं, स्वयंसेवी संस्थाएं तथा वन विभाग नागरिकों की मदद लेकर वृक्षारोपण का कार्यक्रम सुचारू रूप से प्रारम्भ करें तो 110 मिलियन हैक्टेयर भूमि वनों से आच्छादित हो सकती है।

वृक्षारोपण की महिमा का वर्णन हमारे प्राचीन ग्रंथों में काफी है। 'मत्सय पुराण' में लिखा है–

"दस कुंए एक तालाब के बराबर हैं"। दस तालाब एक झील के बराबर हैं, दस झीलें एक पुत्र के बराबर हैं एवं दस पुत्र एक वृक्ष के बराबर है।"

इससे पेड़ लगाने का महत्व उजागर होता है। वृक्षारोपण कार्यक्रम से ही वन विकसित हो सकते हैं। देश के भूभाग का तिहाई भाग वनाच्छादित होना चाहिए।

धरती अर्थात पृथ्वी हमारी माता के समान है। पृथ्वी व वायुमंडल ही हमारे जीवन के मुख्य आधार हैं। दोनों के प्रति हमारा भी कर्तव्य है। दोनो से जितना लें उतना उन्हे वापस दें भी। 'अर्थवेद' में लिखा है–

"हे धरती मां जो कुछ भी तुझसे लूंगा वह उतना ही होगा जिसे तू पुनः पैदा कर सके। तेरे मर्मस्थल पर या तेरी जीवन शक्ति पर कभी आघात नहीं करूंगा।"

प्राकृतिक संतुलन में अनावश्यक व्यवधान डालना स्वयं को विनाश की ओर ले जाना है। ऐसी संस्कृति एवं चेतना की आवश्यकता है जो हमें प्राकृतिक संपदा के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए प्रेरित कर सकें। अति वैज्ञानिक संसाधनों से क्या लाभ जो दिनों–दिन पर्यावरणीय–प्रदूषण बढ़ाएं। इस पर कई लोग प्रतिप्रश्न पैदा करते हैं कि क्या स्वच्छ और अच्छे जीवन के लिए हम पाषाण युग में चले जायें? क्या विज्ञान तकनीकी तथा आर्थिक व सामाजिक विकास को तिलांजली दे दें?

इस प्रश्न का उत्तर है कि यदि जीवन प्रदूषण के कारण नीरस, शुष्क, एवं मानसिक तनाव आदि से ग्रस्त हो तो ऐसी वैज्ञानिक उन्नति से भी क्या लाभ?

यदि आज व्यक्ति असमय ही बूढ़ा लगने लग जाए, तरह–तरह के असाध्य रोग फैलने लगें, जीवन मूल्यों का दिनों–दिन ह्रास हो तो ऐसे विकास से क्या फायदा? वैज्ञानिक विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण भी आवश्यक है। पश्चिमी राष्ट्र अति भौतिकवादी हैं, जहां सारे दैनिक कार्यकलाप यंत्रों पर आधारित हैं। फिर भी वहां जनसंख्या विस्फोट जैसी समस्या नहीं है, पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने का पूरा प्रयास किया जाता है। प्रदूषण फैलाने वालों के प्रति कठोर कानूनी कार्यवाही की जाती है।

"प्रकृति पर विजय" की बात सोचना निरी मूर्खता एवं अहंभाव को प्रकट करता है। क्या मानव प्रकृति पर विजय पा सकता है? नहीं, कदापि नहीं। क्या सूर्य की ऊर्जा को कम कर सकता है? नहीं। प्रकृति से प्रेम कर ही हम अपने जीवन को सुखी–सम्पन्न एवं दीर्घायु बना सकते हैं।

"धरती घर का आगंन है, आसमान छत है, सूर्य–चन्द ज्योति देने वाले दीपक हैं महासागर पानी के मटके हैं और पेड़–पौधे आहार के साधन हैं। चेतना ईश्वर प्रदत्त है।"

अपरिग्रहवाद, अणुव्रत, स्वच्छता, अहिंसा भाव, क्षमा, आत्मचिंतन, सत्य एवं विवेक जैसे गुण मानव को पर्यावरण संरक्षण के प्रति उत्तरदायी बनाते हैं। वन के समान परोपकारी की भावना रखनी चाहिए। भगवान बुद्ध ने कहा है–"वन मांगता कुछ नहीं बल्कि हर जीव को शक्ति एवं सुरक्षा प्रदान करता है, यहां तक कि उस व्यक्ति को भी छाया प्रदान करता है जो कुल्हाड़ी लेकर उसे काटने आया है।"

## अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं

पर्यावरण संरक्षण के लिए निम्न प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं है।

- संयुक्त राष्ट्र का पर्यावरण कार्यक्रम
- संयुक्त राष्ट्र संघ का आर्थिक आयोग
- अंतराष्ट्रीय जैव कार्यक्रम
- विश्व वन्य जीवन कोष

इसके अतिरिक्त अमेरिका, फ्रांस, इंग्लैंड, भारत, जापान, आदि देशों में पर्यावरण संरक्षण मंत्रालय तथा अन्य एजेन्सी भी कार्यरत हैं। संयुक्त राष्ट्र का पर्यावरण कार्यक्रम सन् 1972 में शुरू हुआ था।

कई स्वयं सेवी संस्थाएं भी पर्यावरणीय चेतना के लिए सेवा भावना से कार्यरत हैं। पर्यावरण राज्य मंत्री के अनुसार प्रदूषण संबंधी समस्याओं से निपटने के लिए विशेष अदालतों के गठन का कार्य भी विचाराधीन है। ऐसी अदालतों को व्यापक अधिकार दिये जाने चाहिए और इनका क्षेत्र विस्तृत होना चाहिए ताकि प्रदूषण उत्पन्न करने वाले कारखाने स्थापित होने से पूर्व ही प्रदूषण की रोकथाम के लिए प्रयास हो सकें।

प्रदूषण की समस्या मानवीय अस्तित्व के साथ जुड़ गई है। अरावली क्षेत्रों में वनों को लगाने का काम प्राथमिकता से होना चाहिए ताकि इस प्राचीन पर्वतीय क्षेत्र को रेगिस्तान होने से बचाया जा सके। साथ ही वनों की रक्षा के लिए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत यथा सौर चूल्हा, गोबर गैस संयंत्र, निधूर्म चूल्हों का आधिकाधिक उपयोग किया जाना चाहिए। पर्यावरण की शुद्धता ही जीवन है, इसे समझना होगा।

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान डा. स्वामीनाथन के कथनानुसार प्रत्येक नगर में "पर्यावरण क्लब" की स्थापना होनी चाहिए। लोगों में पर्यावरण संरक्षण सम्बंधी चेतना जगाना जरूरी है। प्रत्येक व्यक्ति एक पेड़ लगाये और बच्चे के समान इसको पाले व रक्षा करे। कई पत्र–पत्रिकाएं भी पर्यावरण संबंधी साहित्य प्रकाशित कर अपना दायित्व निभा रही हैं। देश के हर नागरिक का कर्तव्य है कि वह पर्यावरण संरक्षण के प्रति अपने दायित्व को समझे। पर्यावरण ही जीवन है, जीवन ही पर्यावरण है इसके संरक्षण, सुरक्षा और संवर्धन में अपना योगदान दें। ❑

**(लेखक पूर्व शिक्षा उपनिदेशक एवं प्राचार्य (डाइट) हैं।)**

**पर्यावरण एवं वन**

# महत्वपूर्ण फैसले और पहलें

सरकार के राष्ट्रीय साझा न्यूनतम कार्यक्रम में तीव्र आर्थिक विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण के समन्वय को उच्च प्राथमिकता दी गई है। इस उद्देश्य के अनुसरण में पर्यावरण तथा वन मंत्रालय ने कई नीतिगत पहलें की हैं जैसे राष्ट्रीय पर्यावरण नीति पर मसौदा जारी करना, पशु कल्याण तथा परीक्षण संबंधी दिशा–निर्देशों को अंतिम रूप देना, अच्छे तौर–तरीके अपनाना  तथा पर्यावरण एवं परीक्षण तथा पर्यावरण एवं वानिकी सहित नियामक पद्धतियों को दोबारा तैयार करना, पर्यावरण मंजूरी, अनुवांशिकी इंजीनियरी तथा तटीय प्रदेश नियमन आदि।

**राष्ट्रीय पर्यावरण नीति**

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति (एनईपी) को मसौदा तैयार कर लिया गया है तथा लोगों की प्रतिक्रिया के लिए उपलब्ध करा दिया गया है। एनईपी पूरे देश में पर्यावरण संरक्षण के लिए पथ प्रदर्शक है, जिससे पर्यावरण सुरक्षा तथा विकास, गरीबों की देखरेख खासकर जीवन यापन से संबंधी मामले को एक दूसरे से जोड़ा सकेगा। पर्यावरण अनुदान मंजूरी के लिए शुरू किये गए हैं, जिनमें परियोजना के खास वर्गों के संदर्भ में पर्यावरण अनुदान मंजूरी के लिए राज्य सरकारों को ज्यादा जिम्मेदारियां, सलाहकारों के प्रत्यायन के लिए एक प्रणाली की शुरूआत तथा पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन हेतु विशेषज्ञ भी शामिल हैं।

पर्यावरण नियमन का तरीका आसान बना दिया गया तथा पर्यावरण निकासी, वन निकासी, तटीय प्रदेश नियमन अनुवांशिकी इंजीनियरी अनुमोदन समिति तथा पशुओं पर परीक्षण जैसे नियमन प्रक्रियाओं को बेहतर तौर–तरीके अपनाकर पारदर्शी बनाया गया। दिशा निर्देशों का एक सेट तैयार किया गया है, जिसमें परीक्षण के लिए पशुओं के इस्तेमाल एवं देख–रेख, गैर–सरकारी संगठनों द्वारा उठाये गये नैतिक सवालों तथा वैज्ञानिकों द्वारा चिकित्सा अनुसंधान संचालन संबंधी विभिन्न बाधाओं को शामिल किया गया है।

वास्तविक आदिवासियों तथा वनों में रहने वाले लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिए राज्य तथा केंद्र शासित प्रदेशों से आग्रह किया गया है कि अतिक्रमण करने वालों को ही हटाया जाए तथा आदिवासियों तथा वनवासियों को वहां से हटाने का कार्य तब तक न किया जाए जब तक कि इनकी पहचान का कार्य पूरा नहीं कर लिया जाता।  राज्य तथा केंद्र शासित प्रदेशों को सरकारी विभागों को वन भूमि आबंटित करने के इजाजत दे दी गई है। पर यह भूमि केवल जनजातियों वनों के किनारें बसे गांवों के लिए मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए दी जाएंगी और यह जरूरत के आधार पर दी जाएंगी और एक एकड़ से कम होगी। पूर्वोत्तर क्षेत्र में प्राकृतिक पारिस्थितिकी प्रक्रिया से बड़े समूह में मूली बांस के फूल खिलने से होने वाली सामाजिक तथा आर्थिक समस्या से निबटने के लिए 105 करोड़ रुपये की राशि प्रस्तावित है।

**विशिष्ट उपलब्धियां**

ओजोन परत की सुरक्षा के संदर्भ में भारत ने अपने उद्योगों को प्रभावित किए बगैर तथा उपभोक्ताओं के हित की रक्षा करते हुए ओजोन का ह्रास करने वाली हैलोन का उत्पादन कम कर दिया है। क्योटो प्रोटोकोल के अनुबंध के अनुसार भारत सबसे ज्यादा प्रस्तावों की मंजूरी तथा (सीडीएम) स्वच्छ विकास प्रणाली (सीडीएम) द्वारा उपलब्ध अवसरों से विश्व में सीईआर (प्रमाणित उत्सर्जन न्यूनीकरण) आपूर्तिकर्ता के रूप में भारतीय निजी क्षेत्र तेजी से उभर रहा है।

भारत द्वारा जनवरी, 2005 में इस गुट के अध्यक्ष की हैसियत से समान विचारों वाले विभिन्न देशों जैव विविधता से समृद्ध तथा पारंपरिक ज्ञान वाले देशों की एक बैठक की गई। बैठक में अधिकता तथा मुनाफा बांटने पर विकासशील तथा अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में एक समान स्थिति लाने में मदद मिली और अधिकता एवं मुनाफा बांटने पर नई दिल्ली मंत्रिमंडल के घोषणापत्र को स्वीकृति मिली।

# ग्लोबल वार्मिंग : खतरे की घंटी

वैभव पाण्डे

वर्तमान में संपूर्ण मानव जाति लगभग आठ अरब मीट्रिक टन कार्बन सालाना वायुमंडल में छोड़ रही है जिसकी वजह से कार्बनडाइआक्साइड आदि गैसों की वातावरण में सांद्रता बढ़ने तथा ओजोन क्षरण के कारण वातावरण के तापमान में निरंतर वृद्धि हो रही है जिसे आजकल 'ग्लोबल वार्मिंग' नाम से जाना जाता है।

इस ग्लोबल वार्मिंग के कारण प्रकृति का मिजाज बदलता जा रहा है। दो वर्ष पहले यूरोप में लू के कारण काफी जानें चली गयी थीं और मैक्सिको में लोग ठंड के कारण काल के गाल में समा गए। कुछ दिनों पहले उत्तरी ध्रुव के बर्फीले रेगिस्तान में बड़ी–बड़ी बर्फ की चट्टानें टूटने की खबरें आयी थीं। जाहिर है, बढ़ते तापमान की वजह से ये चट्टानें पिघलेंगी और समुद्री जल में बढ़ोतरी करेंगी। समुद्र द्वारा फैलायी गयी तबाही का मंजर अभी कुछ दिनों पहले ही हम अपनी आंखों से देख चुके हैं। अंडमान के कई इलाकों में पानी भर गया। मालदीव के 9 द्वीप डूब चुके हैं। आज जिस गति से ग्लेशियर ग्लोबल वार्मिंग की वजह से पिघल रहे हैं, उसकी रफ्तार की वजह से आने वाले सालें में भारत और पड़ोसी देशों में खतरा बढ़ जाएगा। तब शुरू होगी जिंदगी और मौत के बीच झूलते लोगों की जद्दोजहद, भूख–प्यास से पीड़ित लोग आस–पास के देशों में पनाह लेने के लिए निकल पड़ेंगे। साथ ही लाखों मछुआरों को तट से हटकर एक नई जगह पर जीविका तलाशनी पड़ेगी।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण दुनिया के अनेक क्षेत्रों में फसलें समय से पहले ही तैयार हो जा रही हैं परिणामस्वरूप कृषि उपज गिर रही है। आम के पेड़ में बौर पहले ही आ जा रहे हैं जिससे कि उत्पादकता प्रभावित हो रही है। इसकी वजह से मानसून की दिशा एवं चरित्र बदल रहा है। यही वजह है अब बेमौसम ठंड, बरसात एवं गर्मी आम बात हो गयी है। मानसून में अलनीनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है लेकिन हवा के दबाव और तापमान में वृद्धि के कारण अलनीनों को क्षति पहुंचता है जिसके कारण इसके सुचारू बहाव में रुकावट पैदा होती है। इसके फलस्वरूप मानसून रुक जाता है। जिसके कारण मौसम में उतार–चढ़ाव भी आता है।

मनुष्यों के साथ–साथ पशु पक्षी भी ग्लोबल वार्मिंग से अछूते नही हैं। ग्लोबल वार्मिंग का दुष्प्रभाव उनके दैनिक क्रियाकलापों एवं जीवन चक्र को बुरी तरह प्रभावित कर रहा है। कुछ दिनों पहले ही लखीमपुर खीरी जनपद में फरवरी माह के अन्तिम दिनों में सारस पक्षी बेमौसम स्वयंवर रचा रहे थे। शोध के मुताबिक सारस जुलाई से अक्तूबर माह के बीच तालाबों के किनारे एकत्रित होते है फिर ये जोड़े मेटिंग करते हैं। लेकिन अब इनका जीवन चक्र भी अस्त–व्यस्त हो गया है।

## ग्लोबल वार्मिंग के कारण

मुख्यतया हम वैश्विक उष्मायन के लिए दो कारकों को उत्तरदायी ठहरा सकते हैं।

1. ओजोन परत में क्षरण
2. ग्रीन हाउस इफेक्ट दुष्प्रभाव

**1. ओजोन परत में क्षरण**

ओजाने आक्सीजन के तीन परमाणुओं से मिलकर बनने वाली गैस है जो कि वातावरण में बहुत कम मात्रा (0.02 प्रतिशत) में पायी जाती है। जहां निचले वातावरण में पृथ्वी के निकट इसकी उपस्थिति प्रदुषण को बढ़ाने वाली मानव उत्तकों के लिए नुकसानदेह है, वहीं ऊपरी वायुमण्डल में इसकी उपस्थिति परमावश्यक है। यह गैस प्राकृतिक रूप से बनती है। जब सूर्य की किरणें वायुमंडल के ऊपरी सतह पर आक्सीजन से टकराती हैं तो उच्च ऊर्जा विकिरण से इसका कुछ हिस्सा ओजोन में परिवर्तित हो जाता है। पृथ्वी के धरातल से 20–30 किमी की ऊंचाई पर वायुमंडल के समताप मंडल क्षेत्र ओजोन गैस का एक झीना सा आवरण है जिसे ओजोन परत हानिकारक पराबैंगनी किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती हैं

बढ़ते औद्योगिक के परिणामस्वरूप वायुमंडल में कुछ ऐसे रसायनों की मात्रा बढ़ गई है जिसके दुष्प्रभाव से ओजोन परत को खतरा उत्पन्न हो गया है। ऐसे रसायनों में क्लोरो फ्लोरो कार्बन (सी.एफ.सी.), हैलोजन्स (क्लोरीन, ब्रोमीन, फ्लोरीन) और नाइट्रस आक्साइड गैसें प्रमुख हैं। ये रसायन ओजोन गैस को आक्सीजन में विघटित कर देते हैं जिसकी वजह से ओजोन परत पतली हो जाती है और उनमें छिद्र हो जाते है। यहां तक कि ओजोन परत में छिद्र का आकार यूरोप के कुल क्षेत्रफल के बराबर हो गया है।

सी.एफ.सी. गैस का मानव निर्मित यौगिक है जिसकी खोज 1920 के दशक के उतरार्द्ध में हुई थी। सी.एफ.सी. ने जल्द ही रेफ्रीजरेशन में इमोनिया के स्थान पर कूलिंग का स्थान ले लिया। रेफ्रीजेरेशन उद्योग के अतिरिक्त इस गैस का उपयोग फर्नीचरों में फोम भरने (स्टापरोफोम), एयरकंडीशनर्स, सूक्ष्म इलेक्ट्रानिक सर्किटों को साफ करने वाले साल्वेंट, ब्लाइंग एजेन्ट तथा पॉलीयूरीथेन के निर्माण में किया जाता है। इन सभी स्रोतों से निकलने वाली सी.एफ.सी. गैस वायुमंडल में एकत्रित हा जाती है। सूर्य की पराबैंगनी किरण इस सी.एफ.सी. को तोड़कर क्लोरीन को अलग कर देती हैं। यह क्लोरीन ओजोन से अभिक्रिया कर उसे आक्सीजन में बदल देती है। इस प्रकार निर्मित आक्सीजन सूर्य की घातक पराबैंगनी किरणों से बचाव नहीं कर पाती है। ओजोन को तोड़ने की यह श्रृखला अभिक्रिया के रूप में तब तक होती रहती है जब तक कि क्लोरीन वातावरण की नमी से अभिक्रिया करके हाइड्रोक्लोरिक एसिड

नहीं बना लेती तथा वर्षा के जल के साथ पृथ्वी के धरातल पर नहीं पहुंच जाती है। अन्य हलोजेन्स तथा नाइट्रस आक्साइड भी इसी प्रकार की श्रंखला अभिक्रिया के द्वारा ओजोन परत को क्षति पहुंचाते है। सर्वप्रथम ओजोन क्षरण की जानकारी मई, 1985 में अमेरिकी वैज्ञानिक जी. फोरमैन द्वारा 'नेचर' विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित उनके ब्रिटिश अंटार्कटिक सर्वे' पर आधारित एक विस्तृत प्रतिवेदन से प्राप्त हुई।

पैराबैंगनी किरणों से त्वचा कैंसर तथा मोतियाबिंद आदि बीमारियों का खतरा बनता है। शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता और कृषि पैदावार कम होने के अलावा वन सम्पदा क्षतिग्रस्त होती है। पराबैंगनी किरणों का दुष्प्रभाव समुद्री जीवों पर भी पड़ता है।

**2. ग्रीन हाउस इफेक्ट**

वायुमंडल में उपस्थित कुछ प्रमुख गैसें लघु तरंगी सौर विकिरण को पृथ्वी के धरातल पर आने देती है परन्तु पृथ्वी से निकले वाली दीर्घ तरंगी विकिरण को अवशोषित कर लेती हैं। इस कारण वायुमंडल पृथ्वी के औसत तापमान को 35 डिग्री से. के आस–पास बनाए रखता है। इस घटना को ही ग्रीन इफेक्ट कहते हैं। इसके लिए उत्तरदायी गैसों में कार्बनडाइआक्साइड, ओजोन, सल्फर डाइआक्साइड प्रमुख हैं। ग्लोबल वार्मिंग में कार्बनडाइआक्साइड गैस का योगदान 50 प्रतिशत, मीथेन का 18 प्रतिशत, सी.एफ.सी. का 14 प्रतिशत एवं नाइट्रस आक्साइड का 6 प्रतिशत है। शिकागों विश्वविद्यालय के पर्यावरणीय वैज्ञानिक डा. वी.रामानाथन के अनुसार पृथ्वी का औसत तापमान जो ग्रीन हाउस गैसों के कारण लगभग 11.5 डिग्री से बढ़ चुका है और अब प्रदूषणकारी गैसें वायुमंडल में न भी छोड़ी जाय तो वर्ष 2030 तक पृथ्वी 5 डिग्री से. तक और बढ़ जाएगा। इस तापमान वृद्धि के परिणाम भयानक होगें। बढ़ते तापमान से उत्तरी अमेरिका में जलवृष्टि अतिक्षीण हो जायेगी एवं गर्म हवाओं का प्रकोप होगा। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के उत्तरी प्रान्तों में वीभत्स समुद्री तूफानों के आने के संभावनायें बढ़ जायेगी।

## ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के लिए अब तक किये गये उपाय

ओजोन परत का संरक्षण एक वैश्विक समस्या है। विश्व के वैज्ञानिकों एवं पर्यावरणविदों ने इसके संरक्षण के उपायों को गंभीरता से लिया है। ओजोन परत को बचाने के सार्वभौमिक प्रयासों के तहत सर्वप्रथम 1985 में वियना सम्मेलन तथा 1987 में "मांट्रियल प्रोटोकाल" के रूप में 48 राष्ट्रों द्वारा अंतराष्ट्रीय समझौते को मंजूरी दी गयी। मांट्रियल प्रोटोकाल में 2000 तक सी.एफ.सी. गैस के उपयोग पर पूर्ण प्रतिबंध लगाना शामिल था। भारत ने भी इस गोष्ठी में भाग लिया था। इसके बाद भूमंडलीय तापमान में वृद्धि के खतरों पर जापान के क्योटो शहर में 1997 में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ जिसमें 160 दिशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन की महत्वपूर्ण उपलब्धि पृथ्वी के वातावरण ताप में निरंतर हो रही वृद्धि से जलवायु में हो रहे परिवर्तन पर रोक के लिए एक ऐतिहासिक समझौते पर हस्ताक्षर करना था। इस सम्मेलन में काफी मतभेदों के बावजूद औद्योगिक देश ग्रीन हाउस गैसों उत्सर्जन पर 5 प्रतिशत तक कमी लाने पर सहमत हो गये। क्योटो समझौते के तहत ग्रीन हाउस गैसो के विस्तार में यूरोपीय संघ 8 प्रतिशत, अमेरिका 7 प्रतिशत, जापान 6 प्रतिशत और कनाडा 3 प्रतिशत कटौती करने पर सहमत हुए। 20 अन्य देशों ने भी कटौती करने के सहमत व्यक्त की है यह कटौति वर्ष 2008 से 2012 के बीच की जायेगी। क्योटो संधि पर भारत ने भी वर्ष 2000 में हस्ताक्षर कर दिए। इस समझौते के अनुसार संबंद्ध देशों को अपन प्रदूषण का स्तर 1990 के स्तर पर ले जाना है। संयुक्त राष्ट्र के प्रयासों के चलते क्योटो सन्धि 16 फरवरी 2005 से प्रभावी रूप से लागू हो गई है। किन्तु अमेरिका और आस्ट्रेलिया जैसे औद्योगिक से विकसित राष्ट्रों द्वारा इस सन्धि पर हस्ताक्षर न करना पूरी दुनिया के लिए चिंता का विषय बन गया है। अमेरिका की आबादी विश्व की कुल आबादी का सिर्फ 4 प्रतिशत है जबकि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन भागीदारी 25 से 30 प्रतिशत तक है। विकसित राष्ट्रों द्वारा सहयोग न देने की स्थिति में ग्लोबल वार्मिंग जैसी वैश्विक समस्या को दूर करना आसान न होगा और मानवता को बचाना असंभव होगा। ग्लोबल वार्मिंग सिर्फ एक शब्द नहीं है, यह एक सच्चाई है। महात्मा गॉधी ने कहा है कि "पृथ्वी के पास मानव की जरूरतों को पूरा करने के लिए काफी कुछ है लेकिन उसके लोभ के पूरा करने के लिए कुछ भी नही है।" अगर मानव इस बात को गम्भीरता से ले तो समस्त मानवता को महाविनाश में जाने से रोका जा सकता है। ❑

**(लेखक स्वतंत्र प्रत्रकार हैं)**

## बेरोजगारी भत्ता/काम के बदले अनाज

बेरोजगारी भत्ता योजना की शुरूआत। पहली अप्रैल, 2005 के बाद कारखाने या संस्थान के बंद होने पर छंटनी या स्थाई रूप से अक्षम होने या, उस व्यक्ति को जिसने राज्य बीमा निगम का सदस्य रहकर पांच साल या उससे अधिक समय तक योगदान दिया हो, उसके कुल कार्यकाल में छह महीने तक बेरोजगारी भत्ता मिल सकता है। (16.3.2005)

काम के बदले अनाज की राष्ट्रीय योजना की शुरूआत। इस योजना के तहत देश के चिन्हित किए गए 150 जिलों में पूरक श्रम–रोजगार के तहत काम के बदले अनाज योजना की शुरूआत की गई जो शत–प्रतिशत केंद्र द्वारा प्रायोजित है। (13.10.2004)

## न्यूनतम साझा कार्यक्रम

न्यूनतम साझा कार्यक्रम को राष्ट्रीय न्यूनतम कार्यक्रम के रूप में स्वीकृति। इस कार्यक्रम को प्रभावी ढंग लागू करने के लिए प्रत्येक मंत्रालय ने सभी मुद्दों के वित्तीय प्रभावों की समीक्षा की तथा योजना आयोग के साथ विचार–विमर्श के बाद वित्त मंत्रालय तथा विधि मामलों, विधि और न्याय मंत्रालय के साथ सभी मुद्दों पर सरकार उचित स्तर पर संस्तुति देगी। प्रत्येक मंत्रालय अपना सामयिक निगरानी और सूचना तंत्र का ढांचा तैयार करेगी जिससे राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सके। यह भी तय किया गया कि इसके लिए राष्ट्रीय सलाहकार परिषद का गठन किया जाए जिसके अध्यक्ष का दर्जा कैबिनेट मंत्री का होगा और इसके 20 सदस्यों की नियुक्ति प्रधानमंत्री करेंगे। (28.5.2005)

# पृथ्वी के तापमान में वृद्धि घातक

एस.आर. कन्नौजे

वैज्ञानिकों ने एक सदी पहले ही भविष्यवाणी कर दी थी कि जिस तेज रफ्तार से जीवाश्मों (फासिल्स) को जलाया जा रहा है, उससे पृथ्वी का तापमान इतना बढ़ जायेगा कि सामान्य अवस्था में लाना मुश्किल होगा। जलवायु में परिवर्तन फलस्वरूप पृथ्वी के तापमान में लगातार वृद्धि के प्रति बढ़ती चिंता कोई नई बात नहीं है, जलवायु में परिवर्तन से जीवन और समाज का हर क्षेत्र, धरती का हर कोना प्रभावित होगा। पृथ्वी के तापमान में हो रही वृद्धि के गंभीर पर्यावरणीय नतीजे न केवल वर्तमान पीढ़ी को बल्कि आने वाली पीढ़ी को भी प्रभावित करेंगे।

जलवायु परिवर्तन ऐसी क्रिया है जिसके साथ कई प्रतिक्रियाएं जुड़ी हुई हैं। विश्व वैज्ञानिकों की संस्था इंटर गवर्नमेंटल पैनल आफ क्लाइमेट चेंज (आई.पी.सी.सी.) के अनुसार तापमान में बढ़ोतरी के कारण सन् 2030 तक विश्व में समुद्र के पानी का स्तर 20 से.मी. तक और अगली सदी के अंत तक 65 से.मी. तक बढ़ जायेगा, नतीजा हिंद महासागर तथा कैरिबियन समुद्र के अनेक द्वीप बुरी तरह तबाह हो सकते हैं। समुद्र के पानी के सतह की ओर प्रवाह से दुनिया के कई हिस्सों में भूमि जल सप्लाई दूषित होगी और उपजाऊ भूमि पर खारे पानी के प्रवेश से भूमि की उर्वराशक्ति कम होगी, जानलेवा रोगों का प्रसार होगा, समुद्री खाद्य पदार्थों की भारी हानि होगी, सूखा – बाढ़ से प्रभावित पर्यावरणीय शरणार्थियों की संख्या दिनों–दिन बढ़ती ही जायेगी। आई.पी.सी.सी. के अध्ययनों के अनुसार सदी में ग्रीन हाउस के कारण पृथ्वी के तापमान में 0.5 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई है जबकि इसी अवधि में दुनिया में समुद्र के पानी का स्तर 10 से 20 से.मी. तक बढ़ गया है। तापमान में बढ़ोतरी के कारण दुनिया भर में ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं

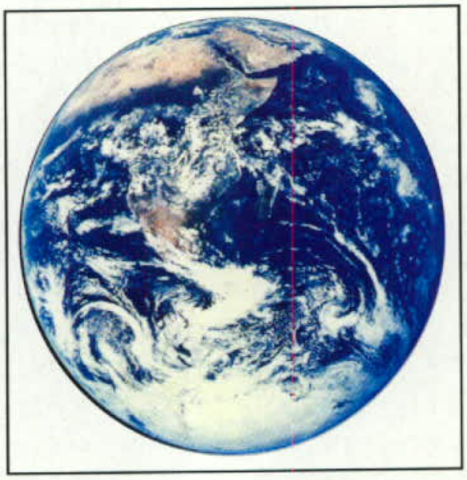

और हिमपात का औसत लगातार कम होता जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूनेप) का कहना है कि अगर आज सी.एफ.सी., मीथेन, नाइट्रस आक्साइड जैसी गैसों को वायुमंडल में छोड़ना बंद कर दिया जाए तो भी पृथ्वी का तापमान बढ़ता रहेगा और कम से कम एक दशक तक जलवायु में परिवर्तन होता रहेगा। तापमान वृद्धि में विकासशील देशों का कम हाथ रहा है लेकिन तापमान में वृद्धि और जलवायु परिवर्तन के सर्वाधिक गंभीर और खतरनाक नतीजे गरीब देशों को ही भुगतना पड़ रहे हैं और आगे भी मुश्किल कम होती नजर नहीं आती।

विकासशील देशों में तापमान वृद्धि व जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि व स्वास्थ्य पर इसका गहरा प्रभाव पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन से विश्व स्तर पर खाद्य उत्पादन के ढांचे और खाद्यानों के मूल्यों पर प्रतिकूल असर पड़ेगा, जैसे–जैसे मौसम में परिवर्तन होगा वर्षाकाल का ढांचा परिवर्तित होगा, जल आपूर्ति के कई स्रोत गायब हो जायेंगे। फसलें प्रभावित होगी, बाढ़ तथा भूमि के कटाव की समस्या ज्यादा गंभीर दृष्टिगत होगी। तपते–झुलसते वातावरण में फसलों के लिए घातक कीट–पतंगों की आबादी व पादप रोगों में वृद्धि के कारण कृषि उत्पादन में काफी हद तक गिरावट की संभावना है।

आजकल जलवायु के बदलाव व विश्व के गर्म होने की संभावना विश्व की सबसे गंभीर पर्यावरणीय समस्या के रूप में उभरकर सामने आया है, पिछले 10000 वर्षों में जलवायु इतनी तेजी से कभी गर्म नहीं हुई। विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों ने संपूर्ण वातावरण को प्रदूषित कर दिया, आज यही जीवनदायी तत्व जीवनघातक बन गये हैं। सन् 1860 से पृथ्वी के तापमान को रिकार्ड करने का सिलसिला यह बताता है कि 1990 से 1995 तक लगातार 5 साल गर्म रहे। इसके कारण समुद्र की धारायें बदली, इंडोनेशिया में भयंकर सूखा पड़ा, लेटिन अमेरिका में बाढ़ आयी, वैज्ञानिकों का मानना है कि अगले 50 वर्षों तक पर्यावरण प्रदूषण की यही गति बनी रही तो महाप्रलय आ सकता है। वायुमंडल में बढ़ती हुई गैसे कार्बनडाईआक्साईड, कार्बन मोनो आक्साइड वायुमंडल की उपरी सतह पर जमकर पृथ्वी का तापमान बढ़ाती हैं, यू गैसे पृथ्वी से वापस लौटने वाली अवरक्त किरणों को रोककर वातावरण को गर्म करती हैं, यदि इसी तरह से तापमान बढ़ता रहा तो ध्रुवों पर बर्फ पिघलकर समुद्रतल को ऊंचा कर देंगे जिससे समुद्र के किनारे बसे नगर तबाह हो जायेंगे।

सूर्य से आने वाली प्रकाश की किरणें वायुमण्डल को पारकर पृथ्वी तक 1,86,000 मील प्रतिसेकंड की गति से पहुंचती हैं, रास्ते में ही सूर्य के ताप का अधिकांश भाग नष्ट हो जाता है, सूर्यताप का केवल 2 अरबवां भाग ही पृथ्वी तक पहुंचता है। पृथ्वी दिन में जितना ताप ग्रहण करती है, रात में उसे निकाल देती है, इसलिए पृथ्वी का ताप संतुलन बना रहता है, वायुमंडल में मानव निर्मित गैसों की मात्रा निरंतर बढ़ती ही जा रही है, इन्हीं गैसों में पृथ्वी भेजा गया ताप फंसता जा रहा है, जिसके कारण पृथ्वी का ताप धीरे–धीरे बढ़

रहा है। धरातल में तापमान में अंतर होने कारण हिमरेखा की ऊंचाई भिन्न–भिन्न है, अगर तापमान औसत से 1 सेंटीग्रेड भी अधिक होता है तो पहाड़ों पर जमी 165 मीटर तक की बर्फ पिघल जायेगी और यह अतिरिक्त जल सागर स्तर को बढ़ा देगा। अंटार्कटिका महाद्वीप एवं ग्रीनलैण्ड में संकट के बादल मंडरा रहे हैं। पर्यावरण विशेषज्ञों, खगोल शास्त्रियों, जलवायु वेत्ताओं का मानना है कि पृथ्वी का ताप (औसत 15 सेंटीग्रेड) धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है। प्रदूषण की यही स्थिति रही तो 15–20 साल बाद अधिक संकट भोगना पड़ेगा। जनमानस के द्वारा लगातार जंगल काटे जा रहे हैं, धरती वृक्षविहीन हो रही है, दूर–दूर तक दृष्टि डालने पर भी पेड़–पौधे नजर नहीं आते, धरती में लगातार वाहन दौड़ रहे हैं, दिनों–दिन वाहनों की संख्या में वृद्धि संकट पैदा कर रही है, पेट्रोल व डीजल जैसे पदार्थ अधिकाधिक जलाये जा रहे हैं, उद्योगों की संख्या में बाढ़ आ गयी है, ये उद्योग काले–काले जहरीले धुंआ आसमान में उगल रहे हैं यही प्रमुख कारण है कि हमारी पृथ्वी तेजी से गर्म हो रही है।

वैज्ञानिक के अनुसार विश्व तापमान में 5 डिग्री की वृद्धि होने में 10 से 20000 वर्ष लगते हैं पर अब जिस तेजी से गर्मी बढ़ रही है उससे मात्र 50 वर्षों में तापमान इतना बढ़ सकता है कि प्राणियों का जीवनयापन मुश्किल हो सकता है, पृथ्वी को गर्म करने में सबसे प्रमुख भूमिका कार्बनडाईआक्साइड गैस की होती है, इस गैस में प्रतिवर्ष 0.4 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है, इस गैस की वृद्धि खतरे की घंटी है, यह दुनिया के सामने विकराल समस्या खड़ी कर रही है, इस बात में कोई संदेह नहीं है कि कार्बनडाईआक्साइड की मात्रा में और अधिक वृद्धि जलवायु में परिवर्तन लाएगी और चिंतित होने का कारण उस परिवर्तन का प्रभाव है। स्काटलैण्ड के विज्ञान लेखक राबर्ट चेम्बर्स ने लिखा है कि – **वन नष्ट होते हैं तो जल नष्ट होता है, मत्स्य और शिकार नष्ट होते हैं, फसलें नष्ट होती हैं, पशु नष्ट होते हैं, उर्वरता विदा ले लेती है और तब ये पुराने प्रेत एक के पीछे एक प्रगट होने लगते हैं – बाढ़, सूखा, आग, अकाल और महामारी।**

जलवायु में हो रहे परिवर्तन के कारण कृषि तकनीक को लचीला बनाना जरूरी होगा, किसानों को हर दशक के बाद अपने आपको नए उपज तथा मवेशी प्रबंध के अनुरूप ढालना होगा, साथ ही विश्व के अनेक हिस्सों में तूफानों चक्रवातों, सूखे और बाढ़ों के लगातार बढ़ते प्रकोप का भी मुकाबला करना होगा। समस्या का समाधान जटिल है, स्थिति से कारगर ढंग से निपटने के लिए तत्काल कार्यवाही के रूप में कार्बनडाईआक्साइड की मात्रा में कमी लाने तथा मीथेन गैसों के निस्सरण में कमी लाने की आवश्यकता है। ओजोन परत में छेद करने वाली सी.एफ.सी गैस की मात्रा में क्रमबद्ध ढंग से कमी लाने की अति आवश्यकता है। संपन्न और विकसित देश का इस क्षेत्र में क्रियान्वयन तेजी से करने की आवश्यकता है तभी सफलता संभावित है। जलवायु परिवर्तन कंवेशन के पक्षकारों के सम्मेलन ग्लोबल वार्मिंग के खतरों से बचाने में एक कारगर कदम है। समय रहते यदि अपनी भूलों को भविष्य में सुधारने की इन सामूहिक कोशिशों पर अमल नहीं किया गया तो महाप्रलय कभी भी आ सकता है, जिससे पृथ्वी से मानव का नामोनिशान मिट जायेगा, मानव की सकारात्मक सोच ही प्रकृति के संरक्षण में सहायक होगी। पर्यावरण का बढ़ता प्रदूषण, प्राकृतिक संतुलन की व्यापक स्थिति, संसाधनों की तेजी से होने वाली कमी के कारण, मानव समाज के सामने चुनौती खड़ा कर रहा है, मानव के अविवेकपूर्ण व्यवहार से प्रकृति नाराज हो चली है। मानव के लालच व तृष्णा ने हद पार कर दी है, सारी विकृतियां मानव की पैदा की हुई है। अंधाधुंध तथा असमान विकास समूचे पृथ्वी के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहे हैं। पर्यावरण तथा मानव का आपसी संबंध इतना नाजुक है कि उसके लिए 'वसुधैव कुटुम्बकम' की अवधारणा हमेशा सही साबित होती है। पृथ्वी के साथ जननी तुल्य रिश्ता ही मानव जाति को उच्चतर धरातल पर प्रतिष्ठित कर सकता है, पर्यावरण संतुलन की पहली शर्त यही है कि प्रकृति के साथ सह अस्तित्व के भावना का विकास हो। ❑

**(लेखक शासकीय महाविद्यालय, अम्बागढ़ चौकी जि. राजनंदगांव (छत्तीसगढ़) में प्रवक्ता हैं।)**

## ग्रामीण सड़कों हेतु एशियाई विकास बैंक का ऋण

एशियाई विकास बैंक प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना के अंतर्गत ग्रामीण सड़कों के निर्माण के लिए 4000 लाख अमरीकी डालर का ऋण देने पर सहमत हो गया है। इस प्रयोजनार्थ असम उड़ीसा और पश्चिम बंगाल राज्य परियोजना राज्य होंगे। असम राज्य सरकार द्वारा कराए गए कोर–नेटवर्क सर्वेक्षण के अनुसार 1000 से अधिक की आबादी वाली 4692 बसावटों को अभी असम में सड़क संपर्क उपलब्ध कराया जाना है। कोर–नेटवर्क के आधार पर प्रति बसावट संपर्क के लिए आवश्यक औसत लंबाई 1.44 किलोमीटर है और इस तरह से ऐसे गांवों को सड़क संपर्क उपलब्ध कराने के लिए अपेक्षित संपर्क सड़कों की कुल लंबाई अनुमानतः 6756 किलोमीटर होगी। ❑

## प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत रोजगार

सरकार ने प्रधानमंत्री रोजगार योजना (पीएमआरवाई) के तहत वर्ष 2002–03 में 284548 शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार दिया जबकि वर्ष 2003–04 में 323270 बेरोजगार युवाओं को रोजगार प्रदान किया गया। वर्ष 2002–03 में 1544.38 लाख रुपये रोजगार के लिए खर्च किए गए जबकि पिछले वित्तीय वर्ष यानी (2004–05) में 2010.20 लाख रुपये इस मद पर खर्च किए गए।

सरकार ने इस योजना को अधिक कारगर बनाने कि लिए पात्रता आयुसीमा बढ़ाना और पहाड़ी राज्यों और पूर्वोत्तर क्षेत्र में उम्मीदवारों को सब्सिडी देने जैसे विभिन्न उपाय किए हैं। ❑

# इलेक्ट्रानिक कचरा पर्यावरण के लिए खतरा

डा. विनोद गुप्ता

कचरा चाहे वह किसी भी चीज का क्यों न हो, यदि उसके निपटान के उचित प्रबंधन नहीं किए जाएं तो वह न केवल पर्यावरण को ही दूषित करता है अपितु सेहत को भी नुकसान पहुंचाता है।

अभी तक लोग घरेलू कचरे, अस्पताल अथवा नर्सिंग होमों द्वारा फैलाए जा रहे कचरे या औद्योगिक कचरे के बारे में ही जानते थे या फिर सड़कों पर लगे कचरे के ढेर से वाकिफ थे, लेकिन आज इलेक्ट्रानिक कचरे ने एक नई स्वास्थ्य समस्या उत्पन्न कर दी है जो एक गंभीर चिंता की बात है।

दुनिया के देशों में तेजी से बढ़ती इलेक्ट्रानिक क्रांति से एक तरफ जहां आम लोगों की उस पर निर्भरता बढ़ती जा रही है, वहीं दूसरी तरफ इलेक्ट्रानिक कचरे से होने वाले खतरे ने पूरे दक्षिण पूर्व एशिया खासकर भारत की चिंता बढ़ा दी है। पर्यावरण के खतरे और गंभीर बीमारियों का स्रोत बन रहे इस कचरे का भारत प्रमुख उपभोक्ता है। मोबाइल फोन लैप – टाप, फैक्स मशीन, फोटोकापियर, टेलीविजन और कबाड़ बन चुके कंम्प्यूटरों के कचरे भारी तबाही के तौर पर सामने आ रहे हैं। अकेले अमेरिका में इस साल छः करोड़ से ज्यादा कंप्यूटर, तीन करोड़ से ज्यादा मोबाइल टीवी और लैप–टाप कबाड़ की शक्ल में बदल जाएंगे। पांच साल पहले दो करोड़ से ज्यादा कंप्यूटरों और मोबाइल फोन को अमेरिका पहले ही कबाड़ घोषित कर चुका है।

पुरानी शैली के कंप्यूटर, मोबाइल फोन, टेलीविजन और इलेक्ट्रानिक खिलौनों तथा अन्य उपकरणों के बेकार हो जाने के कारण भारत में हर साल पांच सौ टन इलेक्ट्रानिक कचरा पैदा होता है। यह मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न कर सकता है।

जोधपुर विश्वविद्यालय के एक प्रोजेक्ट पर काम कर रहे सेंटर फॉर क्वालिटी मैनेजमेंट सिस्टम के प्रमुख जांचकर्ता **श्री घोष** के अनुसार जिस तेजी से बाजार में इलेक्ट्रानिक उपकरणों विशेष रूप से मोबाइल की धूम मची है। इससे वर्ष 2007 में इलेक्ट्रानिक कचरा बढ़कर साढ़े आठ सौ टन होने की संभावना है। अभी भले ही यह आंकड़ा कम लगे लेकिन यह चिंता का विषय जरूर है।

भारत में पिछले दशक में केवल कंप्यूटरों से सात हजार टन कचरा पैदा हुआ जबकि स्विट्जरलैंड में यह संख्या 66 हजार टन, अमेरिका में नौ लाख टन और ब्रिटेन में 22 लाख टन रही।

विकासशील देशों को सर्वाधिक सुरक्षित डंपिंग ग्राउंड माने जाने के कारण भारत चीन और पाकिस्तान सरीखे एशियाई देश ऐसे कचरे के बढ़ते आयात से चिंतित हैं। देश और दुनिया के पर्यावरण संगठन इसके संभावित खतरों पर एक दशक से भी ज्यादा समय से चिंता प्रकट कर रहे हैं। ऐसे कचरे के आयात पर प्रतिबंध लगाने के लिए भारत में चौदह साल पहले बने कचरा प्रबंधन और निगरानी कानून 1989 को धता बताकर औद्योगिक घरानों ने इनका आयात जारी रखा है। अमेरिका, जापान, चीन, ताइवान, सरीखे तकनीकी उपकरणों में फैक्स मोबाइल फोटोकापियर, कंप्यूटर, लैपटाप, टी.वी, बैरिया, कडैंसर, माइक्रो चिप्स, सी.डी. फलापी आदि के कबाड़ होते ही इन्हें ये देश दक्षिण पूर्व एशिया के जिन कुछ देशों में ठिकाने लगाते हैं उनमें भारत का नाम सबसे ऊपर है। विकासशील देश इनका इस्तेमाल तेजाब में डुबो कर या फिर उन्हें जला कर उसमें से सोना–चांदी प्लैटिनम और दूसरी धातुएं निकालने के लिए करते हैं।

एक कंप्यूटर में प्रायः 3.8 पौण्ड सीसा, फासफोरस, केडमियम व मरकरी जैसे घातक तत्व होते हैं। जो जलाये जाने पर सीधे वातावरण में घुलते हैं। इनका अवशेष पर्यावरण के विनाश का कारण बनता है। अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण संगठन "ग्रीनपीस" के एक अध्ययन के अनुसार 49 देशों से इस तरह का कचरा भारत में आयात होता है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

# इस शताब्दी की घातक समस्या- पर्यावरण प्रदूषण

कांता

असंतुलित जनसंख्या-वृद्धि का पर्यावरण पर सीधा प्रभाव पड़ता है। मनुष्य जब भी जल, थल और वायु का असंतुलित दोहन करता है तो प्रदूषण उत्पन्न होता है। जब मनुष्य प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करता है तो उसका संतुलन बिगड़ता है। असंतुलित जनसंख्या-वृद्धि पर्यावरण को प्रदूषित करने वाला प्रमुख कारण है। औद्योगीकरण और मशीनीकरण भी वातावरण पर बुरा प्रभाव डालते हैं।

प्रदूषण की समस्या मूल रूप से आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों के अंधाधुंध प्रयोग की देन है। शुद्ध वातावरण में अवांछनीय तत्वों की उपस्थिति को प्रदूषण कहा जाता है।

जिस पर्यावरण में हम रहते हैं वह सफाई के लिहाज से हमारे रहने लायक है, यानी प्रदूषण-मुक्त है। वाहनों से निकलता दूषित रासायनिक धुआं, कूड़े-कचरे के ढेरों से निकलती दुर्गन्ध, रेफ्रिजरेटरों से निकलती गैस जो वायुमंडल की ओजोन परत को नुकसान पहुंचाती है, सभी प्रदूषण फैलाते हैं। कूड़े-कचरे की दुर्गन्ध की समस्या आज सबसे अधिक घातक सिद्ध हो रही है।

औद्योगीकरण के कारण वायु-प्रदूषण बहुत तेजी से बढ़ रहा है। वायुमंडल में लगातार विषैली गैसों का धुआं छोड़ने वाले वाहन घातक प्रदूषण फैलाते हैं। औद्योगिक कारखानों की चिमनियों से निकलने वाला धुआं वायु-प्रदूषण का प्रमुख कारण है। वायु-प्रदूषण में कार्बनडाईआक्साइड, कार्बनमोनोआक्साइड, सल्फरडायोक्साइड आदि प्रदूषक तत्व हैं। वायु-प्रदूषण को एक बहुत बड़ा खतरा परमाणु परीक्षणों और रासायनिक युद्धों से है। वाहनों से निकलते धुएं में सांस लेने से लोग फेफड़ों की बीमारी, कैंसर, अस्थमा, एलर्जी आदि रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। इधर वाहनों में सीएनजी का इस्तेमाल कर काफी हद तक वाहनों में प्रदूषण पर नियंत्रण पाया जा सका है। वायु प्रदूषण के कारण लोग अनेक भयंकर रोगों की चपेट में आ जाते हैं। मानव जीवन के लिए ऑक्सीजन बहुत जरूरी है। कारखानों, फैक्ट्रियों, विद्युत-संयंत्रों आदि में प्रयुक्त होने वाला ईंधन और कोयले का धुआं पर्यावरण में उपलब्ध आक्सीजन को नुकसान पहुंचाता है।

वायु-प्रदूषण की भांति ही जल-प्रदूषण भी एक बड़ी समस्या है। आज के उद्योगों से जो कचरा, और विषैले रासायनिक पदार्थों को पानी में बहा दिया जाता है वहीं अनेक असाध्य और जानलेवा रोगों का कारण बनता है। जल-प्रदूषण से टाइफाइड, हैजा, आंत्र रोग और पीलिया जैसी बीमारियां हो सकती हैं।

अधिक मात्रा में कृत्रिम खाद, कीटनाशकों और रासायनिक पदार्थों के इस्तेमाल ने मिट्टी को प्रदूषित किया है। परोक्ष रूप से यह सब जीवन को प्रभावित करते हैं। कारखानों को दूषित जल मिट्टी को भी प्रदूषित करता है। भूमि के विभिन्न खनिज तत्व प्राकृतिक रूप से संतुलन में होते हैं। यदि किसी कारणवश इनमें असंतुलन पैदा हो जाए तो यह भूमि-प्रदूषण कहलाता है।

आजकल ध्वनि प्रदूषण भी एक गंभीर समस्या है। लाऊडस्पीकरों का उपयोग दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। हॉर्नों से भी काफी ध्वनि प्रदूषण होता है। रेडियो, टी.वी., स्टीरियो आदि को ऊंची आवाज में सुनने से कुछ लोगों को क्षणिक आनन्द मिलता है। लेकिन इसके दूरगामी परिणाम बहुत घातक होते हैं। ऊंची आवाज में बातचीत भी ध्वनि-प्रदूषण कहलाता है। इससे श्रवण शक्ति कम होती है। शोर-शराबे से सिरदर्द, अनिद्रा, मानसिक विकार, एकाग्रता में कमी, चिड़चिड़ापन आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

परमाणु हथियारों और मिसाइलों से निकलने वाला विकिरण जन्तुओं की कोशिकाओं में प्रवेश कर उनकी आनुवांशिकता में विकार पैदा करता है। यह प्रदूषण सभी प्रदूषणों से अधिक खतरनाक है। वायु, जल, भूमि और ध्वनि-प्रदूषण पर तो हम काबू पा सकते हैं परंतु रेडियोएक्टिव प्रदूषण पर नहीं। मोबाइल फोन को भी स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक माना गया है।

वायुमंडल में प्रदूषण प्राकृतिक कारणों से भी होता है। जैसे-ज्वालामुखी फटना, धूलभरी आंधी चलना, जंगलों में आग लगना, भूकंप, चक्रवात आदि। कुछ हद तक यह प्रदूषण मनुष्य की गलतियों का ही परिणाम है। मानव-निर्मित प्रदूषण बहुत घातक है।

इसके बारे में लागों में जागरूकता पैदा करना बहुत आवश्यक है। पर्यावरण-प्रदूषण के बारे में लोगों को जागरूक बनाने के लिए शिक्षा प्राथमिक स्तर पर ही देनी होगी। पर्यावरण और प्रदूषण को जरूरी विषयों के रूप में लागू करना भी आवश्यक है। पिछले कई वर्षों से कई शैक्षिक संस्थाओं में पर्यावरण को एक विषय के रूप में शामिल किया गया है। सरकार और लोगों के सामूहिक प्रयास के बिना प्रदूषण पर नियंत्रण पाना कठिन है। ❑

**(लेखिका पत्रसूचना कार्यालय में सूचना सहायक हैं।)**

# भारत का मिनी स्विटजरलैंड - औली

एस.एस. सैनी

बर्फ पर फिसलना हो या स्कीइंग करना, इसके लिए कुछ साल पहले तक पर्यटकों की हिमाचल प्रदेश या कश्मीर की बर्फीली वादियों पर ही नजर जाती थी। इससे पहले की पीढ़ी के लोग तो फिल्मों और अखबारों में ही यह दृश्य देखकर संतोष कर लेते थे। लेकिन अब उत्तरांचल में भी यह नजारा आम हो गया है और दूरदर्शन चैनलों की खबरों की सुर्खियां हो या अखबारों में छपी फोटो, सभी जगह उत्तरांचल के बर्फीले ढलान या मैदान खूब दिखते हैं। वास्तव में औली को स्कीइंग स्थल बनाने में आई.टी.बी.पी. का सबसे ज्यादा योगदान है। चीन सीमा पर स्थित बर्फीले पहाड़ों पर चौकसी के दौरान औली के बर्फीले ढलानों पर किया गया अभ्यास जवानों के बहुत काम आता है। इस अभ्यास से ही औली के स्कीइंग स्पोट बनने का सिलसिला शुरू हुआ था।

उत्तरांचल का पहला स्कीइंग मैदान बनने का गौरव जिस जगह को मिला है वह है औली स्कीइंग केन्द्र। जनपद चमोली में औली, उत्तरकाशी में दयारा बुग्याल के बर्फीले मैदान व पिथौरागढ़ में मुनस्यारी के बर्फ ढके पहाड़, बरबस अपनी ओर पर्यटकों का ध्यान खींचते हैं। इन सबमें औली के स्कीइंग केंद्र के रूप में विकसित करने की योजना पर अबसे 20 साल पूर्व काम शुरू हो गया था लेकिन औली को प्रसिद्धि मिली पिछले 7–8 साल से ही। इसके अलावा बद्रीनाथ धाम व हेमकुंड साहिब की यात्रा मार्ग के पास होने का भी लाभ मिला है। उत्तरांचल के सीमांत जनपद चमोली की तहसील जोशीमठ मुख्यालय से महज 12 किमी. दूरी पर स्थित औली का बर्फीला मैदान पिछले कुछ सालों में हिमक्रीड़ा प्रेमियों और पर्यटकों को ध्यान अपनी ओर आकर्षित किए हुए है। भारतीय बर्फ प्रेमियों के लिए तो यह मिनी स्विटजरलैंड से कम नहीं। पौराणिक आख्यानों में औली इसकी समीपवर्ती पर्वतीय चोटियों का उल्लेख है राम–रावण युद्ध में मेघनाद की अमोघ शक्ति से अचेत लक्ष्मण की प्राण रक्षा हेतु संजीवनी बूटी भी इसी क्षेत्र से ले जायी गयी थी। द्रोणागिरी शिखर औली के पास ही की पर्वत चोटी है जहां से हनुमानजी संजीवनी बूटी लेकर लंका गए थे। इसका दृश्य उन्हें संजीवनी शिखर से ही दिखाई दिया था। इसी मान्यता व पौराणिक कथा प्रसंग की स्मृति स्वरूप यहां हनुमानजी का काफी बड़ा और प्रसिद्ध मंदिर है। जबकि बद्रीनाथ जाने वाले मार्ग पर पर्यटक इससे पहले जोशीमठ स्थित नरसिंह मंदिर पर सिर झुकाकर ही आगे बढ़ते हैं।

समुद्र तल से 8 से 13 हजार फुट ऊंचाई पर कई किमी. वर्ग क्षेत्र में फैली औली के बर्फीले मैदान की खूबी यह है कि यह मौसम के अनुसार बदलकर पर्यटकों को आकर्षित करने में सक्षम है। बरसात में यह हरा–भरा बुग्याल बन जाता है तो सर्दियों में बर्फीला मैदान।

## अन्य पर्यटक स्थल

औली पहुंचने के लिए जोशीमठ आखिरी नगरीय पड़ाव है। यहां पर्यटक विभाग के होटल के साथ ही निजी क्षेत्र के लॉज व होटल भी हैं। समुद्रतल से 1870 मीटर की ऊंचाई पर जोशीमठ औली ही नहीं बद्रीनाथ (राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 58) ज्योतिर्मठ के रूप में भी विख्यात है यहां भी आदि शंकराचार्य द्वारा स्थापित ज्योतिर्मठ है। इतिहासविदों के अनुसार भी ज्योर्तिमठ ही गढ़वाल के प्राचीन कत्यूरी शासकों की राजधानी भी रहा है। यहां आदि शंकराचार्य ने कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर तपस्या की थी और उन्हें यहीं आत्म ज्योति के दर्शन हुए थे। इसी आधार पर जोशीमठ में ज्योतिर्मठ आश्रम भी बना है।

जोशीमठ व औली के आसपास, विश्व प्रसिद्ध फूलों की घाटी नेशनल पार्क, नंदा देवी बायो स्फेयर रिजर्व जैसे दुर्लभ वन्य जीवों का संरक्षण क्षेत्र एवं पुष्पों, वनस्पतियों का हजारों वर्ग किमी. क्षेत्र में फैला जैव विविधता का इलाका भी है जो भारतीय ही नहीं विदेशी पर्यटकों, शोधकर्ताओं एवं वन्य जीव प्रेमियों को भी अपनी ओर आकर्षित कर रहा है।

## औली स्कीइंग स्थल

औली और गुरसों नामक दो बुग्यालों को मिलाकर औली स्कीइंग केंद्र का विकास किया गया है। जोशीमठ से इसकी दूरी करीब 12 किमी. है। खास बात यह है कि यहां तक जोशीमठ से भी बस से पहुंचा जा सकता है। गुरसों से ही 6 किमी. लम्बा व 1.5 किमी. चौड़ा स्कीइंग स्पाट शुरू हो जाता है। हेमकुण्ड साहिब के रूप में भी सिख धर्म का लोकपाल नामक प्राकृतिक सरोवर है। इससे आगे साहसिक पर्यटकों के लिए क्वारीपास व सप्तकुण्ड एवं चांदगढ़ी जैसे पर्यटक स्थल भी हैं। वन्य जीव प्रेमियों के लिए चमोली के जिला मुख्यालय गोपेश्वर से होकर केदारनाथ धाम के मार्ग में केदारनाथ वन्य जीव प्रभाग का वन्य जीव विहार जैसे दुर्लभ क्षेत्र भी हैं।

## औली स्कीइंग योजना

औली को स्कीइंग स्थल के रूप में विकसित करने की पहल उ.प्र. के तत्कालीन पर्वतीय विकास मंत्री नरेन्द्र सिंह भंडारी ने की थी। उनकी इस पहल पर ही 20 जुलाई 1983 को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने यहां स्कीइंग प्रशिक्षण केंद्र व रोप वे की आधार शिला रखी थी। शुरू में यहां के विकास की रफ्तार जरूर धीमी रही लेकिन 1984 से ही गढ़वाल मण्डल विकास निगम द्वारा स्कीइंग

प्रशिक्षण शिविर आयोजन का सिलसिला जारी रहने का लाभ यह हुआ कि 1988 में प्रथम औली स्कीइंग प्रतियोगिता की शुरूआत हो गई थी। इससे औली क्षेत्र के विकास को नई गति मिली और हर साल प्रतियोगिताएं आयोजित हो रही हैं। 1992 तक हर दूसरे वर्ष विंटर गेम फेडरेशन ऑफ इंडिया द्वारा ओषन हिमक्रीड़ा मुकाबले आयोजित होते रहे। 1992 के बाद यह मुकाबला हर साल आयोजित होने लगा। सुखद बात यह रही कि लगातार सुविधाएं बढ़ने से वर्ष 2003 में भारतीय ओलंपिक एसोसिएशन ने राष्ट्रीय शीतकालीन खेल मुकाबले का आयोजन किया तो औली अंतराष्ट्रीय पर्यटन एवं हिमक्रीड़ा मानचित्र पर उभरा।

## एशिया का सबसे बड़ा रोप वे

औली में हिमक्रीड़ा आयोजन के लिए बुनियादी सुविधाओं का विकास जरूरी था। इस तरफ उत्तरांचल पर्यटन विभाग और गढ़वाल मंडल विकास निगम दोनों के ही प्रयास रंग लाए और यहां के रोप वे का निर्माण कार्य 1993 में पूरा हो गया इसका उदघाटन भी 26 फरवरी 1994 में हुआ। यह 4.1 किमी. लम्बा व 10 टॉवर वाला रोप वे कुछ समय पूर्व तक एशिया का सबसे बड़ा रोप वे था। इसमें 50 लोगों का एक साथ जिकबैक सिस्टम से ले जाने की सुविधा है। यहां हिम खिलाड़ियों व पर्यटकों को स्पॉट तक ले जाने के लिए 800 मीटर की चेयर कार भी लगी है और आधा किमी. स्कीइंग लिफ्ट भी है। स्की लिफ्ट खिलाड़ियों को ढलान से ऊपर ले जाने के काम आती है।

## बेहतरीन ढलान/स्लोप

स्कीइंग विशेषज्ञों के मुताबिक औली के ढलान उत्तर दिशा में होने के साथ–साथ विश्व भर में सबसे बेहतर है। इसका क्षेत्रफल 25 वर्ग किमी. है इसकी लम्बाई पांच किमी. है इसके आगे भी 60 गुणा 40 मीटर लम्बे आइस स्केटिंग रिंग का भी निर्माण यहां किया जा रहा है। जो अगले सीजन में पर्यटकों के लिए खोल दिया जाएगा। इससे पर्यटकों को यहां आइस हॉकी व फिगर स्केटिंग आदि की अतिरिक्त सुविधाएं उपलब्ध होंगी।

## उज्ज्वल भविष्य

कश्मीर में आतंकवाद एवं उत्तरपूर्व की पहाड़ियों में भी आतंकवाद नक्सलवाद प्रभाव के कारण पर्यटकों का रुख अब उत्तराचंल की और बढ़ रहा है। तीर्थाटन तो चार धाम यात्रा के कारण था ही। ऊपर से राज्य सरकार की पर्यटन को भी अपनी अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख स्रोत मानने से भी इसे रोजगार से जोड़ने की कोशिशें रंग ला रही हैं। कम खर्च, सड़क व हवाई यातायात की सुविधा बढ़ने से पर्यटकों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी से सरकार उत्साहित है। इसी आधार पर उत्तरांचल को वर्ष 2004 का पर्यटन का राष्ट्रीय पुरस्कार भी मिला है। उत्तरांचल पर्यटन विभाग के अनुसार वर्ष 2004 में यहां 6000 पयर्टक आए थे। इससे सरकार व पर्यटन विभाग खासे उत्साहित हैं। अब राज्य सरकार की वर्फ को ही पर्यटन का आधार बनाने की कोशिशें तेज हो गयी हैं। इसी क्रम में उत्तरकाशी जनपद की भटवाड़ी तहसील स्थित द्वारा बुग्याल को भी नया स्कीइंग स्पोट बनाने की योजना पर तेजी से अमल किया जा रहा है। इस कार्य के लिए केंद्र व राज्य सरकार दोनों ने अलग–अलग बजट मंजूर किया है। उत्तरांचल पर्यटन विभाग को उम्मीद है कि निकट भविष्य में औली में आने वाले हिमक्रीड़ा प्रेमियों और पर्यटकों की तादाद में विदेशी भी खूब होंगे।

## बॉलीवुड का झुकाव

हिमक्रीड़ा प्रेमी और पर्यटक ही नहीं फिल्मी कलाकारों, निर्देशकों को एक धारावाहिक निर्माताओं की भी दिलचस्पी औली में बढ़ी है। यहां के बेमिसाल प्राकृतिक सौन्दर्य ने बॉलीवुड जगत को न सिर्फ घूमने से वरन् शूटिंग को लेकर भी उम्मीदें जगाई है। ❑

**(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)**

# पर्यटन का एक और स्थान - झारखंड

पर्यटन आज देश की अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है। इसका तेजी से विकास हो रहा है और साथ ही यह अब रोजगार जुटाने वाला एक साधन भी बन गया है। पर्यटन के चलते नये–नये होटल–मोटल और यात्री निवासों का निर्माण हो रहा है। इससे परिवहन उद्योग को भी बढ़ावा मिल रहा है, जिनमें लाखों लोगों को रोजगार मिलता है। स्विटजरलैंड जैसे देश की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार पर्यटन ही है। भारत में कश्मीर घाटी में लोगों के रोजगार का मुख्य स्रोत भी पर्यटन है।

पर्यटन का सबसे पुराना रूप तीर्थाटन है। आज भी भारत में तीर्थाटन महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं कुछ समय पहले तक पर्यटन का अर्थ ऐतिहासिक और प्राकृतिक स्थलों का भ्रमण तक ही सीमित था। लेकिन जैसे–जैसे अर्थव्यवस्था में बदलाव आता गया वैसे–वैसे पर्यटन के स्वरूप में भी परिवर्तन आने लगा। आज चिकित्सा पर्यटन, शिक्षा पर्यटन, व्यापार पर्यटन तथा ग्रामीण पर्यटन की बात होने लगी है।

सौंदर्य की दृष्टि से झारखंड काफी महत्वपूर्ण है। संपूर्ण झारखंड प्रदेश पठारी इलाका है और प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। यह प्रदेश पर्यावरण पर्यटन के लिए जाना जाता है। बरसात के बाद पूरा प्रदेश वायु प्रदूषण मुक्त रहता है और हरियाली छायी रहती है। नदी–नालों में स्वच्छ पानी बहता रहता है। न गर्मी न सर्दी। इस वातावरण में आबोहवा बदलने के लिए कोलकत्ता आसनसोल, दुर्गापुर, हावड़ा आदि औद्योगिक और व्यावसायिक शहारों से बड़ी संख्या में लोग वहां पहुंचते है। ये लोग साधारणतया संथाल परगना तथा सिंहभूम जिले में नदियों व नालों के तटों पर बने गेस्ट हाउसों और मकानों में दस बीस दिन तक ठहरते हैं। इन्हें चेंजर कहा जाता है।

झारखंड में प्रवेश करते ही वनों से आच्छादित पहाड़ तथा जगह–जगह टेढ़ी–मेढ़ी बहती नदियां पर्यटकों का स्वागत करती हैं। झारखंड को प्राकृतिक रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है। छोटानागपुर पठारी इलाका है जहां अनेक पर्यटन स्थल हैं जो बड़ी संख्या में पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करते है। झारखंड की राजधानी रांची इसी पठार पर स्थित है, जो समुद्रतल से 2023 फुट की ऊंचाई पर बसा है। ब्रिटिश शासन काल में यह तत्कालीन बिहार की ग्रीष्मकालीन राजधानी रह चुकी थी। रांची पहुंचने वाले पर्यटक रांची पहाड़ी से शहर का विहंगम दृश्य मनमोहक लगता है। पहाड़ी के पास ही रांची झील और राजभवन है। राजभवन से आगे कांके डैम और उससे सटा पार्क है। इसी क्षेत्र में बिरसा कृषि विश्वविद्यालय और मनोचिकित्सा संस्थान स्थित है। रांची के दक्षिणी भाग में भारी इंजीनियरी निगम का विशाल परिसर है। इसी परिसर में झारखंड की विधानसभा है। वहीं प्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर है, जहां पुरी की तरह रथयात्रा निकलती है। इसमें लाखों लोग भाग लेते हैं। रांची के पास हुंडरू, दशम और गौतमधार जलप्रपात हैं। हुंडरू रांची से लगभग 56 किलोमीटर दूर स्वर्णरेखा नदी पर स्थित है, जहां बड़ी संख्या में पर्यटक पहुंचते है।

नेतरहाट झारखंड का एक प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है। यह रांची से 125 किलोमीटर दूर नेतरहाट पठार पर स्थित है। सूर्योदय के दृश्यों के देखने के लिए बड़ी संख्या में पर्यटक वहां पहुंचते है। राज्य सरकार का नेतरहाट पब्लिक स्कूल इसी पठार पर है।

नेतरहाट से पर्यटक बेतला अभयारण्य आसानी से जा सकते है। 22 किलोमीटर में फैला यह अभयारण्य पलामू बाघ परियोजना का एक अंग है। अभयारण्य में पर्यटक वहां कूटते–फांदते हिरणों के झुड देखकर मुग्ध हो जाते हैं हिरण और बारसिंगों के झुंड वहां के आम दृश्य हैं। सांभर, जंगली, सूअर तथा भालू भी देखे जा सकते हैं। गर्मियों में हाथी के झुंड पानी की खोज में दूसरी जगहों पर चले जाते हैं लेकिन बरसात आरंभ होते ही उनका आगमन आरंभ हो जाता है। यदा–कदा बाघ भी दिखाई दे जाते हैं।

लोग बेतला होते हुए रामगढ़ के रास्ते छिन्नमस्तिका मंदिर में दर्शन के लिए जा सकते है। यह एक शक्तिपीठ है। दामोदर नदी के तट पर स्थित इस मंदिर में प्रतिदिन हजारों श्रद्धालु पूजा–अर्चना के लिए पहुंचते हैं।

हजारीबाग झारखंड का एक अन्य रमणीक पर्यटन स्थल है। शहर के उत्तर में स्थित दो प्राकृतिक झीलों और उत्तर पूर्व में केनारी हिल आकर्षण के मुख्य केंद्र हैं। पास में ही हजारीबाग नेशनल पार्क है, जहां विभिन्न प्रकार के वन्यप्राणी स्वच्छंद विचरण करते देखे जा सकते हैं। गोमों के पास प्रसिद्ध जैन तीर्थ स्थल पारसनाथ है।

जमशेदपुर और बोकारो झारखण्ड के दो बड़े औद्योगिक केंद्र हैं। वहां इस्पात के विशाल कारखाने हैं। आद्यौगिक केंद्र होने के बावजूद दोनों शहर साफ–सुथरे हैं। झारखंड के यह दो व्यावसायिक केंद्र बन गए हैं। संथाल परगना में देवघर हिन्दुओं का प्रसिद्ध तीर्थस्थल है, जहां भगवान शिव का एक विशाल मंदिर है। वैसे तो हजारों श्रद्धालु प्रतिदिन भगवान शिव के दर्शनों के लिए वहां आते हैं, किंतु सावन के महीने में तो वहां भक्तों का सैलाब उमड़ पड़ता है। कुछ अन्य प्रसिद्ध स्थान है– झुमरी तलैया, पंचेत और तेनुघाट डैम। इनके अलावा पश्चिम सिंहभूम जिले में घने जंगलों के बीच बसा है थलकोबाद। वहां के घने वन प्रागैतिहासिक काल के हैं। थलकोबाद कोलाहल से दूर एक शांत स्थान है जहां पर्यटक अरोग्य लाभ करते हैं। ❑

**(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)**

# हिमाचल प्रदेश की पर्यटन नीति

गिरीश चन्द्र पाण्डे

अभी हाल में हिमाचल प्रदेश सरकार ने पर्यटन गांव की अवधारणा को मूर्त रूप देने के उद्देश्य से ग्रामीण पर्यटन नीति की घोषणा की है। इस पर्यटन नीति के तहत प्रत्येक हिमाचलवासी को पर्यटन से जोड़ने का प्रयास करते हुए मालदीव तथा फीजी जैसे छोटे देशों की तर्ज पर पर्यटन को घर–घर का उद्योग बनाने की योजना है। स्मरणीय है कि मालदीव पूर्णतः पर्यटन राजस्व पर निर्भर है। इसके अलावा, मलेशिया, सिंगापुर, हांगकांग, नेपाल में भी पर्यटन उद्योग वहां की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड है। इसलिए हिमाचल प्रदेश की यह पहल निश्चित रूप से सराहनीय है। इस नीति में होटल की संस्कृति के स्थान पर पूर्णतः ग्रामीण परिवेश में हिमाचल के प्राकृतिक सौन्दर्य, उसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत तथा विशिष्ट वास्तुकला से पर्यटकों को अवगत कराते हुए उन्हें सामान्य दरों पर बिजली की आपूर्ति सुनिश्चित करने तथा आबकारी करों में छूट देने का भी प्रावधान किया गया है ताकि पर्यटन को और गति मिले। गौरतलब है कि हिमाचल में पारिस्थितिकी पर्यटन नीति पहले ही घोषित की जा चुकी है जिसमें स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी को रेखांकित किया गया है। अब पर्यटन गांव की इस नई अवधारणा से निःसंदेह हिमाचल प्रदेश की न केवल भारत में बल्कि विश्व मानचित्र पर नई पहचान स्थापित होगी।

यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि भारत के प्रत्येक राज्य में किसी न किसी रूप में पर्यटन की अकूत संभावनाएं हैं। यदि यह कहें कि कश्मीर से कन्याकुमारी तक का संपूर्ण भाग प्राकृतिक सौंदर्य से ओतप्रोत है तो शायद अतिश्योक्ति नहीं होगी। परंतु अभी तक एक ठोस पर्यटन नीति के अभाव में राज्यों में उपलब्ध पर्यटन की संभावनाओं का उचित दोहन नहीं हो पाया है। भारत जैसे विशाल आबादी वाले देश में तो पर्यटन का महत्व और भी है क्योंकि पर्यटन उद्योग में अपार रोजगार की संभावनाएं हैं। हमारी सबसे बड़ी सम्पदा हमारे मानव संसाधन यानी हमारे लोग हैं, इसलिए पर्यटन जैसे लाभकारी रोजगार प्रदायक क्षेत्र से उन्हें विकास प्रक्रिया में पूर्ण भागीदार बनाकर हमें दुतरफा फायदा होगा। इससे स्वयं लोगों का कल्याण तो होता ही, साथ ही राष्ट्र की उन्नति में उनकी निर्णायक भूमिका होगी और देश को भी राजस्व की प्राप्ति होगी।

चूंकि पर्यटन का सीधा संबंध संस्कृति से भी है, इसलिए समय–समय पर विदेशी पर्यटकों को उनके ही देश में भारत की लोककला, नृत्य–संगीत, सभ्यता–संस्कृति, चित्रकला, वेशभूषा, तीज–त्योहारों, उत्सवों से अवगत कराकर उन्हें भारत में पर्यटन के लिए आकर्षित किया जाता है। विदेश मंत्रालय के अंतर्गत विदेशों में स्थापित राजदूतावासों की इस संबंध में महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके अलावा, बाहरी देशों द्वारा अपने देश में भी विभिन्न आयोजनों द्वारा भारतीय पर्यटन की संभावनाओं की जानकारी दी जाती है, फिर चाहे वह मलेशिया का "रोड शो" हो या जर्मन महोत्सव। हस्तशिल्पों की समृद्ध किस्मों को लोकप्रिय बनाने में भी मदद मिलती है। यहां यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक होगा कि पर्यटन के साथ स्थानीय लघु तथा कुटीर उद्योग भी अविच्छिन्न रूप से जुड़े हैं, इसलिए यदि राज्य विशेष में पर्यटन को फलने–फूलने का पर्याप्त अवसर दिया जाए तो स्वभावतः नारियल जूट, हथकरघा, हस्तशिल्प, रेशमकीट पालन, चमड़ा, मिट्टी बर्तन बनाने जैसे परंपरागत उद्योगों को जो वर्तमान में लगभग मृतप्रायः हैं, पुनर्जीवित होंगे तथा स्थानीय लोगों को रोजगार भी मिलेगा। लेकिन इसके लिए हमें खादी तथा ग्रामोद्योग और पंचायतों के साथ ही महिला सशक्तिकरण पर विशेष ध्यान देना होगा क्योंकि गांवों के कुटीर उद्योगों में महिलाओं की भागीदारी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

आज के वैश्वीकरण के दौर में जबकि पर्यटन के क्षेत्र में भारत को दक्षिण पूर्व एशियाई देशों से कड़ी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ रहा है, पर्यटन को प्रोत्साहन देना नितांत जरूरी है क्योंकि अब पर्यटन मात्र सैर–सपाटा ही नहीं बल्कि विदेशी मुद्रा अर्जन का भी प्रभावी स्रोत है और मेडिकल टूरिज्म की अवधारणा से तो इसे और भी बल मिला है।

इससे भी भारत को ग्लोबल हैल्थ डैस्टिनेशन बनाने में सहायता मिलेगी। अब विदेशी लोग अपने किसी भी रोग के निदान हेतु अपने देश में भारी–भरकम राशि खर्च करने के बजाय भारत में उपलब्ध काफी सस्ती चिकित्सा सुविधाओं और साथ ही यहां की स्वास्थ्यप्रद जलवायु की ओर तेजी से आकृष्ट हो रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार अमरीका, कनाडा, ब्रिटेन की तुलना में 10 फीसदी कीमत पर भारत में वैसा ही इलाज संभव है, चाहे वह हृदय रोग संबंधी बीमारियां हों, दंत चिकित्सा हो या अन्य। अभी मेडिकल टूरिज्म के रूप में केरल तथा गुजरात महत्वपूर्ण स्थलों के रूप में विकसित हुए हैं। आने वाले समय में हिमाचल प्रदेश के पर्यटन गांवों में भी ये सुविधाएं अवश्य उपलब्ध होंगी। अनुमान है कि वर्ष 2012 तक स्वास्थ्य पर्यटन उद्योग से दस हजार करोड़ रुपए की आय उपलब्ध होगी। चिकित्सा तथा पर्यावरण पर्यटन के संदर्भ में नवगठित उत्तरांचल राज्य में भी अपार संभावनाएं हैं। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि इस राज्य में जहां भारत का स्विटजरलैंड कहा जाने वाला छोटा सा कस्बा "कौसानी" स्थित है, वहीं सैर सपाटे तथा स्वास्थ्यप्रद जलवायु की दृष्टि से नैनीताल, अल्मोड़ा, बागेश्वर, पिंडारी ग्लेशियर, दून घाटियां भी हैं। इन स्थलों को पर्यटक गांव के रूप में विकसित किया जा सकता है और हिमाचल प्रदेश से प्रेरणा ली जा सकती है। लेकिन सर्वाधिक आवश्यकता पर्यटन स्थलों को वायु, सड़क तथा रेल मार्गों से जोड़ने की है और उसके बाद वहां विद्युत, स्वच्छ पेयजल, चिकित्सा, संचार और आवास आदि जैसी ढांचागत सुविधाओं में सुधार करना जरूरी है। यही बात राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, बिहार, मुंबई, उत्तर प्रदेश तथा दक्षिण और पूर्वोत्तर राज्यों के संबंध में कहीं जा सकती है। पूर्वोत्तर के आठ राज्यों में बनी पर्यटक नीति को और प्रभावी ढंग से कार्यान्वित करना जरूरी है। साथ ही विश्व श्रेणी के मानक आधार पर नए पर्यटन स्थलों का विकास करना, पर्वतारोहण, स्मारकों का रख–रखाव, पर्यटन स्वागत केंद्रों की बड़े पैमाने पर स्थापना करना भी आवश्यक है। गौरतलब है कि पर्यटन विभाग का उद्देश्य वार्षिक आधार पर देश में छह पर्यटन सर्किटों की पहचान कर उन्हें

अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार विकसित करने की है। आतंकवाद तथा असुरक्षा की व्याप्त भावना ने भी पर्यटन पर भारी प्रतिकूल प्रभाव डाला है। जम्मू तथा कश्मीर राज्य इसका स्पष्ट प्रमाण है। यदि समग्र रूप से देखें तो इन दोनों का पर्यटन पर लगभग 70 प्रतियरत प्रभाव पड़ा है और शेष रही सही कसर ढांचागत तथा नागरिक सुविधाओं का अभाव, होटल मालिकों व निजी पर्यटन संचालकों के बीच समन्वय के अभाव की प्रवृत्ति पूरी कर देती है।

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि पर्यटन के विकास में प्रशिक्षित जनशक्ति की निर्णायक भूमिका होती है। देश में स्थापित 21 होटल प्रबंध संस्थान तथा 13 फूड क्राफ्ट संस्थानों के अलावा भारतीय पर्यटन तथा यात्रा प्रबंध संस्थान, राष्ट्रीय जल क्रीड़ा संस्थान, नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ एडवेंचर स्पोर्टस जैसे संस्थानों की पर्यटन को प्रोत्साहन देने में महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके अलावा, पर्यटन संबंधी पाठ्यक्रम भी कालेजों में प्रारम्भ किए गए हैं लेकिन यह कटु वास्तविकता है कि इन संस्थानों से निकले अधिकांश नौजवान आज भी बेरोजगार हैं। यद्यपि वर्ष 2003–04 के दौरान पर्यटक उद्योग में विदेशी पर्यटकों के आगमन तथा उनसे प्राप्त विदेशी मुद्रा की दृष्टि से महत्वपूर्ण तेजी आयी। एक अनुमान के अनुसार जहां वर्ष 2003–04 में आने वाले विदेशी पर्यटकों में 18.5 प्रतिशत की भारी वृद्धि हुई वहीं वर्ष 2002–03 में यह प्रतिशत मात्र 1.7 था। इसी प्रकार विदेशी मुद्रा अर्जन में वर्ष 2002–03 में 3.0 बिलियन अमरीकी डालर तक पहुंच गया। विश्व पर्यटन पर इसकी भागीदारी 40 प्रतिशत है। इस संबंध में चीन की स्थिति भारत से काफी बेहतर है।

यहां हमें इस वास्तविकता को भी ध्यान में रखना होगा कि पर्यटन उद्योग को प्रोत्साहन देने के साथ ही उसका संचालन व्यवस्थित तरीके से करना भी जरूरी है। अन्यथा प्रदूषण तथा पारिस्थितिकी संतुलन के बिगड़ने का खतरा बराबर बना रहता है। इसीलिए "पारिस्थितिकी पर्यटन" की अवधारणा का महत्व स्वयंसिद्ध है। वर्ष 1992 में रिओ डी जिनेरो से अस्तित्व में आयी इस अवधारणा को उस समय सर्वाधिक लोकप्रियता हासिल हुई जब संयुक्त राष्ट्र द्वारा 2002 में "पारिस्थितिकी पर्यटन वर्ष" घोषित किया गया और जापान, आस्ट्रेलिया, फिलिपींस, इंडोनेशिया, मालदीव ने इस संबंध में महत्वपूर्ण पहल की। सार्क देशों ने भी इस संबंध में अपनी सहमति व्यक्त की और पारिस्थितिकी पर्यटन हेतु संयुक्त नीति की घोषणा की तथा जल संरक्षण और कूड़े–कचरे का प्रभावी ढंग से निपटान करने का संकल्प व्यक्त किया।

इसलिए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत को एक ऐसी संतुलित पर्यटन नीति की दरकार है जिसमें अपने देश के लोगों के साथ ही विदेशी सैलानियों को भी समान महत्व मिले, उससे राज्य विशेष के आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास में मदद मिले, लोगों को बड़े पैमाने पर रोजगार मिले और अंततः यह राजस्व अर्जन का भी महत्वपूर्ण स्रोत बने। ❑

**(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)**

# पारिस्थितिकी पर्यटन

## अनमोल विरासत का संरक्षण

डा. राजेश व्यास

विश्व के सबसे बड़े उद्योग के रूप में पर्यटन पिछले कुछ वर्षों से तेजी से उभरकर सामने आ रहा है। लगभग 34 खरब डालर के वार्षिक कारोबार वाले इस उद्योग ने विश्व अर्थव्यवस्था के विकास को नई दिशाएं दी है। पर्यटन से आर्थिक विकास की सोच के साथ ही इधर के वर्षों में पारिस्थितिक पर्यटन की आवधारणा भी तेजी से उभरकर सामने आयी है। दरअसल पारिस्थितिकी पर्यटन के जरिए ही अब पर्यटन उद्योग के महत्ती आधार के रूप में प्राकृतिक विरासत को न केवल बचाया जा सकता है बल्कि दीर्घावधि जैव–विविधता संरक्षण उपायों और स्थानीय सामाजिक तथा आर्थिक विकास के बीच संबंध भी इसी से कायम रखा जा सकता है।

पारिस्थितिकी पर्यटन कहें या फिर पर्यावरण पर्यटन–इसके तहत पर्यटन का प्रबंधन तथा प्रकृति का संरक्षण इस तरीके से करना होता है कि एक तरफ पर्यटन व पारिस्थितिकी की आवश्यकताओं के बीच संतुलन बना रहे तो दूसरी तरफ स्थानीय समुदायों के रोजगार की जरूरतों की पूर्ति होती रहे। केंद्र सरकार ने पर्यटन उद्योग एवं गैर–सरकारी संगठनों आदि के परामर्श से देश में वर्ष 1998 में ही पारिस्थितिकी पर्यटन पर नीति और दिशा–निर्देश तैयार कर दिए थे। इस नीति का उदे्दश्य हमारे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, सुरक्षा और इन्हें समृद्ध बनाना तथा पर्यावरणीय संरक्षण एवं समुदाय विकास के सकारात्मक प्रभावों के साथ पारिस्थितिकी पर्यटन की विनियमित वृद्धि सुनिश्चित करना रहा है। इसके साथ ही देश के प्रत्येक राज्य में राज्य वन विभाग या राज्य पर्यटन विकास निगमों या फिर होटल श्रृंखलाओं की भागीदारी से पर्यटन केंद्रों, लाजो, रिजार्टों, को स्थापित करने की भी योजना के क्रियान्वयन की बात कही गयी थी परन्तु 6 वर्ष की अवधि बीत जाने के बाद भी आज तक इस दिशा में कोई विशेष पहल नहीं होने की ही परिणति है कि पारिस्थितिकी पर्यटन को गंभीरता से नहीं लिया जा सका है।

इधर के वर्षों में देश में निरंतर बढ़ती जनसंख्या और स्थानीय जीवन निर्वाह के लिए प्राकृतिक स्थलों पर संसाधनों के निरंतर घटते आधार से पहले कमजोर पर्यावरण का भी निरंतर ह्रास हुआ है। देश के विशेषकर पर्वतीय पर्यटन स्थलों पर पिछले कुछ दशकों में आबादी के विस्तार, पर्यटन गतिविधियां के अधिकाधिक फैलाव के साथ ही विकास गतिविधियां यथा आवास, उद्योग, कृषि, खनन, संचार आदि के बढ़ने से वहां प्राकृतिक ह्रास होने के साथ ही वनों का आकार तेजी से सिकुड़ रहा है। इसी का परिणाम है कि प्रकृति का संतुलन भी निरंतर गड़बड़ाता जा रहा है। इससे ही दरअसल एक ओर तो देश में अकाल की विभिषिका का सामना करना पड़ता है तो दूसरी ओर बाढ़ जैसी चुनौतियों को मुकाबला तो आम बात जैसी हो गयी है। इस सबमें पर्यटन उद्योग के निरंतर होते विकास में प्रकृति संरक्षण की दिशा में गंभीर ध्यान नहीं दिए जाने की ही परणिति है कि देश के प्राकृतिक सौन्दर्य के पर्यटन स्थलों पर सड़क और भवन निर्माण के साथ ही भारी वाहनों की अव्यवस्थित आवाजाही से पहले से ही कमजोर पर्वत श्रेणियों पर अपकर्षक दबाव बढ़ा है। अलावा इसके प्रकृति पर्यटन स्थलों पर बुनियादी नागरिक तथा स्वच्छता नियमों की पालन नहीं करने से पर्वतीय क्षेत्रों में ढ़ेर सारा कचरा और वहां की पारिस्थितिकी को क्षति पहुंचाने वाली अन्य सामग्री छोड़ने से पर्यावरण ह्रास की चपेट में निरंतर पर्यटन स्थल आ रहे हैं।

पर्यटन स्थलों पर अंधाधुंध वनों की कटाई से होने वाले भवन निर्माण कार्यों के अंतर्गत भले ही पर्यटकों के लिए आवास की समस्या का हल ढूढ़ लिया गया है परन्तु इसके दुष्परिणाम वहां होने वाले पर्यावरण ह्रास के रूप में हमारे सामने हैं। ऐसे बहुत से चर्चित पर्यटन स्थलों पर अब पर्यटक जाना ही पसंद नहीं करते, चूंकि वहां अब वह पहले वाला प्राकृतिक सौन्दर्य उन्हें नहीं दिखायी देता। खोज फिर से नए पर्यटन स्थलों की होती है, वहां भी प्रश्न यही है कि आखिर कब तक ऐसा संभव हो सकेगा?

भारत विश्व में जैव विविधता संपन्न उन सात देशों में से एक है जिनकी सांस्कृतिक विरासत अत्यधिक समृद्ध है। इस रूप में वहां प्रकृति और सरंक्षण को ध्यान में रखने वाले प्रकृति पर्यटन को भी सभी स्तरों पर अपनाना जरूरी है। वैसे भी देश की अर्थव्यस्था में विदेशी मुद्रा प्राप्ति के बड़े स्त्रोत के रूप में जब पर्यटन को माना जाता है तो जरूरी हो जाता है कि पर्यटन उद्योग के विकास के उन पहलुओं पर ध्यान दिया जाए जो सीधे तौर पर इसके समुचित विकास से जुड़े हों। इस समुचित विकास में पर्यटन स्थलों के प्राकृतिक सौन्दर्य को बचाए रखना भी अत्यधिक जरूरी है। और प्राकृतिक सौन्दर्य तभी बचा रह सकता है जब वहां पर्यावरण को ध्यान में रखकर विकास गति दी जाए। पर्यावरण अथवा पारिस्थितिकी पर्यटन के प्रोत्साहन से ही इस दिशा में कारगर कदम उठाए जा सकते हैं।

पारिस्थितिकी–पर्यटन दरअसल पर्यटन उद्योग के पूर्ण एकीकरण को मान्यता प्रदान करता है, ताकि यात्रा और पर्यटन लोगों की

आय का स्त्रोत बनें व स्थानीय लोग भी पृथ्वी की पारिस्थितिकी प्रणाली के संरक्षण, सुरक्षा और बहाली में योगदान करें। ऐसे पर्यटन कि विक ास से पर्यावरण संरक्षण पर्यटन का एक महत्वपूर्ण अंग बन जाता हैं। पारिस्थितिकी पर्यटन को पर्यावरण अनुकूल गतिविधि कहा जा सकता है, चूंकि इसमें प्रकृति के प्रति उपभोक्ता दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाता है स्वाभाविक है कि इससे पर्यावरण विषयक नैतिकता को बल मिलता है। इसे इस रूप में समझें कि पारिस्थितिकी पर्यटन की आवधारणा विकास करने से पर्यटकों को प्रेरणात्मक और भावनात्मक संतुष्टि प्राप्त होती है क्योंकि इसका लक्ष्य वन्य जीवों और पर्यावरण को लाभ पहुंचना है। इस रूप में ऐसा पर्यटन प्रकृति व संस्कृति के संरक्षण के प्रति पर्यटकों को जागरूक करता है, जिसकी कि आज के संदर्भो में महत्ती जरूरत है।

यह विडम्बना ही है कि पारिस्थितिकी पर्यटन के प्रोत्साहन की दिशा में आज जब विश्व के लगभग सभी राष्ट्र लगे हुए हैं हम अभी इस ओर विशेष गंभीर नहीं हो पाये है। इसी का परिणाम है कि हमारे देश के बहुत से प्राकृतिक पर्वतीय पर्यटन स्थल अपनी आभा खोते जा रहे है। शिमला, माउन्ट आबू आदि पर्वतीय पर्यटन स्थलों का ही उदाहरण इस संदर्भ में काफी होगा जो निरंतर गंदगी व कचरे के ढेर बनते जा रहे हैं। होटलों सहित अन्य व्यावसायिक उपयोग के भवनों के निर्माण की लंबी श्रृखला से अब इन स्थानों पर प्रकृति का वह आनंद नहीं रहा जो पहले कभी हुआ करता था। इन्ही स्थानों पर पर्यटकों की आवक भी अब कम हो गयी है। निर्माण कार्यो के साथ ही सिवरेज की व्यवस्था में आए व्यावधान ने अनेक प्राकृतिक पर्यटन स्थलों को नरक सा बनाने में कोई कसर नही छोड़ी है। इस तरफ शीघ्र ही ध्यान नहीं दिया गया तो शिमला और माउन्ट आबू तो उदाहरण है, ऐसे बहुत से अन्य चर्चित स्थलों के सौन्दर्य के वजूद पर क्या प्रश्न चिन्ह नहीं लग सकता है?

वैसे पारिस्थितिकी पर्यटन की सोच कोई नई नहीं है और बहुत से स्तरों पर इस पर समय-समय पर ध्यान दिया जाता रहा है परन्तु संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम व विश्व पर्यटन संगठनों के तत्वाधान में कुछ समय पूर्व कनाडा के क्यूबेक शहर में आयोजित विश्व विश्व पर्यावरण पर्यटन सम्मेलन से पूरे विश्व का ध्यान इस ओर विशेष रूप से गया। इस सम्मेलन में दुनिया के 133 देशों के एक हजार से अधिक प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया था। इसका एक सुखद परिणाम यह रहा कि अधिकांश राष्ट्रों ने अपने देश के पारिस्थितिकी पर्यटन विकास की नीतियों को क्रियान्वित करना प्रारंभ कर दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 2002 को अंतराष्ट्रीय पर्यावरण वर्ष घोषित किया गया था साथ ही अपने घोषणा पत्र में कहा कि पारिस्थितिकी पर्यटन ऐसा क्षेत्र है जिसमें आर्थिक विकास की प्रचुर संभावनाएं तो हैं ही, साथ ही यदि इसे उचित तरीके से नियोजित, विकसित व प्रबंधित किया जाए तो यह प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण का शक्तिशाली उपकरण साबित हो सकता है।

जैव विविधता की दृष्टि से संपन्न मालदीव ने तो इसे साबित भी कर दिखाया है। मालदीव ने पारिस्थितिकी पर्यटन को गंभीरता और कारगर ढंग से अपनाया है। इस संबंद्ध में मालदीव के राष्ट्रपति का यह कहना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है कि पर्यटन उनके लिए न केवल विकास, बल्कि अस्तित्व बचाव का साधन हैं। पारिस्थितिकी आवश्यकाताओं के अनुरूप विकसित मालदीव की पर्यटन नीति का ही परिणाम है कि वहां पर्यटन-संरक्षण तथा स्थानीय लोगों के लिए रोजगार और आय के अवसर पैदा करने के बीच बेहतर संतुलन कायम है। इस प्रकार के प्रयासों की जरूरत दरअसल हमारे देश में भी अधिक है। जैव विविधता से संपन्न हमारे देश में पर्यटन के जरिये प्रकृति के निरंतर होते दोहन को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि पारिस्थितिकी पर्यटन को प्रोत्साहन सभी स्तरों पर दिया जाए। हालांकि इस दिशा में संयुक्त राष्ट्र संघ की घोषणा की भावना के अनुरूप ही देश की नई पर्यटन नीति तैयार की गयी है और जिसका लक्ष्य भी 'लोगों के बीच बेहतर समझ को बढ़ावा देना, रोजगार के अवसर पैदा करना और समुदाय, खासकर भीतरी और दूर दराज के क्षेत्रों को सामाजिक-आर्थिक लाभ पहुचाना, संतुलित एवं सतत विकास की दिशा में प्रयास करना और भारत की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित, समृद्ध और प्रोत्साहित करना है' परन्तु इस दिशा में बावजूद नीतियां की घोषणा के कोई ठोस पहल अभी तक नहीं की जा सकी है। यहां कहा जा सकता है कि देखा-देखी नीति बनाना एक बात है और उस पर अमल करना दूसरी बात। हम दूसरी बात का क्रियान्वयन जब तक नहीं करेंगे तब तक सही मायने में पर्यावरण पर्यटन को बढावा नही दे पाएंगे, जिसकी की आज तेजी से अपने पैर पसारते देश के पर्यटन उद्योग को जरूरत है।

पर्यटन विकास में देश में तेजी से अपनी विशिष्ट पहचान बनाने वाले राज्य केरल पारिस्थितिकी पर्यटन को अपनी नीति 'टूरिज्म विजन 2025' में प्रकृति और संस्कृति के संरक्षण के साथ पर्यटन विकास' प्राथमिकता से रखा है। इसके अलावा हिमाचल प्रदेश द्वारा भी पारिस्थितिकी पर्यटन विकास की नीति घोषित की गयी, उतरांचल और पश्चिम बंगाल के वन निगमों द्वारा भी पारिस्थितिकी पर्यटन गतिविधिया प्रारंभ की गयी है परन्तु अधिकतर ऐसे प्रयासों की घोषणाएं ही अभी तक सामने आयी है, व्यावहारिक रूप में पारिस्थितिकी पर्यटन के विकास की दिशा में कदम इसमे जनभागीदारी के रूप में अभी तक सामने नहीं आया है। इस दिशा में जरूरत इस बात की है कि ट्रेकिंग, हाइकिंग, पर्वतारोहण, नदी नौकायन, वन-उपवन या विरासत स्थलों की यात्रा, वन्य जीव अभ्यारण्यों की यात्रा, झीलों-घाटियों के साथ ही स्थानीय समुदायों अथवा उनके पुरातन वातावरण में प्रवास आदि विभिन्न पारिस्थितिकी पर्यटन गतिविधियों को कारगर बनाने के लिए देश के ऐसी संभावना वाले सभी पर्यटन स्थलों पर विशेष प्रयास समन्वित रूप में किए जाए। केंद्र सरकार के साथ-साथ राज्य सरकारों द्वारा इसके तहत पारिस्थितिकी पर्यटन का आनंद उठाने के इच्छुक पर्यटकों को छोटे समूहों में वहां ले जाए जाने के पैकेज टूर विकसित करने के साथ ही उन्हें पर्यावरण कि प्रति अनुराग पैदा करने की आवश्यकता है ताकि उन्हें प्रकृति की प्रशंसा करने के लिए प्रेरित किया जा सके। पर्यटन के तहत इस बात का भी विशेष ध्यान रखा जाए कि पर्यटकों द्वारा की जाने वाली पर्यटन गतिविधियां पर्यावरण अनुकूल हों। ऐसी गतिविधिया स्थानीय लोगों को उनकी संस्कृति, परंपराओं और रीति-रिवाजों के साथ पर्यटन उद्योग में प्रमुख कर्ताओं के रूप में

शामिल किया जा सके और वे स्वयं भी बाहर से आने वाले पर्यटकों की जिज्ञासाओं को संतुष्ट करने में सक्षम हों।

देश के पर्वतीय व प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण पर्यटन स्थलों के आस–पास के स्थलों पर इधर के वर्षों में तेजी से होने वाला वनों की कटाई कार्य पारिस्थितिकी पर्यटन के विकास की सबसे बड़ी बाधा है। इस दिशा में सैरगाहों से सटे इलाकों में पेड़ों की कटाई को दृढ़ इच्छा शक्ति से रोके जाने के नियम बनाए जाने भी अधिक जरूरी है, ये नियम कागजों में बने ही नहीं बल्कि व्यावहारिक क्रियान्वित भी हो, इसके साथ ही बर्बाद हो चुके जंगलों को पुनर्जीवित करने के प्रयास भी इस दिशा में प्रभावी पहल हो सकती है। पर्वतीय पर्यटन स्थलों पर भवन निर्माण गतिविधियां पर भी कड़ी रोक लगायी जानी जरूरी है चूंकि इससे हरियाली की सघन श्रृंखलाएं अब समाप्त सी होती जा रही हैं। पर्यटन संवर्धन की सभी गतिविधियों में पर्यावरण और परिवेश के रखरखाव के बुनियादी ढांचे और सुविधाओं की स्थापना का पूरा ध्यान रखा जाकर भी परिस्थितिकी पर्यटन को सही मायने में विकसित करने की दिशा में कदम उठाया जा सकता है। प्रकृति के संरक्षण के साथ–साथ पर्यटन को दरअसल अब स्थानीय लोक कला तथा संस्कृति को जिन्दा रखने तथा बढ़ावा देने का माध्यम बनाए जाने की भी जरूरत है। तभी न केवल संस्कृति का संरक्षण होगा बल्कि पर्यटन में स्थानीय लोगों की भागीदारी भी समुचित रूप में होगी।

पर्यटन के निरंतर दोहन के तहत जब हम आर्थिक रूप में लाभ कमा रहे हैं तो क्या जरूरी नहीं है कि प्रकृति व संस्कृति के संरक्षण की दिशा में भी हम पहल करें। पारिस्थितिकी पर्यटन के तहत पर्यटन के ऐसे प्रबंध जिसमें मानव प्रकृति के आंतरिक संतुलन को क्षति पहुंचाए बिना उससे अधिकतम लाभ प्राप्त कर सके, इस दिशा में महत्ती पहल हो सकता है। ❑

**(लेखक टूरिज्म मैनेजमेंट में पीएचडी तथा राजस्थान सरकार में विशेषाधिकारी हैं।)**

# पर्यावरण की पुनर्बहाली में सैनिकों की एक सफल कहानी

उत्तरांचल के पौड़ी गढ़वाल जिले में स्थित लैंसडाउन एक सुन्दर पहाड़ी स्थल है। यह खूबसूरत वादियों में प्राकृतिक नजारों से संपन्न है। इस स्थान के स्वास्थ्यकर जलवायु और प्राकृतिक सौन्दर्य से आकर्षित होकर अंग्रेजों ने वहां पर छावनी स्थापित की थी और 1890 में लॉर्ड लैंसडाउन के नाम पर इस स्थान का नाम लैंसडाउन रखा गया। गढ़वाल राइफल्स ने 1921 में गढ़वाल राइफल्स रेजीमेंट सेंटर (जीआरआरसी) का कमांड ऑफिस (आदेश कार्यालय) लैंसडाउन में स्थापित किया। लेकिन पिछले पांच दशकों से बढ़ते शहरीकरण, जनसंख्या–वृद्धि, वनों की आवाजाही का खामियाजा, वनाच्छादन में कमी, गर्मी के मौसम में जल की कमी और वायु–प्रदूषण आदि के रूप में इस पर्वतीय स्थल को भी उठाना पड़ा। लैंसडाउन के 1931 के मानचित्र में 35 प्राकृतिक झरनों को दिखाया गया है। 1999 में इन 35 स्थलों के प्रत्यक्ष सर्वेक्षण में पाया गया कि इनमें से केवल आठ प्राकृतिक जल स्रोत से पानी मिल रहा है, जबकि शेष सूख गए हैं। इस चौंकाने वाले तथ्य ने रेजीमेंट के अधिकरियों की आंखें खोल दीं। इसी के चलते एक बहुमुखी रणनीति बनाकर 1999 में वहां का पर्यावरण बचाने के लिए कई कदम उठाए गए जिन्हें बाद के वर्षों में लागू किया गया।

जीआरआरसी ने जल स्रोतों की बहाली का कार्य और मिट्टी के 12 चेक डैम के जरिए जलसंग्रह की 2 से तीन मीटर की ऊंचाई और 12–15 मीटर की चौड़ाई के चेक डैम बनाए जो 45 से 60 दिनों तक वर्षा के जल को संग्रहित रख सकने में सक्षम थे। इन बांधों से आसपास के क्षेत्रों को हरा–भरा बनाने में काफी मदद मिली। इन मिट्टी के बांधों की सफलता के बाद प्रयोग के तौर पर सीमेंट का चेक डैम बनाया गया। इस सफल प्रयोग के बाद वर्ष 2002 और 2003 में दो ऐसे ही बांध बनाए गए। इनकी कुल जलसंग्रह क्षमता 45 लाख गैलन है। इन बांधों पर 13 लाख रुपये की लागत आई। इनमें से एक बांध में मछली पालन की योजना शुरू की गई है।

## संसाधनों का जीर्णोद्धार

वर्षाजल इकट्ठा करने की परियोजनाओं के फलस्वरूप लैंसडाउन में 6 सूखे पेड़े झरनों से फिर पानी मिलने लगा है। नालों के आस–पास हरियाली बढ़ी है। सैनिकों और नागरिकों को जल उपलब्ध कराने के लिए आठ हैंडपंप लगाए गए हैं। बांधक्षेत्र के इर्द–गिर्द हैंडपंपों में जल की उपलब्धता बढ़ी है। पौधे लगाने के लिए भी वहां काफी जल उपलब्ध है। गर्मी के दिनों में पानी के टैंकरों पर निर्भरता घटी है। लैंसडाउन में बांध से खो नदी का जल स्तर बढ़ा है। खो नदी शिवालिक की तलहटी में स्थित कोटद्वार की जीवनधारा है।

सीमेंट से बने चेक बांधों का साफ किया जल पाइपलाइनों के जरिए पीने के लिए भेजा जा रहा है। पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए नदी के आस–पास डैम से बने क्षेत्र को सुंदर बनाया गया है। भूस्खलन को रोकने के और झीलों में गाद कम करने के लिए पत्थर की 22 दीवारें बनाई गई हैं। वनस्पति रहित क्षेत्रों में जीआरआरसी ने काफी संख्या में बलूत और देवदार जैसे वृक्ष लगाये गये हैं। देवदार और बलूत के 40 एकड़ क्षेत्र में पौधरोपण भी किया गया है। ❑

# वैट : पारदर्शी और समरूपी कर सुधार

वेद प्रकाश अरोड़ा

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मूल्यवर्धित कर अर्थात् वैट, टैक्स क्षेत्र का सबसे बड़ा, व्यापक, पारदर्शी, प्रगतिशील और समरूपी कर सुधार है। यह एक देश, एक कर प्रणाली तथा एक बाजार की परिकल्पना पर आधारित है। यह न केवल एक ही राज्य के अंदर अलग-अलग तरह के करों से छुटकारा दिलाता है, बल्कि विभिन्न राज्यों के बीच बिखरे कर सूत्रों को एक ही माला में पिरोने, देश की एकता अखंडता की भावना को भी बल प्रदान करने का अनूठा प्रयास है। बिक्री कर का यह अद्यतन और नया रूप इस वर्ष एक अप्रैल को 28 में से 20 राज्यों में एक साथ लागू हो गया। इन राज्यों ने पांच दशक पुरानी बिक्री कर प्रणाली को अलविदा कर नए युग की नई बिक्री कर प्रणाली का प्रचलन आरंभ कर दिया। कुछ राजनीति विरोध, कुछ भ्रांतियों और कुछ प्रशासनिक ढिलाई के कारण, नई मूल्य वर्धित सेल्स टैक्स व्यवस्था भले ही कुछ राज्यों में लागू नहीं हो पाई है लेकिन कालांतर में ये राज्य भी कुछ संशोधनों के बाद वैट परिवार के सदस्य बन जायेंगे। इसमें कोई दो राय नहीं। यह कम सराहनीय बात नहीं है कि भारत चार वर्षों की कम अवधि में ही इस टैक्स प्रणाली को अपना कर विश्व के 130 से अधिक देशों की पंक्ति में जा खड़ा हुआ है। इस संदर्भ में इस तथ्य को आंखों से ओझल नहीं किया जा सकता कि यूरोपीय संघ, कनाडा और ब्रिटेन में वैट लागू होने में कहीं अधिक वर्ष लगे थे। फ्रांस की धरती में जन्म लेने वाली यह बिक्री कर प्रणाली अभी तक अमरीका में लागू नहीं हुई है। चीन ने इसे अपनाया और वहां यह सफल रही है। इधर हरियाणा ने यह प्रणाली अन्य राज्यों से कहीं पहले अपना और राजत्व में वृद्धि कर अन्य राज्यों के सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया। कुछ औद्योगिक सूत्रो के अनुसार वैट लागू होने के बाद सरकार को 750 अरब का अतिरिक्त राजस्व प्राप्त होगा। वैट की अधिकार प्राप्त समिति ने 554 से वैट कानून की घोषणा की है। इन में से तीन उत्पादों पर एक प्रतिशत 284 उत्पादों पर चार प्रतिशत और 185 उत्पादों पर 12.5 प्रतिशत कर लगाने की घोषणा की है। 82 उत्पादों को कर मुक्त श्रेणी में रखा गया है। दिल्ली सरकार ने इन 82 उत्पादों में आधे से कम केवल 40 उत्पादों को ही वैट दायरे से बाहर रखा है। जून 2005 के बाद समिति इस की कुछ दरों और दायरें की समीक्षा कर सकती है। कुछ बची-खुची विसंगतियों को दूर करने और राज्यों में समानता को पूर्णता की सीमा तक ले जाने के लिए वैट वाली वस्तुओं की संख्या बढ़ाई जा सकती है यह संख्या दो हजार तक जा सकती है। यहां यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि वैट है क्या और यह बिक्री कर के स्थान पर क्यों लाया गया है। पहले इसकी परिभाषा और व्याख्या को लेते हैं। अगर किसी वस्तु में कोई नई वस्तु मिला कर उसे उन्नत या बढ़िया बना दिया जाए या धातुओं को मिलाने से कोई नई उत्कृष्ट चीज बना दी जाए तो उसका मूल्य बढ़ जाएगा, मूल्य बढ़ेगा तो कर भी बढ़ेगा। इसी तरह अगर किसी अनगढ़ या कच्ची प्राथमिक वस्तु को नवीनतम प्रौद्योगिकी से प्रसंस्कृत, चमकदार, प्रभावकारी, आधुनिक और साफ सुथरी बना दिया जाए तो इसमें प्रयुक्त प्रौद्योगिकी के कारण मूल वस्तु का मूल्य बढ़ जायेगा, मूल्य बढ़ेगा तो कर भी बढ़ेगा यह है मूल्य वर्धित कर की मोटी परिभाषा इसी तरह वस्तुओं में प्रौद्योगकीय सेवाओं के जुड़ने, जोड़ने से भी मूल्य का बढ़ना स्वाभाविक है लेकिन हर बार नई जोड़ी गई नई वस्तु और नई सेवा पर ही कर लगना चाहिए, मूल वस्तु या बीच के स्तरों में जुड़ी वस्तु या सेवा को मिला कर समग्र वस्तु पर बार बार कर नहीं लगना चाहिए, वरना यह एकतरह से उपभोक्ता की लूट के बराबर होगा। कर पर कर लगने से मंहगाई बढ़ेगी। नए तरीके से शुल्क निर्धारण में वस्तुओं का सस्ता होना स्वाभाविक और अनिवार्य है। इस पद्धति से उपभोक्ताओं को लाभ होगा। जाने माने अर्थशास्त्री एलन टेइट ने 35 देशों में वैट के प्रभाव के अध्ययन पर पाया कि जहां वैट का मूल्य सूचकांक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा वहां इस से टैक्स-एकल घरेलू उत्पाद के अनुपात में गिरावट आई। नए शुल्क निर्धारण में व्यापारियों या दुकानदारों को भी लाभ होगा। यह तथ्य एक उदाहरण से स्पष्ट हो जायेगा। अगर किसी कपड़े से कमीज बनाई जाए तो दर्जी ने जितने मूल्य पर कमीज़ बेची और जितने मूल्य पर कपड़ा खरीदा उन दोनों के अंतर पर टैक्स लगेगा। चूंकि दर्जी कपड़े पर पहले टैक्स दे चुका है, इसलिए उसे इसके लिए क्रैडिट अथवा वापिस राशि मिलेगी। वर्तमान कर प्रणाली में दर्जी को खरीदे गए कपड़े पर क्रेडिट नहीं मिलता, हालांकि उस पर पहले टैक्स लग चुका है। अगर कोई दुकानदार एक सौ पैंट बेचे और खाते में 10 की बिक्री दिखाए तो वह बेची गई 90 पैंटों पर टैक्स तो बचा लेगा लेकिन इससे उसे नुकसान भी होगा क्योंकि उसे पैंटों के लिए खरीदे गए, सारे कपड़े पर टैक्स की एवज से क्रेडिट नहीं मिलेगा। वैट प्रणाली तभी ठीक से चलेगी जब खातों को पूरा और ठीक से भरा जाए। कम बिक्री दिखाने पर दुकानदार, को उसी अनुपात में कम खरीद भी खातों में दिखानी होगी। लेकिन मूल व्यापारी के खाते में पूरे कपड़े की बिक्री दिखाई गई होगी, तो लेखा परीक्षण में उसका पकड़ा जाना निश्चित है। वैट से बिचौलिया व्यापारियों पर भी जबरदस्त प्रहार होगा, जो दिल्ली और मुम्बई जैसे बड़े नगरों में अधिक सक्रिय रहते हैं। दिल्ली प्रमुख रूप से वितरण केंद्र है।

यहां उत्पादन तो होता है, लेकिन गौण रूप से और छोटे स्तर पर लेकिन यहां का

उपभोक्ता बाजार बड़ा है। बिचौलिया व्यापारी बाहर से माल खरीदते और यहां बेचते है। अगर केंद्रीय बिक्री कर और पथ कर यहां बना रहा तो वैट के साथ–साथ इन दो करों का भुगतान करना उनके लिए भारी पड़ेगा और लाभ कम हो जायेगा। साथ ही आस–पास के राज्यों में मूल्यों में समानता होने से वे मूल्यों में हेराफेरी नहीं कर सकेंगे। इससे भी उनके मुनाफे पर चोट पड़ेगी। यहां इस बात की संभावना बनी रहेगी कि ये बिचौलिए, वैट वाले उपभोक्ता बाजारों से बिना वैट वाले राज्यों के बाजारों में चले जाएं, क्योंकि वहां हेरा–फेरी की काफी गुंजाइश रहेगी। वैट के पूरी तरह और पूरे देश में लागू होने के बाद उसकी खामियों को एक–एक दूर किया जा सकता है और किया जायेगा। जैसा कि श्वेत पत्र में कहा गया है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने भी वर्ष 2001 में 'द मोडर्न वैट' नाम से अपनी पुस्तिका में कहा था वैट को निर्बाध रूप से लागू करने के लिए संक्रमण काल डेढ़ दो वर्ष से कुछ अधिक रखना चाहिए। लेकिन उसे प्रभावी रूप से अमल में लाने के लिए कई वर्ष लग सकते हैं और इस दौरान अड़चनों को एक–एक कर दूर किया जा सकता है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि भारत में वैट के लिए 1980 से ही कदम उठने बढ़ने लगे थे। तब चुनींदा अंतर्वी प्रयुक्त वस्तुओं पर ही क्रेडिट मिला करता था। पहले पहल इसे संशोधित वैट अथवा मॉड वैट नाम दिया गया। बाद में यही केंद्रीय वैट अथवा सैनवेट कहलाने लगा। नई–नई चीजों के शामिल होते जाने पर दरों की संख्या और क्षेत्र भी बढ़ता चला गया।

कालांतर में यह केंद्र और राज्य दो स्तरों पर लागू हुआ। अब कुछ संशोधनों के साथ यह जिस रूप में लागू किया गया उससे इंस्पेक्टर राज अथवा मौके पर इंस्पेक्टर को भेज कर छानबीन करने का सिलसिला समाप्त हो जायेगा। साथ ही व्यापारियों, विनिर्माताओं और दुकानदारों का खुद का किया हुआ आंकलन ही इंस्पेक्टर की रिपोर्ट का स्थान ले लेगा। निसंदेह कर का सारा ढांचा सरल कम खर्चीला, सुबोध और पारदर्शी हो जायेगा। बिक्री कर उत्पाद शुल्क, प्रवेश शुल्क, विलासिता शुल्क और चुंगी जैसे अनेक स्थानीय टैक्सों से मुक्ति मिलेगी। दूसरा महत्वपूर्ण बदलाव यह होगा कि अब एक ही टैक्स मूल्यवर्धन के प्रत्येक पड़ाव अथवा चरण पर लगेगा। जितनी बार वस्तु या सेवा से मोल बढ़ेगा, उतनी बार चढ़े हुए मोल पर ही टैक्स लगेगा। इसकी वसूली प्रत्येक चरण की बिक्री पर होगी। साथ ही पिछले चरण या निविष्ट वस्तु पर दिए गए टैक्स की वापसी अथवा भुगतान की भरपाई की जायेगी।

यह क्रम वस्तुओं के उत्पादन से लेकर वितरण तथा सुविधाओं और सेवाओं को वृद्धि तक सभी वाणिज्यिक गतिविधियों पर लागू होगा। इससे बिक्री कर के सोपानी या पसरते प्रभाव का निराकरण भी होगा। निसंदेह वैट वर्तमान बिक्री कर प्रणाली का नया अवतार अथवा सुधरा संस्करण है। यह बिक्री कर मौजूदा विसंगतियों, विषमताओं और कमियों को दूर करता हुआ सभी के लिए हितकर और लाभकारी होगा। नई कर प्रणाली में न सिर्फ पहले की गई खरीदों पर लगे टैक्स की वापसी होगी, बल्कि इस समय लगे हुए अन्य टैक्सों के भार से भी छुटकारा मिलेगा, इन टैक्सों में कारोबारी टैक्स, बिक्री कर पर अधिभार, अतिरिक्त अधिभार और विशेष अतिरिक्त कर भी शामिल हैं। इतना ही नहीं जिस केंद्रीय बिक्री कर के चंद वर्षों तक बने रहने पर व्यापारियों और कुछ राजनीतिक दलों को आपत्ति है, उसे भी क्रमिक रूप से समाप्त कर दिया जायेगा। इस तरह समग्र टैक्स भार को तर्क संगत बना दिया जायेगा।

## करो की संख्या घटी

वैट प्रणाली में लगभग 554 वस्तुओं पर लगने वाले वैट की मात्र दो बुनियादी दरें– 4 और 12.5 रखी गई हैं, जब कि पहले दरों की चार–पांच श्रेणियां – 0,4,8,12 और 20 थी। अब दो बुनियादी दरों के अलावा केवल सोने चांदी के आभूषणों के लिए एक प्रतिशत की एक अलग विशेष वैट दर होगी। कर मुक्त वस्तुओं की एक विशिष्ट श्रेणी भी अलग से बनाई गई है। दरों की संख्या सीमित और समान करके राज्यों के बीच असंतुलन और विषमताओं से उपजी रंजिश और मनमुटाव भी दूर करने का प्रयास किया गया है। अब व्यापारियों के लिए बेईमानी को गुंजाइश भी कम रह जायेगी। दुकानदारों में यह प्रवृत्ति आम पाई जाती है कि वे चीजों के बिक्री–मूल्य की रसीद अर्थात् बीजक नहीं देते। इससे जहां खरीददार कम मूल्य पर चीज खरीद कर खुश होता है, वहां दुकानदार खातों में कम बिक्री दिखा कर और करों की गिरफ्त से बच कर कहीं अधिक फायदे में रहता है। लेकिन अब बेईमानी के रास्ते या तो बंद या सकरे हो गए हैं। वित्त मंत्री श्री चिदंबरम ने घोषणा की है कि अगर संक्रमण काल में किसी राज्य को राजस्व की हानि हुई तो सरकार पहले वर्ष घाटे की शत प्रतिशत भरपाई करेगी। दूसरे वर्ष 75 प्रतिशत और तीसरे वर्ष 50 प्रतिशत क्षतिपूर्ति करेगी। संविधान की राज्य सूची की प्रविष्ट 54 के अंतर्गत वैट जैसे सभी मामलों पर फैसला करने का अधिकार राज्यों का है। इसीलिए वैट पर और उससे संबद्ध मामलों पर सहमति बनाने और सर्वसम्मत निर्णय के लिए केंद्र ने पहल या सहायता जरूर की है, लेकिन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप नहीं किया है। उसकी भूमिका सुविधा प्रदानकर्ता, प्रेरक, भ्रमनिवारण अथवा मार्गदर्शक की रही है, जोर–जबरदस्ती या अपनी बात थोपने की नहीं। यही कारण है चार वित्तमंत्रियों और तीन सरकारों को वैट को क्रियान्वयन की स्थिति तक पहुंचाने में विलंब हुआ है।

## रियायतें

राज्यों को रियायतें देने तथा एकरूपता और एक सुरता लाने में कुछ समय तो लगना ही था। इन रियायतों के अनुसार वाणिज्य कर आयुक्त की अनुमति के बिना कोई इंस्पेक्टर व्यावसायिक परिसर का निरीक्षण नहीं करेगा। वैट के दंड प्रावधान पहले छह महीनों में लागू नहीं किए जाऐंगे। राज्यों को छूट दी गई है कि अगर वे चाहें तो वैट के लिए कारोबार की आरंभिक या निम्नतम सीमा पांच लाख से बढ़ाकर दस लाख और अधिकतम सीमा 40 लाख से बढ़ा कर 50 लाख रुपये कर सकते हैं। पांच लाख रूपये की यह सीमा भी व्यापारियों के कुल कारोबार पर नहीं, बल्कि कर योग्य कारोबार पर लागू होगी। यह कदम अधिकतम सहमति हासिल करने के लिए उठाया गया, ताकि राज्य अस्वस्थ होड़ से बच जाएं और वैट को समान रूप से लागू करें। वैसे भी वैट का मूल स्वरूप को बिगाड़े बिना राज्य आवश्यकतानुसार कुछ उपयुक्त बदलाव कर सकते हैं। जैसे नमक और अनाजों पर वैट लागू करने का निर्णय राज्यों की इच्छा पर छोड़ दिया गया है। वे चाहें तो पहले वर्ष अनाजों और बीजों को नई कर

प्रणाली से बाहर रख सकते हैं। सच तो यह है कि राज्यों के वित्त मंत्रियों की वैट संबंधी अधिकार प्राप्त समिति द्वारा जारी श्वेतपत्र, वैट ढांचे में एकरूपता और वांछित संघीय लचीलेपन के बीच संतुलन रखने का सामूहिक प्रयास है। इसमें यह प्रगतिशील प्रावधान भी है कि वैट के लिए शुरुआती कदम उठाते हुए परवर्ती वर्षों में प्राप्त अनुभव के साथ-साथ समयानुकूल और जरूरत के अनुसार सुधार किए जा सकते हैं। श्वेत पत्र में आश्वासन दिया गया है कि केंद्रीय बिक्री कर चरणबद्ध तरीके से हटा लिया जायेगा। वर्ष 2006-07 में इसे चार प्रतिशत से घटा कर दो प्रतिशत और 2007-08 के दौरान दो प्रतिशत से से कम कर शून्य कर दिया जायेगा। इसके आलावा पांच लाख से 50 लाख तक वार्षिक कारोबार पर व्यापारी और दुकानदार या तो वैट दे सकते हैं या विकल्प के रूप में अपने कुल कारोबार के 0.25 प्रतिशत पर कम्पोजिट टैक्स समग्र कर जमा करा सकते हैं। वैट समिति अगले वित्तवर्ष की पहली तिमाही के बाद कई वस्तुओं पर वैट करों की समीक्षा करने पर भी सहमत हो गई है। यह इसलिए कि फुटकर व्यापारियों, थोक व्यापारियों, कारखाना मालिकों और दुकानदारों का एक हिस्सा इस बिक्री कर प्रणाली का विरोध कर रहा है। उनक विरोध वैट लागू करने के तौर तरीके, उस के समय तथा वैट बैठकों में तय कुछ शर्तों को लेकर है। संक्षेप में कह सकतें है कि यह विरोध मुख्यतया दो कारणों के कारण चल रहा है। एक यह कि वैट संबंधी अधिकारिता समिति में तय हुआ था कि वैट को सभी राज्यों में एक साथ लागू किया जाएगा और दूसरा यह कि मूल्य वर्धित बिक्री कर लागू होने पर केंद्रीय बिक्री कर और पथ कर हटा लिया जाएगा। विपक्ष तर्क है कि वैट तभी सार्थक और सफल होगा जब इसे एक साथ सारे भारत में एक छोर से दूसरे छोर तक लागू किया जाए, खंडों या टुकड़ों में नहीं वरना सिद्धान्तविहीन, भ्रष्टचारी और मुनाफाखोर लोग नई कर प्रणाली की विसंगतियों, कमजोरियों, खामियों तथा स्वयं बिक्री कर विभाग के भ्रष्ट कर्मचारियों से सांठ-गांठ कर अपनी रोटियां सेकने से बाज नहीं आयेंगे और इस विश्वव्यापी प्रगतीशील वैट योजना को पलीता लगा देंगे। उनका दूसरा तर्क है कि केंद्रीय बिक्री कर और राज्य मूल्यवर्धित कर दोनों का साथ-साथ बना रहना, वैसा ही होगा जैसे एक म्यान में दो तलवारें। जब वैट राज्यों के बिक्री कर के स्थान पर लाया गया है तो केंद्रीय बिक्री कर के बने रहने का कोई तुक नहीं, भले ही वह स्थाई रूप से ही क्यो न हो। केंद्रीय बिक्री कर को थोप रखने से उपभोक्ताओं को दो बिक्री करों की मार झेलनी पड़ेगी, चीजें तो मंहगी होगी ही, यह राज्यों क्षेत्र में हस्तक्षेप भी होगा, क्योंकि बिक्री कर राज्यों की विषय सूची में आता है। फिर पथ कर के बने रहने से भी कुछ राज्य सरकारें सकपका सी गई हैं। इस समांतर कर प्रणाली से केंद्र और राज्यों के बीच भ्रांतियां, गलतफहमी और मनमुटाव पैदा होगा। ये राज्य, इसे इस संविधान के संघीय स्वरूप के लिए भी अहितकर मानते हैं। कुछ राज्यों और मुख्य विपक्षी दल के प्रतिरोध की तीव्रता वित्तमंत्री श्री पी. चिदंबरम के दो आश्वासनों को देखते हुए हट जाने के आसार है। एक आश्वासन यह है कि केंद्रीय बिक्री कर महज अंतरिम और संक्षिप्त अवधि के लिए ही है। स्थाई नहीं है। दूसरा आश्वासन यह है कि शुरूआती वर्षों में अगर राज्यों को राजस्व में कोई हानि हुई तो उसकी क्षतिपूर्ति कर दी जायेगी। इस संदर्भ में इस बात को भी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि वैट समिति की समीक्षा बैठकें निरंतर होती रहेगी और उनमें शिकवे शिकायतों को दूर करने का भरसक प्रयत्न किया जायेगा जैसा कि श्वेत पत्र में कहा गया है। इन प्रयासों और आश्वासनों के संदर्भ में कह सकते हैं कि वैट प्रणाली निश्चित रूप से सारे देश में लागू होगी और जिस तरह अन्य देशों के सभी वर्ग और स्वयं सरकारें इस प्रणाली से लाभान्वित हुई हैं, उसी तरह भारत में वैट प्रणाली सर्वजन-हिताय और सर्वजन सुखाय होगी तथा भ्रष्टाचार के घटने-मिटने से सरकार के वित्तीय संसाधनों में उपेक्षित उछाल लायेगी। लेकिन अंतरिम अवधि में फैली भ्रातियों के बीच सिद्धांतहीन दुकानदार और उपभोक्ताओं को जागरूकता से और सरकारों को अत्यंत सावधानी से काम लेना होगा।

**(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)**

## वैट प्रणाली का प्रवर्तन और उद्‌गम

पहली अप्रैल, 2005 से 21 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में वैट लागू किया गया है। निविष्ट कर क्रेडिट के साथ वैट सरल, पारदर्शी, बहु-स्तरीय कर है, जो करों की निरंतरता को समाप्त करता है और परिणामी मूल्य वृद्धि का परिहार करता है। इसके अलावा, जैसे कि अधिकार प्राप्त समिति द्वारा निर्णय लिया गया है, यह आशा की जाती है कि वस्तुओं की खरीद कर, अतिरिक्त बिक्री कर, अधिभार, प्रवेश कर (चुंगी के बदले में नहीं) वैट में सम्मिलित हो जाएंगे। अतः वैट करों की बहुलता को कम करेगा और अंततः साधारण जनता के लिए लाभदायक होगा।

घरेलू व्यापार करों के सुधार के लिए विचार-विमर्श तथा चर्चा की प्रक्रिया राज्य/संघ राज्य क्षेत्रों के वित्त मंत्रियों द्वारा 1994 में शुरू की गई थी। राज्यों की मौजूदा बिक्री कर प्रणालियों को प्रतिस्थापित करके मूल्य वर्धित कर (वैट) शुरू करने के लिए गंभीर चर्चाएं दिसम्बर, 1995 में डा. मनमोहन सिंह, तत्कालीन केंद्रीय वित्त मंत्री द्वारा बुलाई गई राज्य/संघ राज्य क्षेत्रों के मुख्य मंत्रियों की बैठक में शुरू की गई थी। 16 नवम्बर, 1999 को हुई मुख्य मंत्रियों की बाद की बैठक में यह निर्णय लिया गया था कि राज्य स्तरीय वैट लागू किया जाना चाहिए। इसे 22 जून, 2000 और 5 जुलाई, 2001 को हुए मुख्य मंत्रियों के बाद के सम्मेलनों में पुनः दोहराया गया था। जुलाई, 2000 में मुख्य मंत्रियों की सिफारिश पर राज्य के वित्त मंत्रियों की अधिकार प्राप्त समिति का गठन, अन्य बातों के साथ-साथ, वैट को लागू करने की प्रक्रिया का अनुवीक्षण करने के लिए किया गया था। 18 जून, 2004 को हुई राज्य वित्त मंत्रियों की अधिकार-प्राप्त समिति की बैठक में 1 अप्रैल, 2005 से राज्य स्तर पर वैट क्रियान्वित करने के लिए मौटे तौर पर सर्वसम्मति हुई थी।

# वैट : भारतीय अर्थव्यवस्था और विश्व बाज़ार

अरुण कुमार

वैल्यू एडेड टैक्स (वैट) प्रणाली दुनिया के 130 देशों में लागू है। लंबी यात्रा के बाद अब यह भारत के विभिन्न राज्यों में भी लागू होने जा रही है। अनेक कारणों से वैट का विरोध भी होता रहा है। कई स्थानों पर हड़तालें भी हुईं। पर वित्तमंत्री पी. चिदंबरम के आश्वासन के बाद परिदृश्य बदला है। तकरीबन 21 राज्यों ने वैट को एक अप्रैल से लागू कर कर दिया गया है। वित्तमंत्री ने आश्वासन दिया है कि तीन सालों में केन्द्रीय बिक्री कर समाप्त कर दिया जाएगा और राजस्व के नुकसान की भरपाई की जाएगी। 24 मार्च को हुई उच्चाधिकार समिति की विशेष बैठक में जून के बाद कई सामानों पर वैट की दरों की समीक्षा किए जाने पर सहमति जताई गई। 2001 में शुरू हुई इस समिति की बैठकों की कड़ी में यह 89वीं बैठक थी।

उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, तमिलनाडु और पांच भाजपा शासित राज्यों से भी वैट प्रणाली को लागू करने के वास्ते बातचीत चल रही है। कई कारणों से राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और झारखंड ने फिलहाल वैट से हाथ पीछे खींच लिए हैं। पर व्यापक सहमति तो है ही। कहा जा सकता है कि राज्यों और केन्द्र में सहमति का दायरा बढ़ता जा रहा है।

उद्योग जगत का मानना है कि सभी राज्यों को एक साथ वैट प्रणाली को लागू करना चाहिए। ऐसा नहीं करने पर उद्योग और व्यापार में भ्रम का माहौल पैदा हो सकता है। पूरे देश में लागू होने से विदेशों में भी सकारात्मक संकेत जाएंगे। तभी भारत को एक साझा बाजार के रूप में माना जाएगा। इसका महत्व इसलिए भी बढ़ रहा है क्योंकि विदेशी निवेशकों की भारत में दिलचस्पी दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। हमने कस्टम ड्यूटी की दरों को कम किया है और आयात के अन्य अवरोधों को दूर करने की कोशिशें की हैं ताकि भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व बाजार से जोड़ा जा सके। वैट प्रणाली को इसी पृष्ठभूमि में देखा जाना चाहिए। टैक्स के भारी बोझ को कम करने से भारतीय उद्योग की स्पर्धा करने की क्षमता बढ़ेंगी। वैट से कर की दरें नहीं बढ़ेगी। टैक्स के आधार का विस्तार हो जाएगा। नतीजतन पूरी अर्थव्यवस्था में वैल्यू एडिशन से राजस्व में भी इजाफा होगा। पारदर्शिता से कीमतें भी नीचे की ओर सरकने लगेंगी। स्वाभाविक है कि अंततोगत्वा उपभोक्ता ही हर दृष्टि से फायदे में रहेगा। बिक्री कर को सरल और न्यायोचित बनाने के लिए ही मूल्य वर्धित कर यानी वैल्यू एडेड टैक्स (वैट) प्रणाली की शुरुआत की गई है। वर्तमान में जो बिक्री कर की प्रणाली है, उसमें सामानों पर दोहरे कर की समस्या लगी रहती है। कई स्थानों पर कर देने से कर का बोझ काफी बढ़ जाता है। कर चोरी की शिकायतें भी रहती हैं। वैट प्रणाली में पूरी पारदर्शिता की संभावनाएं हैं। वैट के तहत बिक्री के विभिन्न स्तरों पर वैल्यू एडिशन पर लिए गए मल्टी प्वाइंट टैक्स में शुरू के टैक्स को सेट आफ करने की व्यवस्था है। वैट से व्यापारियों को अधिक सुविधा होगी। कर निर्धारण और फार्म लेने के लिए विभाग में नहीं जाना पड़ेगा। वैट का ब्योरा देते समय पहले दिए गए इनपुट टैक्स को कुल देयता में एडजस्ट कर दिया जाएगा। इससे टैक्स का बोझ घटेगा।

आज की बिक्री कर प्रणाली में कई राज्यों में टर्नओवर टैक्स, बिक्री कर पर सरचार्ज, अतिरिक्त सरचार्ज आदि अनेक करों की व्यवस्था है। पर वैट के लागू होने से इस प्रकार के कई कर समाप्त कर दिए जाएंगे। इसके अलावा केन्द्रीय बिक्री कर व्यवस्था भी समाप्त हो सकती है। इससे कर के कुल बोझ को न्यायोचित बनाया जा सकता है। मोटे तौर पर कीमतें नीचे आएंगी। वैट में जांच की प्रक्रिया भी लगभग समाप्त हो जाएगी, क्योंकि इसमें डीलर खुद अपना मूल्यांकन कर सकेंगे। कर संरचना सरल और पारदर्शी हो जाएगी। इससे अधिक संख्या में लोग कर देने आगे आएंगे जिससे राजस्व में भी इजाफा होगा। राज्यों में लगने वाले अन्य कई प्रकार के कर सरचार्ज भी समाप्त हो जाएंगे। डीलरों द्वारा स्वमूल्यांकन किए जाने से पारदर्शिता बढ़ेगी। परिणामस्वरूप राजस्व में बढ़ोत्तरी होगी। कुल मिला कर वैट से आम लोगों, व्यापारियों, उद्योगपतियों और सरकारों को मदद मिलेगी।

ऐसा नहीं है कि वैट की शुरुआत सबसे पहले भारत में ही की जा रही है। सबसे पहले ब्राजील ने 1960 में वैट की शुरुआत की थी। अगले दशक में यूरोपीय देशों ने इसे लागू किया। इस प्रकार एक लंबी यात्रा तय कर वैट 130 देशों में फैल गया। चीन और श्रीलंका ने भी को वैट लागू किया है। वैसे भारत में भी एक रूप में यह लागू है। भारत सरकार ने इसे केन्द्रीय उत्पाद शुल्क के वास्ते गत दस सालों से लागू किया। राज्य स्तरों पर अब लागू होने जा रहा है।

राज्यस्तरीय वैट पर प्रारंभिक चर्चा के लिए 1995 में तत्कालीन वित्त मंत्री डा. मनमोहन सिंह ने बैठक बुलाई थी। इसमें वैट से संबंधित बुनियादी बातों पर विचार किया गया था। समय-समय पर राज्यों के वित्त मंत्रियों से इस बाबत चर्चा होती रही। 16 नवम्बर, 1999 को तत्कालीन वित्तमंत्री यशवंत सिन्हा ने मुख्यमंत्रियों की एक महत्वपूर्ण बैठक बुलाई थी, जिसमें यह तय किया गया कि राज्य स्तरीय बिक्री करों की दरों को लेकर चल रही खींचातानी को समाप्त कर टैक्स की एक समुचित व्यवस्था लागू की जाए। यह भी तय किया गया कि बिक्री कर से संबंधित औद्योगिक स्कीमें बंद होनी चाहिए। इसके बाद राज्यों को वैट संबंधी तैयारियां शुरू कर देनी चाहिए। इसके मद्देनजर राज्यों के वित्त मंत्रियों की एक उच्चाधिकार समिति गठित की गई।

वाणिज्यिक कर से संबंधित विभागों के सभी अधिकारियों की यदाकादा बैठकें होती रहीं। डेढ़ साल के अथक प्रयासों के बाद बिक्री कर की संरचना को न्यायोचित बनाकर एक समान करने पर आम सहमति बनाने में समिति को सफलता मिली। इस दौरान कहीं गड़बड़ी होने पर समिति ने संबंधित राज्य से बातचीत कर समस्या के समाधान की कोशिश की। इससे राज्यस्तरीय वैट प्रणाली को लागू करने की क्रमिक तैयारियों के लिए रास्ता साफ हो गया। साथ ही राज्य स्तरों पर वैट का प्रशिक्षण, कंप्यूटराइएजेशन, व्यापार और उद्योग जगत से विचार करने के लिए समुचित कदम उठाए गए।

शुरुआती तैयारियों के बाद 18 अक्तूबर, 2002 को सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों की बैठक में विचार किया गया कि इसे पहली अप्रैल, 2003 से लागू किया जाना चाहिए। कई राज्यों ने संबंधित बिल तैयार भी किए। पर कुछ कारणों से वैट की गाड़ी आगे नहीं बढ़ पाई। इसके बावजूद उनकी दिलचस्पी बरकरार रही। मध्य प्रदेश के बिल को राष्ट्रपति की मंजूरी मिल गई। हरियाणा भी वैट लागू कर चुका है। 18 जून, 2004 को वित्तमंत्री पी. चिदंबरम की मौजूदगी में एक को छोड़ प्रायः सभी राज्यों ने वैट को एक अप्रैल, 2005 से लागू करने पर सहमति जताई। वैट प्रणाली के तहत सभी पंजीकृत डीलरों को खरीददारों को विस्तृत जानकारी के साथ टैक्स की रसीद देनी होगी। पांच लाख से ऊपर वाले सालाना टर्नओवर वाले सभी डीलरों को पंजीकरण कराना होगा। वर्तमान के सभी डीलर स्वाभाविक तौर पर पंजीकृत हो जाएंगे। नए डीलरों को एक नियत अवधि के भीतर पंजीकरण कराना अनिवार्य होगा। लेकिन परिभाषित छोटे डीलरों के लिए वैट देना जरूरी नहीं होगा। करदाताओं को टैक्सपेयर्स आईडेंटीफिकेशन नम्बर (टिन) लेना होगा। यह 11 अंकों का होगा। शुरु के दो अंक में राज्य का कोड होगा। राज्यों के नियमों के तहत मासिक या त्रैमासिक रिटर्न फाइल करनी होगी। कुछ सामान वैट से बाहर रहेंगे – शराब, लाटरी टिकट, पेट्रोल, डीजल, विमान के लिए ईंधन आदि क्योंकि इनकी कीमतें बुनियादी तौर पर बाजार से संचालित नहीं होती। उन पर बिक्री कर यथावत लागू रहेगा। ❑

**(लेखक दैनिक हिन्दुस्तान, नई दिल्ली में विशेष संवाददाता हैं)**

**(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)**

## आर्थिक संघवाद का नया युग

भारतीय संविधान के अंतर्गत वित्त आयोग, वित्तीय संघवाद का मूर्तरूप है। सरकारों के बीच परस्पर वित्तीय हस्तांतरण की एक मजबूत और सक्रिय व्यवस्था के लचीलेपन और स्थायित्व का परिचायक होती है।

वर्ष 1951 से अभी तक 12 वित्त आयोगों ने कठिन परिश्रम से देश में केंद्र राज्य के बीच राजस्व के हस्तांतरण की युक्तिसंगत प्रणाली को कारगर बनाया है। वित्त आयोग के उपाध्यक्ष की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा पांच वर्षों के लिए की जाती है। वित्त आयोग हित धारकों के साथ व्यापक विचार–विमर्श के बाद केंद्र तथा राज्यों की वित्तीय स्थिति के मूल्यांकन के आधार पर अपनी सिफारिशें देता है। जाने–माने अर्थशास्त्री डा. सी. रंगाराजन के नेतृत्व में 12वें वित्त आयोग ने दिसंबर, 2004 में राष्ट्रपति से अपनी सिफारिशें पेश की थी। इन सिफारिशों में शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर ज्यादा ध्यान देने के लिए कुल राजस्व में अनुदान की भूमिका पर जोर दिया गया है। इस वर्ष पहली अप्रैल से आरंभ होने वाली योजना अवधि 2005–10 के लिए की गई कुछ प्रमुख सिफारिशों में सड़क, पुल, सार्वजनिक भवनों जैसी लोक संपत्तियों और वन सम्पदा तथा विरासत के संरक्षण के लिए राज्यों को दिए जाने वाले विशेष अनुदान शामिल हैं।

आयोग ने राज्यों और स्थानीय निकायों की राजस्व क्षमता संबंधी विसंगतियों को दूर करने के लिए साहसिक प्रयास किया है। 12वें वित्त आयोग (टीएफसी) ने राज्यों की योजनाओं के लिए मौजूदा केंद्रीय सहायता की योजना को त्याग दिया है। इसके तहत राज्यों को अनुदान व ऋण दोनों उपलब्ध कराए जाते हैं। किंतु अब केन्द्र की ओर से सिर्फ अनुदान ही दिया जाएगा और ऋण संबंधी फैसला लेने का कार्य राज्य पर छोड़ दिया गया है। टीएफसी की सिफारिशों के अंतर्गत पंचायती राज संस्थानों और शहरी स्थानीय संकायों को मजबूत बनाने पर जोर दिया गया है। सरकार ने आयोग की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए इन संस्थानों के लिए 25000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया है। पंचायती राज संस्थान इस राशि का इस्तेमाल जलापूर्ति और स्वच्छता संबंधी कार्यों में करेंगे। नगरपालिकाएं ठोस कचरे के प्रबंध पर ध्यान देंगी। राज्य सरकारों के लिए यह जरूरी है कि पंद्रह दिन के अंदर ही वे स्थानीय निकायों को यह राशि उपलब्ध करा दें।

टीएफसी ने सड़कों और पुलों के रख–रखाव के लिए 15,000 करोड़ रुपये और सार्वजनिक इमारतों के रख–रखाव के लिए 5000 करोड़ रुपये के अलग से अनुदान की सिफारिश की है, जबकि ग्यारहवें वित्त आयोग ने इस कार्य के लिए अलग से अनुदान की सिफारिश नहीं की थी।

इसके अतिरिक्त राज्यों को वनों के संरक्षण के लिए 1000 करोड़ रुपये तथा ऐतिहासिक स्मारकों, पुरातत्व से जुड़े स्थानों, सार्वजनिक पुस्तकालयों, संग्रहालयों और अभिलेखागारों के संरक्षण के लिए 625 करोड़ रुपये दिए जाएंगे।

12वें वित्त आयोग ने राज्यों को कर्ज से राहत दिलाने के लिए दो भागों वाली एक नई योजना बनाई है। पहले भाग में पिछले कर्जों को समेकित कर घटते ब्याज दर पर इनके भुगतान की नई समय सारणी की व्यवस्था है और दूसरे भाग में कर्जा माफ करने की व्यवस्था रखी गई है, जो राजस्व घाटे में कमी होने पर निर्भर करेगा। ये दोनों सुविधाएं तभी उपलब्ध होंगी जब राज्य अपने वित्तीय घाटे को 2008–09 तक पूरी तरह से समाप्त कर देंगे।

सफलता की कहानी

# ग्रामीण उद्यमियों की सफलता की गाथा

देवेन्द्र उपाध्याय

उत्तरांचल देश का 27वां राज्य है, जो 9 नवंबर, 2000 को अस्तित्व में आया। राज्य के 13 में से 10 जिले पूरी तरह से पहाड़ी हैं, जबकि उधमसिंह नगर और देहरादून जिलों के कुछ हिस्से अर्द्ध–पहाड़ी हैं। नैनीताल जिले का कोटाबाग विकास खंड एक ऐसा क्षेत्र है जो अपनी विविधता और विशिष्टता एवं संभावनाओं से भरपूर होने के बावजूद पिछड़ा हुआ था।

कृषि विविधीकरण परियोजना ने मई, 2001 में उत्तरांचल के पांच जिलों को आधार बनाते हुए समाज के सबलीकरण का अभियान शुरू किया। परियोजना ने सभी मानकों के आधार पर कोटाबाग विकास खंड के 40 गांवों को लक्ष्य बनाया और ग्रामीण एवं कृषक विकास समिति को कार्यदायी संस्था बनाकर विभिन्न स्तरों पर विकास कार्यक्रमों की शुरुआत की। कृषि, बागवानी, पशुपालन, स्व–सहायता समूहों का निर्माण और जैविक खेती को आधार बनाकर जागरूकता पैदा करने के साथ–साथ सबसे पहले स्व–सहायता समूहों का गठन किया गया। उत्तरांचल की कृषि विविधीकरण परियोजना के अंतर्गत पिछले तीन वर्षों में कोटाबाग विकास खंड के 40 गांवों की एक नई तस्वीर सामने आयी है।

कोटाबाग में किये गये इस प्रयोग की कृषि विविधीकरण परियोजना, के अंतर्गत खेती विकास के हर पहलू को छुआ गया और हर दिशा में कुछ उत्कृष्ट कार्य करने के प्रयास किये गये।

ग्रामीण एवं कृषि विकास समिति ने ग्रामीणों के समग्र विकास के जो कार्यक्रम प्रारंभ किये थे, तीन वर्षों के भीतर उनके बेहतर परिणाम दिखायी देने लगे हैं। बागवानी क्षेत्र में कोटाबाग विकास खंड में सर्वाधिक प्रगति देखने को मिली है। हल्द्वानी और रामनगर मंडियों में कोटाबाग की सब्जियों की विश्वसनीयता और बिक्री दोनों में गुणात्मक अंतर आया है। सब्जी उत्पादकों को मुख्य रूप से केंद्र बनाकर काश्तकार विकास समिति (फेडरेशन) गठित की गयी। स्वयं–सहायता समूहों के गठन और संगठन का स्वाभाविक विकास इस फेडरेशन की माध्यम से सामने आया है। फेडरेशन का लक्ष्य है निजी और सामूहिक विकास को संतुलन प्रदान करना।

दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में भी पिछले तीन वर्षों में सामूहिक एवं निजी स्तर पर सर्वाधिक उल्लेखनीय प्रगति देखने को मिली है।

घास–चोर की समस्याओं के बावजूद दुग्ध क्रांति ने ग्रामीणों के द्वार पर दस्तक दी है। जिसकी वजह से प्रतिदिन दो हजार से लेकर पांच हजार लीटर दूध की बिक्री होने लगी है।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जैविक खेती के मूलभूत सार को लेते हुए उत्तरांचल में परियोजना के अंतर्गत एक आदर्श मानक प्रदान कर महत्व दिया गया है। उत्तरांचल के परम्परागत कृषि प्रबंधन में जैविकता तो मौजूद रही है लेकिन सब कुछ की तरह पिछड़ी और अलाभकारी भी। परियोजना के माध्यम से उठाये गये कदमों से आश्चर्यजनक प्रगति सामने आयी है। वास्तव में कोटाबाग विकास खंड परियोजना के लिए रोल माडल बन गया है।

ग्रामीण एवं कृषि विकास समिति के कोटाबाग के 40 गांवों को लक्ष्य बनाकर स्व–सहायता समूहों का गठन शुरू किया गया था। सन् 2001 से लेकर अब तक 121 स्व–सहायता समूह गठित किये जा चुके हैं। सबसे पहले समूहों के अंदर आंतरिक ऋण–व्यवस्था कायम हुई, जिससे समूहों में स्वयं की सहायता की ललक पैदा हुई और इसी ललक ने समूहों को संगठित करने की भावना को भी मजबूत किया। परियोजना ने इस आधारभूत सचलता को बैंकों से जोड़ने का काम किया। ऐसे समूहों को जिन्होंने अग्रगति (सीसीएल) का स्तर प्राप्त कर लिया हो, बैंक द्वारा किसी भी निर्धारित उत्पादक कार्यक्रम के लिए ऋण व्यवस्था सुलभ कराने में परियोजना और समिति ने आवश्यक दिशा–निर्देशन का कार्य किया। जिससे आज 58 स्व–सहायता समूह सीसीएल का स्तर प्राप्त करने के बाद अपने आर्थिक विकास के लिए बैंक के अध्ययन से विभिन्न कृषि कार्यक्रमों में बढ़–चढ़ कर भागीदारी कर रहे हैं और इन समूहों ने सामूहिक शक्ति के रूप में ग्रामीण शक्ति की अवधारणा को मजबूत किया है।

ग्राम मायारामपुर के कृष्ण चंद्र विनवाल ने परियोजना से प्रेरणा लेकर अपने परिश्रम से सफलतापूर्वक दुग्ध व्यवसाय करके अन्य ग्रामीणों के सामने भी एक आदर्श प्रस्तुत किया है। आज वे सफलतापूर्वक डेयरी व्यवसाय में जुटे हुए हैं और प्रतिदिन 40 लीटर दूध का उत्पादन कर रहे हैं। वे घर में बनाकर सर्वश्रेष्ठ पशु आहार बनाकर अपनी आय में और वृद्धि भी कर रहे हैं।

पतालिया (कोटाबाग) के किसान मोहन चंद्र ने वर्मी कम्पोस्ट का सफल प्रयोग किया। पहले उन्होंने अपने कृषि उत्पादनों में इसका उपयोग कर उसके शानदार परिणाम अर्जित किये और अब वे दूसरे किसानों को भी वर्म–वर्मी कम्पोस्ट बेच रहे हैं। इससे उन्हें आय के वैकल्पिक स्रोत उपलब्ध हुए हैं।

ग्रामीण एवं कृषि विकास समिति ने कोटाबाग विकास खंड के 40 गांवों के अलावा हल्द्वानी और रामनगर के 139 गांवों का चयन कर 255 स्व–सहायता समूहों का गठन किया। इन चार वर्षों में इन दोनों विकास खंडों में दो काश्तकार फेडरेशन गठित कर 52 स्व–सहायता समूहों को इनसे जोड़ा है। इसके अलावा 6 बीज गांव और 6 जैव गांव भी स्थापित किये गये हैं। भीमताल विकास खंड में 17 स्व–सहायता समूह गठित किये गये।

स्व–सहायता समूहों के गठन का ही परिणाम है कि नैनीताल जिले के चार विकास खंडों में ग्रामीण विकास का एक नया चेहरा देखने को मिलता है। इन स्व–सहायता समूहों के माध्यम से किसानों को भाग्य पर निर्भर रहकर हाथ पर हाथ धरे रहने की पुरानी आदत से छुटकारा मिला है और कर्म उनका हथियार बन गया है, जिससे उन्हें गांव में ही रोजगार के वैकल्पिक साधन उपलब्ध होने लगे हैं। ❑

**(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)**

# ग्राम उत्थान समितियां और कोष प्रबंधन

आर. बी. त्रिपाठी

मध्य प्रदेश में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में समुदाय की मांग आधारित डी.पी.आई.पी. परियोजना के जरिये गांव के विकास के लिए बनाये गये अपना कोष के प्रबंधन और उपयोग का काम ग्राम उत्थान समितियों को सौंपा जा रहा है। डी.पी.आई.पी. परियोजना के तहत नवाचारी प्रयासों के तहत समहित समूहों द्वारा जमा कराई गई अपना कोष की लगभग 10 करोड़ रुपयों की राशि उपलब्ध है। अपना कोष के बेहतर प्रबंधन और समुचित देखरेख के लिए ग्राम स्तर पर ग्राम उत्थान समितियां गठित की जा रही हैं। ये समितियां ग्राम सभा के प्रति जवाबदेह होंगी। गांवों में गठित समूहों के सदस्य ग्राम उत्थान समितियों की साधारण सभा के सदस्य रहेंगे तथा कार्यकारिणी समिति में सभी सदस्य महिलायें रहेंगी।

डी.पी.आई.पी. परियोजना के अंतर्गत गठित किये जा रहे समहित समूहों को अपना कोष के रूप में उप योजना लागत की दस प्रतिशत राशि जमा करना होता है। इस तरह अभी तक 18 हजार से अधिक समहित समूहों द्वारा जमा करायी गयी अपना कोष की राशि लगभग दस करोड़ रुपये हो गई है। दरअसल यह राशि संबंधित गांवों और गांव के समहित समूहों के विकास के लिए उपलब्ध है। छोटे से छोटे गांवों में भी इस कोष में 2 से 5 लाख रुपये तक है। अपना कोष की 50 फीसदी राशि रिवाल्विंग कोष के रूप में तथा शेष 50 फीसदी सावधि जमा के रूप में रहेगी। अपना कोष से समहित समूहों में शामिल जरूरतमंद लोगों को एक प्रतिशत की नाम मात्रकी दर पर ऋण उपलब्ध कराया जायेगा। अपना कोष की राशि के बेहतर सदुपयोग और प्रबंधन के लिए जरूरी नियम बनाये गये हैं। इस तरह अपना कोष समुदाय द्वारा, समुदाय के लिए, समुदाय का अपना जमा किया गया कोष है, जो एक अभिनव रणनीति के तहत गांव के विकास के लिए उपलब्ध है। अपना कोष की राशि समुदाय की दैनिक जरूरतों जिनमें उत्पादकता एवं उपभोग संबंधी जरूरतें शामिल हैं, हेतु उपलब्ध रहेगी। इस राशि का उपयोग ग्रामवासी ग्राम के विकास हेतु ही उपयोग कर सकेंगे। शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि से संबंधित गतिविधियों हेतु भी यह राशि ग्राम स्तर पर ही उपलब्ध रहेगी।

राज्य सरकार द्वारा मध्य प्रदेश के पिछड़े हुए 14 जिलों के तकरीबन 3 हजार गांवों के लिए संचालित डी.पी.आई.पी. परियोजना, शुरुआत से ही अपने क्रियान्वयन की विशिष्ट शैली, लचीलेपन और पारदर्शिता की वजह से जानी जाती है। परियोजना में गांव के सबसे गरीब लोगों को आर्थिक सहायता मुहैया करायी जाती है। गरीबी का आधार आर्थिक श्रेणीकरण को बनाया गया है। इस सहभागी प्रक्रिया में गांव के लोग आपस में एक जगह जुटकर, नियम तय कर फैसला लेते हैं कि गांव के कौन व्यक्ति सबसे ज्यादा गरीब, कौन गरीब और मध्यम वर्ग तथा अमीर वर्ग के हैं। इसमें खुलकर चर्चा होती है कि आखिर किस आधार पर गांव के सबसे ज्यादा गरीब और अमीर आदमी का श्रेणीकरण बगैर किसी विवाद के आपसी सहमति से किया जाये। इस तरह बनायी गयी गरीबों की सूची का अनुमोदन ग्राम सभी द्वारा किया जाता है और गांव के गरीबों द्वारा अपने सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए बनाये गये समहित समूहों को राशि सीधे उनके बैंक खाते में जमा करायी जाती है। अपनी जरूरत के मुताबिक राशि निकालने, खर्च करने का अधिकार समहित समूहों की सहमति से तय किये गये बैंक हस्ताक्षरकर्ता के पास रहता है।

समहित समूह अपने लिये गतिविधि और कामकाज खुद चुनते हैं और परियोजना का मैदानी अमला इस काम में उन्हें आवश्यक सहयोग प्रदान करता है। इस तरह समूह के लोग अपने आर्थिक विकास का मार्ग खुद चुनते हैं तथा उन पर कोई गतिविधि थोपी नहीं जाती है। अपने द्वारा तय किये गये काम के लिए जरूरी मशीन–उपकरण, सामान की खरीदी का काम भी समूह के लोग खुद करते हैं। इसमें किसी तरह का कोई बंधन या बाध्यता नहीं है।

डी.पी.आई.पी. परियोजना की एक और खासियत है– हर स्तर पर पारदर्शिता और कामकाज में खुलापन। गांवों में गठित समहित समूहों को परियोजना से कितनी राशि मिली, समूह का अपना योगदान और अपना कोष में जमा करायी गयी राशि आदि का ब्योरा गांव में सार्वजनिक स्थानों पर तथा बोर्ड पर प्रदर्शित करने की व्यवस्था की गई है। इससे गांव के लोग समूहों की गतिविधियों और कामकाज के बारे में भलीभांति अवगत रहते हैं।

परियोजना के जरिये हाथ में ली गई गतिविधियों और कामकाज में मुख्य रूप से कृषि, भूमि और सिंचाई संबंधी गतिविधियां शामिल हैं। टीकमगढ़, रायसेन, राजगढ़ और शाजापुर जिलों में लोगों ने अपने खेतों पर कुआं निर्माण गतिविधि को प्राथमिकता से अपनाया है। इससे उन्हें अपने सूखे खेतों को सींचने में मदद मिली और खेती की पैदावार में भी इजाफा हुआ। शाजापुर और राजगढ़ जिलों में अधो–संरचना के तहत बनायी गयी जल संग्रहण संरचनाएं उपयोगी साबित हुई हैं। गुना, नरसिंहपुर जिलों में ज्यादातर समूहों ने ट्यूबवेल खनन का काम किया है। इससे भी खेतों की सिंचाई हुई है। पानी के मितव्ययी उपयोग को बढ़ावा देने के लिए समूहों द्वारा स्प्रिंकलर (फव्वारा) सिंचाई पद्धति को अपनाया गया है। पन्ना, छतरपुर जिलों में समूहों ने डेयरी पालन को आजीविका के रूप में अपनाया है। महिलाओं की भागीदारी और सशक्तिकरण

की दिशा में टीकमगढ़ जिला अग्रणी है। टीकमगढ़ जिले में गठित समहित समूहों में 44 प्रतिशत, महिलाओं के समूह हैं। अकेले टीकमगढ़ सहयोग दल द्वारा गठित समूहों ने महिलाओं के 72 फीसदी समूह हैं। अकेले टीकमगढ़ सहयोग दल द्वारा गठित समूहों ने महिलाओं के 72 फीसदी समूह हैं। रायसेन जिले में समूहों को अन्न सुरक्षा अभियान और नाडेप निर्माण से जोड़ा जा रहा है। रीवा जिले के चयनित गांवों में वैज्ञानिक विधि से जैविक खेती और बागवानी का कार्यक्रम हाथ में लिया गया है।

परियोजना में कृषि उप योजनाओं से जुड़े समहित समूहों की प्रति एकड़ आय में सुनिश्चित वृद्धि को आधार बनाते हुए इस साल रबी कृषि कार्यक्रम तैयार किया गया है। किसान, निश्चित बाजार की उपलब्धता के अनुसार उत्पादन करें ताकि उनके उत्पाद का उचित दर पर आसानी से विपणन हो सके। इस हेतु विभिन्न कृषि उत्पादों से जुड़ी एजेंसियों से बाय बैक समझौतों हेतु जिला स्तर पर चर्चा की गयी। इन चर्चाओं में समहित समूह के सदस्यों ने भी हिस्सा लिया तथा इस तरह लगभग प्रत्येक जिले में संगठित उत्पादन, बीज उत्पादन, जैविक उत्पादन आदि के सुनिश्चित बाजार के समझौते किये गये हैं। इसके अतिरिक्त राजगढ़, गुना और विदिशा जिलों में पूर्व में सहभागी फसल चयन कार्यक्रम में चयनित किस्मों के विपुल उत्पादन संबंधी कार्यक्रम हाथ में लिये गये हैं। अन्य जिलों में सहभागी किस्म चयन कार्यक्रम क्षेत्र की प्रमुख दो फसलों के लिये लिया गया है, जिनमें इन फसलों की तीन से चार किस्मों के परीक्षण लिये जा रहे हैं।

उल्लेखनीय है कि मध्यप्रदेश के पिछड़े हुए 14 जिलों के चुने हुए गांवों के अत्यंत गरीब परिवारों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में बदलाव लाने के उद्देश्य से डी.पी.आई.पी. परियोजना (District Poverty Initiatives Project) लागू की गयी है। विश्व बैंक के वित्त पोषण से संचालित इस परियोजना की लागत 600 करोड़ रुपये है। इस राशि में से 559 करोड़ रुपये विश्व बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण एवं राज्य सरकार के अंशदान के रूप में और शेष 41 करोड़ रुपये समुदाय अपने अंशदान के रूप में गांव स्तर पर निर्मित कोष में भविष्य में अपने स्वयं के उपयोग हेतु जमा करेगा। परियोजना का कार्यक्रम प्रदेश के उत्तरी और उत्तर पश्चिम भाग के 14 जिलों के 53 विकास खण्डों के 2932 गांव हैं। उल्लेखनीय है कि प्रदेश के बुंदेलखण्ड अंचल के सभी 5 जिले परियोजना में सम्मिलित हैं। गांवों के चयन का आधार मानव विकास प्रतिवेदन है, जिसमें यह तथ्य रेखांकित हुआ था कि बुंदेलखण्ड अंचल में गरीबी की स्थिति सबसे अधिक है।

परियोजना की शुरुआत से अभी तक की अवधि में दूरदराज के गांवों में गठित करीब 18 हजार 274 समहित समूहों द्वारा प्रारंभ आयवर्द्धक गतिविधियां एक उत्साहजनक संकेत देती है। परियोजना से अभी तक लगभग 1 लाख 37 हजार 674 गरीब परिवार जुड़ चुके हैं। परियोजना से माह अक्टूबर 04 तक 122.52 करोड़ रुपये की राशि का निवेश किया जा चुका है। परियोजना के तहत नवाचारी प्रयासों के जरिये समुदाय के योगदान के रूप में अपना कोष में रुपये 10 करोड़ रुपये की राशि जमा करायी जा चुकी है। यही अपना कोष, आने वाले समय में समग्र ग्राम विकास का प्रमुख आधार स्तम्भ बनेगा। इन समूहों ने अपने खुद के योगदान के रूप में 8 करोड़ से अधिक की राशि जमा कराई है, जो उनकी सहभागिता और जुड़ाव को रेखांकित करती है।

परियोजना कार्यान्वयन की आगामी रणनीति में समहित समूहों के लिए स्थानीय विपणन व्यवस्था, सुनिश्चित बाजार व्यवस्था एवं स्थानीय संसाधनों का आकलन कर हितग्राहियों की रुचि और रुझान के अनुसार इस दिशा में प्रभावी रूप से काम किया जायेगा। समूहों की निरंतरता तथा स्थायी और समग्र विकास की दृष्टि से समूहों को बैंकों से जोड़ा जायेगा। समूहों को माइक्रो–क्रेडिट की सहूलियत से जोड़कर सभी गांवों में ग्राम उत्थान समितियां गठित की जा रही हैं। ❑

**(लेखक डीपीआईपी, भोपाल में संचार सम्प्रेषण समन्वयक हैं।)**

## एनबीसीएफडीसी द्वारा पिछड़े वर्ग के 6 लाख लोगों को वित्तीय सहायता

राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त तथा विकास निगम (एनबीसीएफडीसी) ने पिछड़े वर्ग के 6 लाख से अधिक लाभार्थियों में रियायती ब्याज दर पर कुल 992 करोड़ रुपये की राशि वित्तीय सहायता के रूप में वितरित की है। सामाजिक न्याय तथा अधिकारिता मंत्री मीरा कुमार ने संसदीय सलाहकार समिति की बैठक को यह जानकारी दी। उन्होंने कहा कि वित्तीय वर्ष के दौरान 61.500 से अधिक ऋण प्राप्तकर्ताओं में 93.42 करोड़ रुपए की राशि वितरित की गई। मंत्री महोदया ने बताया राज्य माध्यम एजेंसियों से निगम की वसूली 87 प्रतिशत रही। सूक्ष्म वित्त स्कीम की चर्चा करते हुए मीरा कुमार ने कहा कि निगम ने लक्षित समूह 1.4 लाख से अधिक लाभार्थियों में वित्तीय सहायता के रूप में 65 करोड़ रुपए से अधिक की राशि वितरित की। महिला समृद्धि योजना के तहत पिछड़े वर्ग की गरीब से गरीब महिलाओं को 4 प्रतिशत वार्षिक की रियायती ब्याज दर पर वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने पर विशेष जोर दिया गया है। निगम ने अभी तक एक लाख से अधिक ऐसी महिलाओं में 47 करोड़ रुपये की राशि सहायता के रूप में वितरित की है। उन्होंने कहा कि अधिकांश राज्यों के स्व–सहायता समूहों ने इसकी सराहना की है। निगम ने पिछड़े वर्ग के उच्च व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने वाले युवा छात्रों के लिए सहायता की एक विशेष स्कीम शुरू की है। इस स्कीम के तहत निगम ने अभी तक 5607 छात्रों को ऋण के रूप में 21.76 करोड़ रुपये से अधिक की राशि प्रदान की है। छात्रों को यह ऋण 4 प्रतिशत वार्षिक की रियायती ब्याज दर पर उपलब्ध है। ❑

**(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)**

# रोज़गार का संवैधानिक अधिकार

आशुतोष दीक्षित

स्वतंत्रता प्राप्ति की आधी सदी बीत चुकी है। इस आधी सदी में भारत ने आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में अनेक ऐसी उपलब्धियां, पाई हैं, जिन पर गर्व किया जा सकता है। प्रगति और विकास की इस आधी सदी की यात्रा के बाद भी देश में गरीबी, बेरोजगारी, नाना प्रकार के अभाव और पिछड़ेपन की समस्याओं का अपने हित में दोहन कर तमाम राजनैतिक दल, जनता के बीच यह भ्रम फैलाने में सफल हो रहे हैं कि हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था और देश की गतिविधियों को संचालित करने वाला हमारा संविधान, जन–आकांक्षाओं की पूर्ति करने में विफल रहा है। आजादी के बाद देश में जिस तेजी से शिक्षा प्रसार हुआ, मीडिया का फैलाव हुआ और अब सूचना क्रांति ने जनता को सचेतन और जागृत बनाने में जो महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी शुरू की है, उससे देश के पढ़े–लिखे वर्ग में भविष्य को लेकर गहरी चिंता ही बढ़ी है। आर्थिक और तकनीकी क्षेत्र में असावधानी से हमने जिन अव्यावहारिक नीतियों और तौर–तरीको को अपनाया है, उनसे देश में विकास भले ही हुआ हो, पूंजी संचय और पूंजी संचलन भले ही बढ़ा हो, लेकिन दूसरी ओर देश में विकास के लाभ के बंटवारे में भारी असंतुलन पैदा हो गया है। इसी कारण देश में गरीबी और बेरोजगारी बढ़ी है।

आज के समय में बेरोजगारी देश की सबसे बड़ी समस्या है, जिसे लेकर सभी चिंतित है। इसी बेरोजगारी की समस्या ने कई कानूनी और नैतिक समस्याओं को जन्म दिया है। रोजी–रोटी के लिए उच्च शिक्षित बेरोजगार जिस तरीके से आपराधिक गतिविधियों में रुचि ले रहे हैं, उससे हमारा सामाजिक ढांचा नष्ट–भ्रष्ट हो रहा है। राष्ट्रीय व्यवस्था के कर्णधार भी बेरोजगारी की समस्या से चिंतित तो हैं, लेकिन उन्हें इससे निजात पाने का कोई रास्ता नहीं सूझ रहा है।

दरअसल, भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास पर हम नजर डालें, तो पाते है कि ब्रिटिश साम्राज्य के दौर में ही भारत में शहरी और ग्रामीण बेरोजगारी बढ़ने की समस्या को लेकर तत्कालीन शासन और व्यवस्था के खिलाफ जनाक्रोश पैदा होने लगा था। 19वीं सदी में भारत में अनेक स्व–स्फूर्त आंदोलन किसानों, संगठित–असंगठित मजदूरों, कारीगरों, दस्तकारों द्वारा किये गये, जिनका कारण रोजगार अवसरों में विदेशी सत्ता द्वारा कमी लाने का मशीनीकरण के द्वारा रोजगार अवसर समाप्त करने की नीतियां लागू करना ही था। महात्मा गांधी ने अपने जन–जागरण अभियान में, बेरोजगारी को ही मुद्दा बनाया था, और उन्होंने वैकल्पिक आर्थिक चिंतन प्रस्तुत करते हुए भारतवासियों को भरोसा दिलाया था कि स्वतंत्रता मिलने पर भारत में लोकतांत्रिक सरकार जनता की गरीबी–बेरोजगारी और काम करने की शक्ति के उपयोग पर पूरा ध्यान देगी।

आजादी के बाद हमारे राष्ट्र–निर्माताओं ने जो संविधान तैयार किया, उस संविधान में, काम करने का अधिकार, जीविकोपार्जन के लिए उपर्युक्त साधन–प्राप्ति का अधिकार तथा बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी, विकलांगता और किसी अन्य कमी के मामलों में सरकारी सहायता पाने के अधिकार की बात की गई है। ये सभी लक्ष्य अधूरे पड़े हैं। हम, काम के अधिकार की गारंटी या कोई वास्तविक बेरोजगारी बीमा अथवा सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने की स्थिति में नहीं हैं।

हमारी विस्फोटक जनसंख्या, हमारी आर्थिक प्रगति की जीवनी–शक्ति को चट कर जाती है। वस्तुतः हमने काफी प्रगति की है, किन्तु ज्यों ही हमें कोई उपलब्धि हाथ आती है, यह निष्प्रभावी हो जाती है, क्योंकि हमारी जनसंख्या में प्रतिवर्ष होने वाली वृद्धि, संपूर्ण आस्ट्रेलिया की जनसंख्या से अधिक होती है। वर्ष 2001 में भारत की कुल जनसंख्या एक अरब दो करोड़ सत्ताईस लाख थी। इसमें से लगभग 38 प्रतिशत जनसंख्या काम करने योग्य लोगों की थी। लेकिन सन 2002 के आंकड़ों के अनुसार देश में लगभग 8 करोड़ पूर्ण, अर्द्ध और अल्प बेरोजगारों की संख्या, हमारे देश में रोजगार अवसरों की अल्पता सिद्ध करती है। सरकारी रोजगार कार्यालयों में ही विभिन्न वर्गों के पंजीकृत बेरोजगारों की संख्या लगभग एक करोड़ पचहत्तर लाख थी। एक ओर तो देश में बेरोजगारी है, दूसरी ओर आर्थिक–सामाजिक और लोकल्याण के क्षेत्र में जरूरी सेवाओं की देश में भारी कमी है। विकास की दृष्टि से पिछड़ेपन और बेरोजगारी के कारण भारत की खुशहाली संभव नहीं है। हमारे संविधान में काम करने का अधिकार, जीवनोपार्जन का अधिकार तो दिया गया है, लेकिन इस अधिकार को सुनिश्चित रूप से लागू करने की दिशा में कोई दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ काम नहीं हुआ है। इसी से बेरोजगारों में हताशा–निराशा फैलती जा रही है। विचित्र कानूनी स्थिति है। हमारे अपराध दंड विधान और दंड न्याय प्रक्रिया संहिता में "असफल आत्महत्या" को दंडनीय अपराध माना गया है। अर्थात जीने के अधिकार का पालन कराने के लिए हमारा कानून और शासन किसी हताश–निराश, परेशान और जीवन जीने योग्य साधनों के अभाव को झेल रहे, व्यक्ति को मरने का अधिकार नहीं देता है। भूखा, भूख सहकर जिंदा रहे, कानून उसे मरने की इजाजत नहीं देता। बेरोजगार, रोजी–रोटी के लिए तड़पता रहे, कानून उसे मरने की इजाजत नहीं देता है। यदि किसी ने दुस्साहस कर मरने की कोशिश की और न मर पाया, तो कानून आत्महत्या के अपराध में उसे दंड देता है। लेकिन कानून, हमारे राष्ट्र के कर्णधारों को इस संवैधानिक प्रावधान को लागू करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता है कि देश में हर नागरिक को रोजगार का अवसर उपलब्ध कराया जाये। केवल जन्म देना ही, पर्याप्त नहीं, जीने का अवसर और अधिकार देना भी पालक का कर्तव्य होता है। यही बात हमारी लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था पर लागू होती है। कानून जीने का अधिकार देता है, लेकिन जीने का अवसर और जीने के लिए साधन, उपलब्ध कराने के नाम पर हमारे संविधान में चंद पंक्तियां लिखकर सत्ता के कर्णधार आज भी शांत बैठे हुए है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

*(कवर 2 का शेष भाग)*

के विकास/उपचार के लिए लागू कर रहा है। कार्यक्रमवार नए प्रस्तावों की स्वीकृति तथा 2004–05 में नए मौजूदा प्रस्तावों के लए आंबटित राशि इस प्रकार हैः–

| कार्यक्रम | स्वीकृत प्रस्तावों की संख्या | कवर किया गया क्षेत्र (लाख हेक्टेयर में) | आबंटित धनराशि (केंद्रीय भाग) करोड़ रुपए में |
|---|---|---|---|
| आईडब्ल्यूडीपी | 221 | 11.18 | 344.42 |
| डीपीएपी | 2550 | 12.75 | 299.99 |
| डीडीपी | 160 | 8.00 | 214.99 |
| कुल | 4371 | 31.93 | 859.40 |

## जल संभरण परियोजनाओं को लागू करने के लिए हरियाली के दिशा–निर्देश

एक नई पहल "हरियाली" शुरू की गई। इसका उद्देश्य पंचायती राज संस्थानों को वित्तीय तथा प्रशासनिक रूप से अधिकार संपन्न बनाना है ताकि देश (2003–04) में जल संभर विकास कार्यक्रमों को प्रभावी रूप से लागू किया जा सके। हरियाली (2003) के दिशा–निर्देशों में शामिल करने के लिए एक परिशिष्ट 24 नवंबर, 2004 को जारी किया गया। इसमें पेय जल के स्रोतों को मजबूत बनाने और जल संभर कार्यक्रमों को परस्पर मिलाने का प्रावधान है, ताकि प्रत्येक घर के 100 मीटर के दायरे में प्रति व्यक्त प्रतिदिन 40 लीटर पीने योग्य पानी उपलब्ध कराने के राष्ट्रीय मानक को प्राप्त किया जा सके। प्रावधानों के तहत हरेक ग्राम पंचायत में एक पेयजल समिति के गठन का प्रावधान है जो पेयजल सुरक्षा के कार्यों पर नजर रखेगी। इसमें जल सिंचाई योजना तथा तिमाही प्रगति रिपोर्ट में पेयजल स्तर के बारे में एक अलग से अध्याय जोड़कर निगरानी और समीक्षा का भी प्रावधान हैं।

## भूमि रिकार्ड का कम्प्यूटरीकरण

भूमि रिकार्ड के कम्प्यूटरीकरण की योजना 1988–89 में भारत सरकार की 100 प्रतिशत आर्थिक सहायता से शुरू की गई थी, जिसका उद्देश्य जमीन के मालिकों के मागने पर उन्हें अधिकारों के रिकार्ड (आरओआर) की कम्प्यूटरीकृत कॉपी सस्ते दाम पर उपलब्ध कराना था। इस समय वह योजना देश के 582 जिलों में लागू हैं। राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में 3147 तहसील/तालुका/ब्लॉक तथा तथा 315 उप–विभागों में हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर लगाने के लिए धन मुहैया कराया गया हैं। वर्ष 2004–05 के दौरान 46.52 करोड़ रुपए की राशि विभिन्न राज्यों में भी दी गई हैं।

इंदिरा आवास योजना (आईएवाई) के तहत मई 2001 से 31 मार्च, 2005 के बीच प्रगति का ब्यौराः–

| वर्ष | उपयोग किया गया धन (करोड़ रुपए में) केंद्र + राज्य का भाग | लक्ष्य (संख्या लाख में) | निर्मित/उन्नत आवासों की संख्या (लाख में) |
|---|---|---|---|
| 2004–2005* | 2255.26 | 14.12 | 9.64 |

** राज्यों द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार (31 मार्च, 2005 तक)*

## इंदिरा आवास के लिए नई पहलें

- ग्रामीण आवासों के लिए अभिनव धारा योजना, समग्र आवास योजना, एवं ग्रामीण भवन केन्द्र योजना का समापन और इन्हें पहली अप्रैल 2004 से मुख्य योजना, इंदिरा आवास योजना (आईएवाई) से जोड़ना।
- आईएवाई के तहत निर्माण सहायता पर खर्च को बढ़ाकर मैदानी इलाके में 20,000 हजार रुपए से 25,000 हजार रुपए प्रति इकाई कर दिया गया है तथा पहाड़ी/मुश्किल क्षेत्रों में 22000 रुपए से 27,500 रुपया प्रति इकाई कर दिया गया है।
- कच्चे आवासों को पक्के/अर्ध पक्के आवासों में बदलने के लिए खर्च की राशि, सभी क्षेत्रों के लिए 10,000 रुपए से बढ़ाकर 12,500 रुपए कर दी गई है।

## स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई)

**एसजीएसवाई** पर होने वाले खर्च को बढ़ाकर 2003–04 में 800 करोड़ रुपए से 2004–05 में 1000 करोड़ रुपए कर दिया गया है। 2004–05 में **एसजीएसवाई** (फरवरी 2005 तक) के तहत निम्नलिखित उपलब्धियां हासिल की गईः–

| | |
|---|---|
| गठित स्व–सहायता समूहों (एसएसजी) की संख्या | : 2.15 लाख |
| सहायता प्राप्त एसएचजी स्व–रोजगारियों की संख्या | : 5.94 लाख |
| स्व–रोजगारियों की संख्या, जिन्हें सहायता दी गई | : 8.48 लाख |
| कुल दिया गया ऋण | : 1231.92 करोड़ |

**एसजीएसवाई** के तहत मंजूर किए गए पहले विशेष प्रस्ताव में 1424.63 लाख के अनुमानित लागत से उत्तरांचल में जटरोपा (बायो–डीज़ल) की समन्वित खेती तथा प्रसंस्करण को शामिल किया गया है। **एसजीएसवाई** के तहत सरकारी तथा निजी भागीदार बढ़ाकर छोटे उद्योगों को बढ़ावा तथा निपुणता लाने के लिए एक खास प्रस्ताव को मंजूरी दी गई। हस्तशिल्प समूहों तथा प्राकृतिक रेशों के विकास के लिए विशेष प्रस्तावों को **एसजीएसवाई** के तहत मंजूरी दी गई, जिसे राष्ट्रीय फैशन तकनीकी संस्थान (निफ्ट) तथा विकास आयुक्त के द्वारा लागू किया जायेगा। **एसजीएसवाई** के तहत गरीबी रेखा से नीचे रह रहे कलाकारों के जीवन स्तर में सुधार के लिए 944.90 लाख रुपए का एक विशेष प्रस्तावित पारित किया गया। इस प्रस्ताव अभिनव तकनीकी विकास के वास्ते 471 लाख रुपए के एक विशेष प्रस्ताव को मंजूरी दी गई। इसे लागू करने वाली संस्था होगी दस्तकार आंध्र तथा आईआईटी चेन्नई। घर में कम लागत पर मुर्गी पालन विकास के लिए एक खास अभिनव प्रस्ताव को 1492 लाख रुपए की मंजूरी दी गई। इसे लागू करने वाली संस्था है, केरल राज्य मुर्गी पालन विकास निगम। अंतर–मंत्रालयी समूहों द्वारा गरीबी रेखा से नीचे रह रहे बेरोजगार ग्रामीण युवा में निपुणता विकास के लिए एक रिपोर्ट तैयार की गई है। बाजार पर पहल के रूप में स्वरोजगार समूहों के उत्पादों को दिखाने तथा बढ़ावा देने के लिए 12 सरस मेलों का दिल्ली तथा राज्यों की राजधानियों में आयोजन किया गया।

## ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधा उपलब्ध कराना (पीयूआरए)

**पीयूआरए** के तहत सात प्रस्तावों को शुरू किया गया, जो इस नीति का मैदानी सर्वेक्षण करेगी तथा 2004–05 में 10 करोड़ रुपए की मंजूरी दी गई है। ❑

**(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)**

आर. एन./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. 12057/2003–05
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.) –55/2003–5

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL 12057/2003-05
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2003-05
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

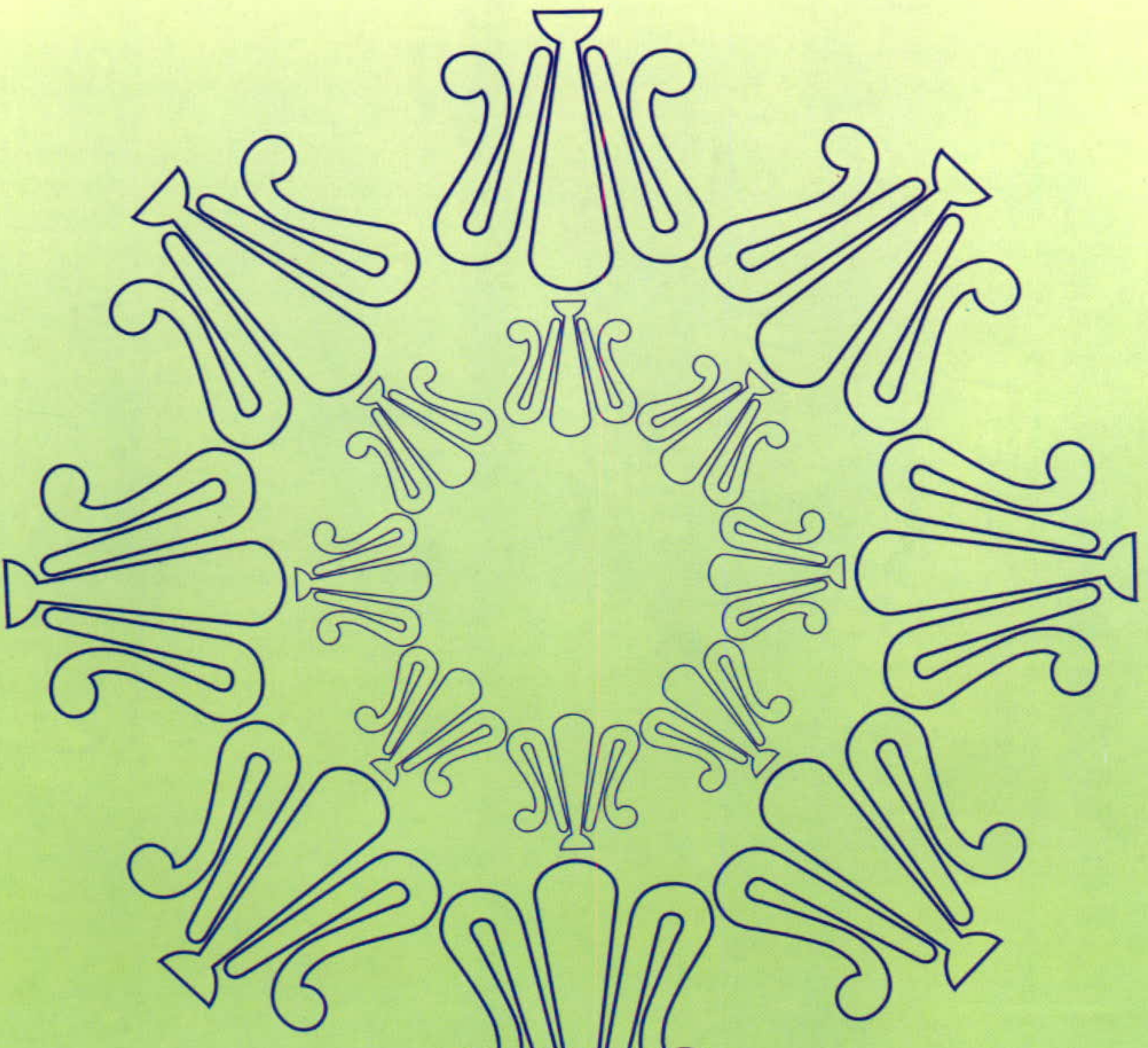

प्रो. उमाकांत मिश्र, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली–110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया–II, नई दिल्ली–20 : संपादक : स्नेह राय